देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्। ऋ० १/८९/२

9 772395 711007

Impact Factor
7.523

ISSN : 2395-7115
दिसबर 2024
Vol.-20, Issue-6

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग
एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 20 ISSUE-6 (दिसंबर 2024) ISSN : 2395-7115

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL REFEREED/REVIEWED AND INDEXED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
ISSN 2395-7115

सम्पादकीय सम्पर्क :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,
भिवानी-127021 (हरियाणा)
Email : nksihag202@gmail.com
मो. 09466532152

Published by :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board,
Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA
Email : grsbohal@gmail.com
Facebook.com/bohalshodhmanjusha
Website : www.bohalsm.blogspot.com
WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1100/-

Disclaimer :
1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

बोहल शोध मंजूषा परिवार*

मानद संरक्षक

प्रो. राधेमोहन राय
पूर्व उप प्राचार्य,
राजकीय स्नातकोत्तर महा.,
अलवर, राजस्थान।

डॉ. राजेन्द्र गोदारा
परीक्षा नियंत्रक,
टांटिया विश्वविद्यालय,
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

डॉ. विनोद तनेजा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुरूनानक वि.वि. अमृतसर
पंजाब।

सम्पादक मण्डल

सह सम्पादिका :
डॉ. रेखा सोनी
उप प्राचार्या, शिक्षा विभाग
टाटिया वि.वि. श्रीगंगानगर।

सह सम्पादिका :
डॉ. सुशीला आर्या
हिन्दी विभाग, चौ. बंसीलाल
विश्वविद्यालय, भिवानी।

प्रबंध सम्पादक :
समुन्द्र सिंह
भिवानी, हरियाणा।

विधि विशेषज्ञ

डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
जिला न्यायालय
भिवानी, हरियाणा।

अजीत सिहाग, एडवोकेट
पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट,
चंडीगढ़।

चरणवीर सिंह, एडवोकेट
जिला न्यायालय
पटियाला, पंजाब।

विषय विशेषज्ञ/परामर्शदात्री/शोधपत्र निरीक्षण समिति

माई मनीषा महंत
किन्नर अधिकार ट्रस्ट
भूना, जिला कैथल, हरियाणा

डॉ. विश्वबंधु शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
बाबा मस्तनाथ वि.वि. रोहतक

डॉ. संजय एल. मादार
विभागाध्यक्ष, पी.जी. केन्द्र
द.भा.हिन्दी प्रचार सभा हैदराबाद।

डॉ. गीता दहिया, प्राचार्या,
नैशनल टीटी कॉलेज फॉर गर्ल्स
अलवर, राजस्थान

डॉ. विनोद कुमार
हिन्दी विभाग, लवली प्रोफेशनल
यूनिवर्सिटी, पंजाब

डॉ. मो. रियाज़ खान
बीएमएस वूमैन कॉलेज आटोनोमेस
बेगलूरू

डॉ. वनिता कुमारी
च. दादरी (हरियाणा)

श्री सहदेव समर्पित
सम्पादक, शान्तिधर्मी, जीन्द

डॉ. अंजली उपाध्याय
उत्तर प्रदेश

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कालेज
धारवाड़, कर्नाटक

प्रो. अमनप्रीत कौर
गुरू तेग बहादुर खालसा कॉलेज
फॉर वूमैन, दसूहा, पंजाब

डॉ. वर्षा रानी
संस्कृत विभाग, डॉ. भीमराम
अम्बेडकर, वि.वि., आगरा

प्रो. कमलेश चौधरी
राजकीय रणबीर महाविद्यालय
संगरूर, पंजाब

डॉ. किरण गिल
दीनदयाल टी.टी. महाविद्यालय
बारी, जिला सीकर, राज.

डॉ. सविता घुड़केवार
पीजी विभाग, दक्षिण भारत
हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

डॉ. परमजीत कौर
बरेली कॉलेज बरेली,
उत्तर प्रदेश।

डॉ. राजकुमारी शर्मा
नेपाल

डॉ. श्रीविद्या एन.टी.
श्री शंकराचार्य संस्कृत वि.वि.
केरल।

डॉ. बी. संतोषी कुमारी
पी.जी.विभाग, दक्षिण भारत हिन्दी
प्रचार सभा, मद्रास

श्री राकेश ग्रेवाल
सन जॉस,
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

डॉ. पंडित बन्ने
भारत महाविद्यालय,
सोलापुर (महाराष्ट्र)

डॉ. पायल लिल्हारे
अमरशहीद चंद्रेशेखर आजाद
शा.स्ना.महा. निवाड़ी, मध्यप्रदेश

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

डॉ. उमा सैनी
आई.ए.एस.ई. विश्वविद्यालय
सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. मनमीत कौर
राधा गोविन्द वि.वि.,
रामगढ़, झारखण्ड।

डॉ. रीना उन्नीयाल तिवारी
शिक्षा संकाय, डी.ए.वी. पीजी
कालेज, देहरादून

डॉ. सुरजीत सिंह कस्वां
डीन फिजिकल एजुकेशन
टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर,

डॉ. शबाना हबीब
त्रिवन्तपुरम, केरल

डॉ. शिवकरण निमल
राजस्थान

डॉ. राधाकृष्णन गणेशन
वाराणसी

डॉ. मानसिंह दहिया
हरियाणा

डॉ. नीलम आर्या
उत्तर प्रदेश

डॉ. रवि सुण्डयाल
जम्मू कश्मीर

प्रो. नरेन्द्र सोनी
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. रोहतास
डी.एन. कॉलेज, हिसार।

प्रो. सत्यबीर कालोहिया
पूर्व प्राचार्य, कैलिफोर्निया।

डॉ. इस्पाक अली
प्राचार्य, लाल बहादुर शास्त्री
शिक्षा महाविद्यालय, बेंगलूरू

प्रो. रेखा रानी
गवर्नमेंट कॉलेज
संगरूर, पंजाब

डॉ. के.के. मल्हौत्रा
पूर्व विभागाध्यक्ष
गवर्नमेंट कॉलेज, गुरदासपुर

डॉ. संजीव कुमार विश्वकर्मा
शासकीय महाविद्यालय,
लवकुश नगर, मध्य प्रदेश

डॉ. परमानन्द त्रिपाठी
एचओडी एजुकेशन, एल.एन.डी.
कालेज, मोतिहारी, बिहार

डॉ. करमजीत कौर
प्राचार्या, दशमेश गर्ल्स कॉलेज
चक आला, मुकेरिया, पंजाब

*सम्पूर्ण बोहल शोध मञ्जूषा परिवार/सम्पादक मण्डल अवैतनिक है।

शोध-पत्र प्रकाशन के लिए निर्देश मंजूषा

गुगनराम सोसायटी (पंजीकृत) द्वारा शोधार्थियों व अध्येताओं के शोध/अनुसंधान की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने हेतू बोहल शोध मंजूषा ISSN 2395-7115 नामक बहुभाषिक अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका का प्रकाशन किया जा रहा है। कला, संस्कृति, विज्ञान, वाणिज्य, मानविकी, प्रबंध, प्रौद्योगिकी, विधि, भूगोल, शिक्षा, पत्रकारिता पर केन्द्रीत इस शोध पत्रिका को विषय विशेषज्ञों तथा मनीषी विद्वानों की सक्रिय सहभागिता प्राप्त है। पत्रिका का वार्षिक शुल्क 1100 रु. है।

आप अपना शोध पत्र कम्प्यूटर से मुद्रित फोन्ट साईज 14, कृतिदेव-10, कृतिदेव-21 में व अंग्रेजी के Arial, Times New Roman में पेज मेकर या माइक्रोसोफ्ट वर्ल्ड में हमारी Email ID : grsbohal@gmail.com पर भेजें। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व दिये गये सन्दर्भ, मात्रा आदि की पूर्णतया जाँच कर लें।

<u>नोट :-</u> उर्दू, पंजाबी आदि भाषा के शोध पत्र पेपर साईज 7x9.5 पर टाईप कराकर JPG या PDF फाईल हमारी ईमेल आई.डी. पर भेज सकते हैं।

हमारी पत्रिका में शोध पत्र लेखक के फोटो सहित प्रकाशित किये जाते हैं। इसलिए आप अपने शोध पत्र के साथ पासपोर्ट साईज फोटोग्राफ, सम्पर्क सूत्र : टेलीफोन, मोबाईल नं., ई-मेल तथा पिनकोड सहित पत्र व्यवहार का पूरा पता (हिन्दी व अंग्रेजी) कम्प्यूटर द्वारा टाईप करवाकर भेजें।

★ शोध पत्र 2000-2500 शब्दों (4-6 पेज) से अधिक नहीं होनी चाहिए, यदि शब्द सीमा अधिक होती है तो सम्पादक को अधिकार होगा यथा स्थान संक्षिप्तीकरण कर दें। अस्वीकृत शोध पत्र की वापसी संभव नहीं है।

★ पत्रिका में प्रकाशित श्रेष्ठ शोध पत्र को हमारी सोसायटी/पत्रिका की ओर से बहुउपयोगी श्रीमती गिना देवी शोधश्री सम्मान प्रदान किया जायेगा।

★ शोध पत्र में व्यक्त विचार लेखकों के स्वयं के विचार हैं। उनसे सम्पादक, प्रकाशक की सहमति आवश्यक नहीं है। शोध पत्र में प्रयुक्त किए गए तथ्यों के प्रति संबंधित लेखक उत्तरदायी होगा। पत्रिका में शोध आलेख प्रकाशन के लिए भेजने से पहले सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करना लेखक का दायित्व है। प्रत्येक विवाद का न्यायक्षेत्र भिवानी (हरियाणा) होगा।

★ सम्पादकीय पद अव्यावसायिक और अवैतनिक हैं। पत्रिका में केवल शोध पत्र ही प्रकाशनार्थ भेजें। शोध पत्र का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय व प्रकाशित समस्त शोध पत्रों का सर्वाधिकार समिति/सम्पादक के पास सुरक्षित होगा।

नोट :

सहयोग/सदस्यता राशि 1100/- रू. का ड्राफ्ट/चैक/आई.पी.ओ. 'गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी' के नाम भेजें तथा ऑनलाईन बैंक में सहयोग जमा राशि की रसीद की फोटोप्रति अपने आलेख के साथ हमें मेल कर सूचित करने का कष्ट करें ताकि समय पर रसीद भेजी जा सके। ऑनलाईन सहयोग राशि के साथ 50/- रू. अतिरिक्त अवश्य जमा करवायें। प्रकाशन सहयोग शुल्क वापिस देय नहीं।

बैंक का नाम	:	पंजाब नैशनल बैंक, हालु बाजार, भिवानी (हरियाणा)
खाता धारक का नाम	:	गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी
बैंक खाता संख्या	:	1182000109078119
IFSC Code	:	PUNB0118200
MICR CODE	:	127024003

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८६/२

ISSN : 2395-7115

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED & REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021
www.bohalsm.blogspot.com grsbohal@gmail.com 8708822674 9466532152

अनुक्रमणिका - दिसम्बर 2024

क्र०	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	संपादकीय	डॉ० नरेश सिहाग	10-10
2.	जल सुरक्षा ऊर्जा सुरक्षा और पारिस्थितिकीय सुरक्षा	डॉ० अरविन्द कुमार	11-13
3.	मधुदीप : एक लघुकथाकार	प्रिंस कुमार	14-19
4.	भारत में महिलाओं के प्रति लैंगिक अपराधों के निवारण, प्रतिषेध और प्रतितोषण मे लोकहितवाद की भूमिका : एक समीक्षा	आर्या सिंह	20-24
5.	भारतीय भाषाओं के संवर्धन में अवधी बोली का प्रदेय	पवन कुमार पाल	25-29
6.	साङ्ख्यदर्शनसंक्षिप्तपरिचयः	Dr R BHARANIDHARAN	30-36
7.	डॉ० अर्जुन तिवारी की भोजपुरी-साहित्येतिहास-दृष्टि	डॉ० सुरेश कुमार प्रजापति	37-42
8.	भारतीय संस्कृति में राम की महिमा	डॉ० हेमन्त सिंह कंवर	43-46
9.	क्षेत्रीय भाषाओं में कानूनी शिक्षा-वर्तमान और भविष्य	डॉ० शैलेश पाण्डेय	47-51
10.	दलित साहित्य और भारतीय युवा	डॉ० अंकुर श्रीवास्तव	52-55
11.	पंचायत राज में महिलाओं की भूमिका	प्रवीण कुमार	56-58
12.	"A stydy of academic anxiety among secondary school students in relation to thair Mental Health Status	DR. Anupama Ahuja	59-64
13.	तुलसी के रामचरितमानस में नारी - चिंतन का विश्लेषण	सजना यादव	65 -69
14.	प्राचीन भारत में न्यायिक प्रक्रिया	डॉ० हितेश शर्मा	70-74

15.	कौटलीयार्थशास्त्रे द्वितीसमधिकरणमेकमध्ययनम्	Dr.R.Seshadri	75-79
16.	शिल्परत्न के अनुसार भूमि के प्रकार	वीणा शर्मा	80-82
17.	తెలుగు వెలుగు' పత్రిక కథలు - మానవ సంబంధాలు	అన్నెం శ్రీనివాస రెడ్డి	83-86
18.	मनु शर्मा के पौराणिक उपन्यासों की प्रासंगिकता : महाभारत के विशेष संदर्भ में	Harija J. H	87-90
19.	स्त्री विमर्श: "गोबर गणेश" के विशेष संदर्भ में	रेवती एम. एस.	91-94
20.	"पगहा जोरी जोरी रे घाटो" : आदिवासी नारी प्रतिरोध के संदर्भ में	ANILA. A. L	95-98
21.	रीतिकालीन गौण कवियों की कविता में भक्ति का निरूपण	डॉ० उमा मेहता	99-101
22.	कालीबंगा सभ्यता का अद्भुत स्वरूप व विकास	श्री विक्रम सिंह यादव	102 -106
23.	ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚ ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ	ਪ੍ਰਭਜੀਤ ਕੌਰ ਡਾ: ਗੁਰਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ	107 -111
24.	Indian Sanskrit Scholar & Aeronaut Shivakar Bapuji Talpade : A Mystery of Aeronautics	Naresh Kumar, Professor Sushma Devi	112-114
25.	ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦੀ ਕਵਿਤਾ:ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਪਾਸਾਰ	ਡਾ. ਮਨਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਵਿਰਕ	115 -119
26.	हिंदी पत्रकारिता और वैश्वीकरण	कोमल	120-123
27.	INDIAN AND HER NEIGHBOUR	विनोद कुमार, डॉ. एस. के. सिद्धार्थ	124-132
28.	ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਇਸਤਰੀ ਪੱਖ	ਡਾ.ਮਨਿੰਦਰਜੀਤ ਕੌਰ	133-138
29.	मन्नू भंडारी के नारीवादी साहित्य	डॉ० सीता कुमारी	139 -141

30.	राजर्षि छत्रपति शाहूजी महाराज का कार्य व योगदान	डॉ॰ गणेश कुमार कोशले	142-146
31.	संजीव (राम संजीवन प्रसाद) के कहानियों में चित्रित स्त्री-पुरुष	शिवराजकुमार कल्लूर डॉ. प्रभुसेन डी	147-150
32.	पत्रकारिता के क्षेत्र में हिंदी की भूमिका एवं रोजगार की संभावनाएं	मोनिका मेहता	151-153
33.	श्रीमद्भागवत में यात्रा विज्ञान	Prince Kumar	154-156
34.	विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृतों में प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण	डॉली प्रजापति	157-161
35.	अरस्तु का राजनीति-विज्ञान में योगदान	कैलाश चन्द सैनी	162-166
36.	नाट्य कला का कॉलेज शिक्षा में महत्व	लीलाधर सहू	167-171
37.	डॉ. शेर सिंह बिष्ट के कुमाउनी साहित्य में संस्कृति विमर्श	रेवा महरा	172-174
38.	राजनैतिक नेता समर्थन हासिल करने के लिए बयानबाजी का उपयोग कैसे करते हैं	हरसुख	175-177
39.	ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ	ਡਾ. ਨੈਨਮੀ ਸ਼ਰਮਾ	178-183
40.	मिथक एवं समकालीन चेतना का अंत:संबंध	अमित कौर	184-188
41.	Artificial Intelligence and Voice Assistants in Daily Life	Aakanksha Khullar, Dr. Rekha Rani	189-193
42.	माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव	जयदेव कौशिक, डॉ. मंजू कुमारी	194-203
43.	इतिहास के पन्ने भूले आदिवासी जीवन: 'जो इतिहास में नहीं है' उपन्यास के संदर्भ में	हरिता कुमारी जे,	204-207

संपादकीय

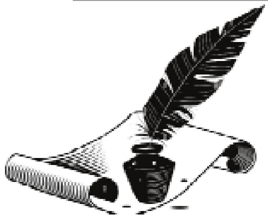

प्रिय पाठकों!

दिसंबर का यह महीना हमें न केवल वर्ष के समापन का संकेत देता है, बल्कि आत्मविश्लेषण और नए सिरे से शुरुआत का अवसर भी प्रदान करता है। **"बोहल शोध मंजूषा"** के इस विशेष दिसंबर अंक में, हम ज्ञान, शोध और रचनात्मकता के उन आयामों को प्रस्तुत कर रहे हैं, जिन्होंने 2024 को हमारे लिए विशेष बना दिया।

इस वर्ष, शोध और नवाचार के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है, वह समाज के हर वर्ग पर सकारात्मक प्रभाव डालने का वादा करती है। हमारे लेखकों ने विभिन्न क्षेत्रों में अपने गहन अध्ययन और अनुभवों को इस मंच के माध्यम से साझा किया है। चाहे वह पर्यावरणीय मुद्दे हों, शिक्षा में नई तकनीक का समावेश हो, या फिर सांस्कृतिक धरोहरों का संरक्षण–हर विषय अपने आप में अनमोल है।

दिसंबर का यह अंक विशेष रूप से उन शोधकर्ताओं और लेखकों को समर्पित है, जिन्होंने अपने लेखों के माध्यम से समाज को न केवल नई दृष्टि दी है, बल्कि बदलाव का मार्ग भी प्रशस्त किया है।

इस बार के अंक में आपको शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग, ग्रामीण विकास के नये मॉडल, और भारत की सांस्कृतिक धरोहर को डिजिटली संरक्षित करने के प्रयासों पर आधारित लेख मिलेंगे। इसके साथ ही, युवा शोधकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रेरणादायक अध्ययन आपको भविष्य की संभावनाओं की झलक देंगे।

हमारी संपादकीय टीम का यह निरंतर प्रयास रहता है कि हम आपको श्रेष्ठ सामग्री प्रदान करें और शोध एवं लेखन के लिए एक ऐसा मंच बनें, जो समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सके। यह यात्रा आपकी भागीदारी और सहयोग के बिना संभव नहीं है।

जैसे-जैसे हम 2024 को विदा करते हैं और 2025 की ओर बढ़ते हैं, आइए हम सभी यह संकल्प लें कि ज्ञान, नवाचार और समावेशी विकास की इस यात्रा में योगदान देंगे। आपका समर्थन, सुझाव और सक्रिय भागीदारी हमारे लिए अमूल्य है।

आइए, ज्ञान के इस उत्सव का आनंद लें और अपने विचारों से इसे समृद्ध करें।

शुभकामनाओं सहित,

संपादक मंडल,

बोहल शोध मंजूषा

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 11-13
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

जन सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और पारिस्थितिकीय सुरक्षा
(Water Security, Energy Security and Ecological Security)

डॉ0 अरविन्द कुमार, सहायक आचार्य (भूगोल विभाग)
अखिलभाग्य पी0जी0 कालेज रानापार, गोरखपुर

सारांश –

जल सुरक्षा एक ऐसा शब्द है जो समाज की जीवित रहने और विभिन्न उत्पादक गतिविधियों को करने के लिए पर्याप्त गुणवत्ता वाला पर्याप्त पानी रखने की क्षमता को संदर्भित करता है। इसीलिये जल सुरक्षा वाला समाज गरीबी को कम करने और जीवन स्तर में सुधार करने की स्थिति में है।

किसी देश में ऊर्जा उपयोग और उसके मानव विकास सूचकांक (HDI) मानव रहन–सहन का समेकि संकेतक के मध्य महत्वपूर्ण सम्बन्ध होते है। प्रति व्यक्ति कम ऊर्जा खपत वाले देशों का मानव विकास सूचकांक में निम्न स्थान होता है। अर्थात् मानव विकास सूचकांक एंव ऊर्जा उपभोग एक दूसरे के पूरक है। अपने ऊर्जा उपभोग में कमी किये बिना कोई भी देश मानव विकास सूचकांक में बेहतर प्रदर्शन नहीं कर सकता। वर्तमान में भारत की प्रति व्यक्ति ऊर्जा उत्पादन दर विकसित देशों की तुलना में काफी कम है, जिसे बढ़ाने भी आवश्यकता है।

प्रकृति और उसके संसाधनों को बनाए रखना बहुत जरूरी है। इसलिए, पृथ्वी पर जीवन की निरन्तरता के लिए बहुत जरूरी है। पृथ्वी पर जीवन की कल्पना करना मुश्किल होगा, जहाँ प्राकृतिक पर्यावरण खराब हो। इसलिये प्रकृति को उसके अछुते रूप में संरक्षित करने के लिए उचित कदम उठाना मानव जाति की प्राथमिकता होनी चाहिए।

मुख्य शब्द – जल सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा, पारिस्थितिक सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षित, उत्पादक, क्षमता, समाज, रहन–सहन आदि।

प्रस्तावना –

पृथ्वी के साथ–साथ मानव शरीर का 70 प्रतिशत हिस्सा पानी से बना हैं आज की दुनिया में लाखों समुद्री प्रजातियाँ मौजुद है जो पानी में रहती है। इसी तरह मानव जाति भी पानी पर निर्भर है। सभी प्रमुख उद्योगों को किसी न किसी रूप में पानी की आवश्यकता होती है। हालांकि यह कीमती संसाधन दिन–प्रतिदिन कम होता जा रहा हैं इसके पीछे अधिकांश कारण केवल मानव निर्मित है। इस प्रकार जल संरक्षण की आवश्यकता अब पहले से कहीं अधिक है। इस जल संरक्षण के माध्यम से पानी का संरक्षण करना कितना महत्वपूर्ण है और यह कितना दुर्लभ हो गया है।

एक स्थायी अर्थव्यवस्था को दुनिया भर में आर्थिक विकास और विकास के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है, विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन के आलोक में। किसी देश के आर्थिक और सामाजिक विकास में ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जनसंख्या वृद्धि और तकनीकी विकास जैसे कई कारकों से आने वाले वर्षों में ऊर्जा आपूर्ति की मांग में वृद्धि होने की उम्मीद है। हाल के दशकों में, ऊर्जा फर्मों को अस्थिर तेल की कीमतों भू–राजनीतिक तनावों, युद्धों और खराब मौसम के कारण अत्यधिक जोखिमों का सामना करना पड़ा है।

पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र लगातार बदलती जलवायु, चरम मौसम, स्थितियों और मानवीय गतिविधियों के प्रति प्रतिक्रिया कर रहे है। हम इन परिवर्तनों की निगरानी, विश्लेषण और पूर्वानुमान लगाने के लिए नासा पृथ्वी अवलोकनों के उपयोग को बढ़ावा देते है – और समाज को लाभ पहुँचाने वाली संसाधन प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित करते है।

जल लोग अर्थव्यवस्थाएँ और समुदाय अपने आस–पास की बदलती दुनिया से प्रभावित होते है तो पारिस्थितिकी संरक्षण कार्यक्रम क्षेत्र यह सुनिश्चित करता है कि प्राकृतिक संसाधनां प्रबंधकों और संरक्षण और टिकाऊ पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन में शामिल लोगों के पास प्रतिक्रिया करने के लिए आवश्यक डेटा हो। हम भूमि, मीठे पानी और समुद्री पूर्वानुमान के लिए निर्णय समर्थन उपकरण विकसित करते है।

जल संकट एक खतरा –

उपलब्ध कुल जल में से केवल तीन प्रतिशत ही मीठा जल है। इसलिए इस जल का उपयोग समझदारी और सावधानी से करना आवश्यक है। लेकिन हम अब तक इसके विपरीत ही करते आए है। हम हर दिन अलग–अलग उद्देश्यों के लिए पानी का दोहन करते रहते है। इसके अलावा हम इसे दिन–प्रतिदिन प्रदूषित भी करते रहते है। उद्योगों और सीवेज से निकलने वाला मल–मूत्र सीधे हमारे जल निकायों में फैल जाता है।

इसके अलावा, वर्षा जल को संग्रहित करने के लिए बहुत कम या कोई सुविधा नहीं बची है। इसलिए बाढ़ एक आम बात हो गई है। इसी तरह नदी के किनारों की उपजाऊ मिट्टी का लापरवाही से उपयोग किया जाता है। इसका नतीजा भी बाढ़ के रूप में सामने आता है। इसीलिए आप देख सकते है कि पानी की कमी में मनुष्य की कितनी बड़ी भूमिका है। कंक्रीट के जंगलों में रहने से वैसे भी हरियाली कम हो गई है। इसके अलावा हम जंगलों को काटते जा रहे है जो पानी के संरक्षण का एक बड़ा स्रोत है।

आजकल बहुत से देशों में स्वच्छ जल की भी कमी है। इसलिए जल की कमी एक वास्तविक समस्या है। हमें अपनी भावी पीढ़ियों के लिए दुनिया को बदलने के लिए तुरन्त इससे निपटना चाहिए।

इसके अलावा हमें बहुत ज्यादा बिजली का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। हमें ज्यादा से ज्यादा पेड़–पौधे लगाने चाहिए। वर्षा जल संचयन को अनिवार्य बनाया जाना चाहिए ताकि हम बारिश से भी फायदा उठा सके। कुल मिलाकर हमें पानी की कमी को एक वास्तविक समस्या के रूप में पहचानना चाहिए, क्योंकि यह बहुत खतरनाक है। इसके अलावा इसे पहचानने के बाद, हमें इसे संरक्षित करने के लिए कदम उठाने चाहिए। ऐसी कई चीजें हैं जो हम राष्ट्रीय स्तर के साथ–साथ व्यक्तिगत स्तर पर भी कर सकते है। इसलिए हमें अब एक साथ आना चाहिए और पानी का संरक्षण करना चाएिह।

ऊर्जा सुरक्षा के उपाय –

ऊर्जा संरक्षण का तात्पर्य ऊर्जा की खपत को कम करने के लिए किए गये प्रयासों से है। पृथ्वी पर ऊर्जा असीमित मात्रा में उपलब्ध नहीं है। इसके अलावा, ऊर्जा को पुनः उत्पन्न होने में बहुत समय लग सकता है। यह निश्चित रूप से ऊर्जा संरक्षण को आवश्यकता बनाता है।

ऊर्जा संरक्षण से जीवाश्म ईधन से जुड़े खर्च कम होंगे। जीवाश्म ईधन का खनन बहुत महंगा हैं इसलिए उपयोगक्ताओं को वस्तुओं और सेवाओं के लिए अधिक कीमत चुकानी पड़ती है। ऊर्जा संरक्षण से निश्चित रूप से जीवाश्म ईधन के खनन की मात्रा कम होगी। इनसे उपभोक्ता की लागत कम होगी।

परिणामस्वरूप ऊर्जा संरक्षण से अर्थव्यवस्था मजबूत होगी क्योंकि उपभोक्ताओं के पास वस्तुओं और सेवाओं पर खर्च करने के लिए अधिक आय होगी। ऊर्जा संरक्षण वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए अच्छा है। ऐसा इसलिए है क्योंकि ऊर्जा संरक्षण से शोधकर्ता को अनुसंधान करने के लिए पर्याप्त समय मिलता है।

ऊर्जा संरक्षण मानवता की सर्वोच्च प्राथमिकताओं में से एक होना चाहिए। महात्मा गांधी ने बिल्कुल सही कहा था – ''पानी हर व्यक्ति की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा प्रदान करती है, लकिन हर व्यक्ति के लालच को पूरा नहीं कर सकती।''

यह कथन ऊर्जा संरक्षण के महत्व को बहुत हद तक दर्शाता है। ऊर्जा संरक्षण उपायों का तत्काल कार्यान्वयन निश्चित रूप से सबसे महत्वपूर्ण है।

परिस्थितिक सुरक्षा –

पारिस्थितिकी तंत्र का खर–रखाव वनों के सुरक्षात्मक, उत्पादक और मनोरंजक कार्यों के लिए आधार प्रदान करता है और समाज चाहे जिस भी तरह से वन का उपयोग करना चाहे, वन पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर सभी जीवन रूपों के बीच जीवित रहने की क्षमता और अन्तर्सम्बन्ध वन के अन्य सभी कार्यों के लिए आधार प्रदान करते है। इसलिए पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण और यदि आवश्यक हो तो उसकी बहाली पहली प्राथमिकता है।

पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यप्रणाली को संरक्षित करना –

पारिस्थितिकी तंत्र की कार्यप्रणाली को संरक्षित करने के लिए निम्नवत् कार्यक्षमता के तत्व है –

- वनस्पतियों और जीवों की स्थानीय और क्षेत्रीय विविधता (प्रजाति विविधता)
- प्रत्येक प्रजाति की स्थानीय आबादी के भीतर आनुवंशिक विविधता, जो विकासात्मक विकास की सम्भावना प्रदान करती है (आनुवंशिकी विविधता)
- प्रजातियों की विविधता के साथ–साथ आनुवंशिक विविधता जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने की क्षमता सुनिश्चित करती है।
- पर्यावरण के सम्बन्ध में वनों की पारिस्थितिक अंतःक्रियाएं।

तरीके –

प्रो0 सिल्वा वन पारिस्थितिकी तंत्र को कार्यशील रखने के लिए निम्नलिखित आवश्यक तरीकों की सिफारिश करता है –

- वन का उपयोग करते हुए, प्राकृतिक वन वनस्पति पैटर्न पर गंभीरता से ध्यान देना।
- निरन्तर आवरण के माध्यम से मिट्टी की उत्पादकता का रख–रखाव।
- दुर्लभ और लुप्त प्रायः प्रजातियों पर विशेष ध्यान देते हुए मिश्रित वन का प्रचार–प्रसार।
- विदेशी प्रजातियों के उपयोग की केवल उन मामलों तक सीमित करना जहाँ यह एक आर्थिक आवश्यकता है।
- विशेष मामलों में किसी भी प्रकार की फसल काटने से बचे।

जैसा कि ऊपर बताया गया है वन पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के तत्व 1992 में रियो सम्मेलन में जैव विविधता पर की गई घोषणा के अनुरूप है। वन का संरक्षण, उत्पादन और मनोरंजन कार्य सभी पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण पर आधारित है और वे सभी अपने–अपने तरीके से समाज के लिए महत्वपूर्ण है।

संदर्भ सूची

1. पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार, 2023–24
2. जैव विविधता संरक्षण – रियो सम्मेलन, 1992
3. नमामिगंगे, जल संरक्षण, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, 2024

Email. ID: arvindddu1984@gmail.com **Mob. No._ 8400065651**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 14-19
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मधुदीप : एक लघुकथाकार

प्रिंस कुमार, शोधार्थी,
जय प्रकाश विश्वविधालय, छपरा,

लघुकथा हिंदी गद्य साहित्य की उभरती हुई एक विधा है। इसमें लाघवता और कथात्मकता का अनिवार्य गुण होनी चाहिए। उपन्यास, कहानी, नाटक से भिन्न लघुकथा में कथ्य का कैनवास सीमित होती है। आधुनिक लघुकथा की परंपरा 50 वर्ष पुरानी है। धीरे-धीरे विश्वविद्यालय, अकादमियों, पत्र-पत्रिकाओं, पुरस्कार-मंचों आदि में लघुकथा अपना निश्चित स्थान बनाती जा रही है। स्वाभाविक रूप से हिंदी का एक भविष्य 'लघुकथा' की रचना में लेखक रुचि ले रहे हैं। लेखक लघुकथाकार के रूप में अपनी पहचान बना रहे हैं। मधुदीप एक जाने माने लघुकथाकार हैं। इन्होंने 119 लघुकथाएं लिखी हैं। इन लघुकथाओं को अलग-अलग नाम के पुस्तक में प्रकाशित की गई है यथा 'मेरी बात तेरी बात', 'समय का पहिया...', 'मेरी चुनिंदा लघुकथाएं'। इन पुस्तकों का प्रकाशन दिशा प्रकाशन, दिल्ली से हुआ है। 'लघुकथा के सूत्रधार' मधुदीप का मानना है कि आने वाला समय 'लघुकथा का भी' नहीं 'लघुकथा का ही' है। विकास के क्रम में लघुकथा नित्य नए आयाम तय कर रही हैं। मधुदीप ने ऐसा ही एक कीर्तिमान लघुकथा से संबंधित 'पड़ाव और पड़ताल' के 31 खंड प्रकाशित करवा कर रचा है। मधुदीप इस श्रृंखला के संयोजक हैं। इस श्रृंखला के 19वें खंड में मधुदीप की 66 लघुकथाओं को स्थान दिया गया है। इन 66 लघुकथाओं में अधिकांश पूर्व प्रकाशित एवं कुछ नवीन है। इस खंड में इन लघुकथाओं की समीक्षा भी की गई है 'लघुकथा के प्रहरी' माने जाने वाले मधुदीप लघुकथा लेखन के अतिरिक्त लघुकथा का संपादन, समीक्षा, प्रकाशन तथा संकलन आदि में विशेष रूचि रखते हैं। लघुकथा के लिए मधुदीप का काम लघुकथा की पहचान बन चुकी है। आज इस क्षेत्र में मधुदीप के योगदान की उपेक्षा संभव ही नहीं है। आज स्थिति यह है कि लघुकथा विकास क्रम का अध्ययन मधुदीप एवं उनके योगदान के बिना अधूरा सा लगेगा। लघुकथा विद्या की पूर्णता के लिए मधुदीप का कार्य एक जरूरत है ।

100 से अधिक लघुकथा रचने वाले मधुदीप का पहला एकल लघुकथा-संग्रह 'मेरी बात तेरी बात' है। इसका प्रकाशन 1995 में हुआ है। इस पुस्तक में मधुदीप द्वारा रचित 30 लघुकथाओं

को स्थान दी गई है। यह लघुकथाएं 20 वीं सदी में मधुदीप द्वारा लिखी गई है। मधुदीप के रचना संसार में अभाव का वर्णन है। इन्होंने वंचितों पीड़ितों की आवाज बनने की कोशिश की है। 'मेरी बात तेरी बात' लघुकथा-संग्रह में स्थान पाई लघुकथाएं हैं- 1. हिस्से का दूध 2. तनी हुई मुठिया 3. शासन 4. अस्तित्वहीननहीं 5. अपनी अपनी मौत 6. नियति 7. नरभक्षी 8. ऐसे 9. ओवरटाइम 10. भय 11. खुरण्ड 12. ऐलान-ए-बगावत 13. गंदगी 14. सफेद चोर 15. इज्जत के लिए 16. रुदन 17. एहसास 18. विवश मुट्ठी 19. खोखलापन 20. ट्यूशन 21. बंद दरवाजा 22. अहम् 23. छिद्रान्वेषी 24. विडंबना 25. अंतर 26. ममता 27. जेल-नेता 28. उसका अस्तित्व 29. नवीन बोध 30. पूंजी निवेश।

लघुकथा शब्द दो शब्दों से मिलकर बनी है। मधुदीप 'लघुकथा' के दोनों शब्द 'लघु' और 'कथा' को बराबर महत्व देते हैं। लघुता और कथात्मकता को लघुकथा की अनिवार्य तत्व मानते हैं। व्यंग को लघुकथा का एक तत्व मानते हैं किंतु अनिवार्य तत्व नहीं। मधुदीप छोटी कहानी को लघुकथा से भिन्न मानते हैं। वे लघुकथा को पल में व्यक्त संवेदना के लिए सटीक मानते हैं। मधुदीप प्रयोगधर्मी लघुकथाकार है। उनका विचार है कि विविधता एवं प्रयोगधर्मिता साहित्यिक विधा को जीवित रखती है। इससे साहित्यिक व्युत्पत्ति होती है जो विधा के प्रभाव को व्यापक बनती है। भाषा के स्तर पर मधुदीप लघुकथा के लिए उपन्यास, कहानी व नाटक आदि से भिन्न भाषा की अपेक्षा करते हैं। लघुकथा की भाषा में संप्रेषणीयता का गुण प्रभावशाली स्तर का होना चाहिए। ढीली-ढाली भाषा लघुकथा में नहीं चलेगी। मधुदीप हिंदी साहित्य में लघुकथा को प्रगति का प्रतीक मानते हैं। उन्होंने अपनी लघुकथाओं में समय के सच को उजागर किया। इस संबंध में मधुदीप का विचार है, "यदि पाठक को हमारी लघुकथाओं में हमारा वर्तमान धड़कता दिखाई नहीं देगा तो उसे नकार देगा।"(1) लघुकथा में वातावरण एवं स्थिति वर्णन और सटीकता से अपनी बात कहने के मध्य संतुलन को मधुदीप उचित मानते हैं। उनके अनुसार उद्वेलित करने वाले लघुकथा सफल होती हैं यानी लघुकथा की प्रभावन क्षमता इसकी सफलता की एक महत्वपूर्ण कारक है।

वर्ष 2015 में मधुदीप की दूसरी एकल लघुकथा संग्रह 'समय का पहिया...' प्रकाशित हुआ। इसमें लघुकथा संग्रह 'मेरी बात तेरी बात' में शामिल 30 लघुकथाओं को पुनः स्थान दिया गया। इसके अतिरिक्त मधुदीप द्वारा 21वीं सदी में रचित 41 लघुकथाओं को भी स्थान दिया गया। इस प्रकार इस लघुकथा संग्रह में मधुदीप के 71 लघुकथाओं को स्थान मिला। मधुदीप द्वारा वर्तमान सदी में रचित 41 लघुकथाओं के शीर्षक इस प्रकार हैं - 1. अबाउट टर्न 2. अवाक् 3. आधी सदी के बाद भी 4. ऑल आउट 5. इज्जत का मोल 6. उनकी अपनी जिंदगी 7. उसके बाद 8. एकतंत्र 9. कल ही की बात है 10. किस्सा इतना ही है 11. चिड़िया की आंख कहीं और भी 12. चैटकथा 13. छोटा, बहुत छोटा 14. टोपी 15. ठक-ठक---ठक ठक 16. तुम इतना चुप क्यों

हो दोस्त 17. तुम तो सड़कों पर नहीं थे 18. दौड़ 19. पिंजरे में टाइगर 20. बात बहुत छोटी सी थी 21. मकान घर नहीं होता 22. मजहब 23. मसालेदार भोजन की तीखी सुगंध 24. महल में तो राजा रहता है 25. महानगर का प्रेम संवाद 26. मुआवजा 27. मुक्ति 28. मेड इन चायना 29. मेरा बयान 30. राजनीति 31. रात की परछाइयां 32. रुक्मणी-हरण 33. वजूद की तलाश 34. विषपायी 35. वोट में तब्दील चेहरा 36. शोक उत्सव 37. सन्नाटो का प्रकाश पर्व 38. समय का पहिया घूम रहा है 39. साठ या सत्तर से नहीं 40. हड़कम्प 41. हां, मैं जितना चाहता हूं।

लघुकथा संग्रह 'समय का पहिया...' का प्रकाशन लघुकथा संग्रह 'मेरी बात तेरी बात' के 20 वर्ष बाद हुआ किन्तु मधुदीप के स्वर अपरिवर्तित है। मधुदीप गुणवत्ता युक्त लघुकथा के पक्षधर हैं। बड़ी संख्या में लिखी जा रही लघुकथा को मधुदीप लघुकथा की एक समस्या मानते हैं। मधुदीप के विचार में संख्या समस्या नहीं है लघुकथा की गुणवत्ता से समझौता समस्या है। लघुकथाकार बनने की होड़ को लघुकथा के विकास के लिए हानिकारक मानते हैं। पिछली सदी और वर्तमान सदी में लिखी गई लघुकथाओं के अंतर को उजागर करते हुए मधुदीप लिखते हैं, "जहां अस्सी के दशक की तथा उससे पहले की लघुकथा भ्रष्ट नेताओं, पुलिस की ज्यादतियों, बिखरते नैतिक-सामाजिक मूल्यों तथा दो विपरीत स्थितियों को साथ- साथ प्रस्तुत करने के इर्द-गिर्द घूमती थी, वही आज की लघुकथा में वर्तमान का सत्य समाज की विषमता फैलने पूंजीवाद और बाजारवाद की विभीषिका भूमंडलीकरण की स्थिति टूटते परिवारों के तथा आर्थिक दौड़ के कारण मनुष्य के अकेलेपन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है।"(2)

वर्ष 1976 से 2015 तक के रचनाकर्म का परिणाम है 'समय का पहिया...' यानी 40 वर्षों में 71 लघुकथाएं अपेक्षाकृत कम है। मधुदीप इसका कारण स्वयं का प्रोफेशनल लेखक नहीं होना मानते हैं। वे शास्त्रीय नियमों को लघुकथा विकास के लिए एक चुनौती मानते हैं। मधुदीप के अनुसार लघुकथाकार के लिए शाब्दिक मितव्ययिता एक गुण है। उल्लेखनीय है कि अधिक पात्र एवं घटनाएं लघुकथा को कमजोर बनाती हैं। चुटकुलानुमा लघुकथा भी कमजोर मानी जाती है। लघुकथा में फ्लैशबैक के लिए उतना स्थान नहीं होती है यानी अपवादों को छोड़कर लघुकथा के लिए फ्लैशबैक पद्धति कारगर नहीं है। प्राय: नाट्य शैली को लघुकथा में नहीं स्वीकारी जाती। रेखांकित करने योग्य तथ्य है कि मधुदीप की लघुकथा 'समय का पहिया घूम रहा है' नाट्य शैली में है। मधुदीप का विचार है कि लघुकथा को साहित्य शास्त्र से परे रखना चाहिए जिससे इसका यथासंभव विकास हो सके। इस संबंध में चर्चा करते हुए एक आलेख में कहते हैं कि साहित्य शास्त्र निर्मित होता है और फिर खंडित होता है फिर बनता है और पुनः खंडित होता है और यही क्रम चलता रहता है।

मधुदीप लघुकथा के क्षेत्र में समीक्षकों के अभाव को एक समस्या मानते हैं। यहां प्राय: लघुकथा लेखक ही लघुकथा की समीक्षा करते हुए मिल जाएंगे। लघुकथाकार के रूप में मधुदीप

एक और समस्या महसूस करते हैं वह है गुटबाजी।   मधुदीप का विश्वास है कि लेखन दमदार होगा तो पाठक उसे नहीं नकार सकता। वह इस ओर भी ध्यान आकृष्ट करते हैं कि कुछ प्रकाशक लेखको से सहयोग राशि लेकर उनकी लघुकथाओं की पुस्तक को प्रकाशित कर रहे हैं। इन पुस्तकों में गुणवत्ता का नितांत अभाव है।

सन् 2021 में प्रकाशित 'मेरी चुनिंदा लघुकथाएं' नामक लघुकथा संग्रह में मधुदीप की 66 लघुकथाएं हैं इन 66 लघुकथाओं में से 24 लघुकथाओं को पहले ही 'समय का पहिया...' पुस्तक में प्रकाशित किया जा चुका है। शेष 42 नई लघुकथा को इस लघुकथा संग्रह में स्थान दी गई। मधुदीप की 42 नवीन लघुकथाओं के नाम है - 1. नमिता सिंह 2. लोटा हुआ अतीत 3. वानप्रस्थ 4. लौहद्वारा 5. जागृति 6. उजबक की कदमताल 7. अजन्मा लोकतंत्र 8. मुदधिर 9. अतुल ने ठीक कहा था 10. तीस 11. हथियार 12. हथौड़ा 13. अंतरात्मा 14. अविश्वास 15. नजदीक बहुत नजदीक 16. निदान 17. भ्रमभंग 18. योद्धा पराजित नहीं होता 19. असमंजस 20. निश्चय 21. युद्ध 22. हड़कम्प 23. जनपद का चौराहा 24. अखबार में सुर्खी नहीं छपेगी 25. पत्नी मुस्कुरा रही है 26. माया मोह 27. यह बात और है 28. सन्यास 29. हेकड़ 30. शायद 31. छलावे 32. अभी कुछ तो बाकी है 33. व्यापारी 34. खुशगवार मौसम 35. तुरूप का पत्ता 36. शाश्वत 37. विकल्प 38. अस्पताल का प्रेत 39. हालात काबू में है 40. आलू के दाम 41. मंदी 42. डायरी का एक पन्ना। इन लघुकथाओं के अतिरिक्त 6 अन्य नई लघुकथाओं को 'पड़ाव और पड़ताल' खंड-19 में जगह दी गई जबकि शेष 60 लघुकथा पहले ही 'मेरी बात तेरी बात' या 'समय का पहिया...' या 'मेरी चुनिंदा लघुकथाओं' में कहीं ना कहीं प्रकाशित हो चुकी है। मधुदीप की अन्य 6 लघुकथाएं इस प्रकार है- 1. तुम बहरे क्यों हो गए हो 2. धर्म 3. पागल 4. महानायक 5. वे दोनों 6. समय बहुत बेरहम होता है। इस प्रकार मधुदीप की सभी लघुकथाओं के गणना करने पर 119 लघुकथाएं होती हैं। इतना ही है मधुदीप का लघुकथा-संसार। डॉ. सतीश दुबे के अनुसार "सामाजिक सरोकार के इर्द-गिर्द परिस्थितियाँ, घटनाएं, अनुभव के ताने-बाने से बुना जीवन सत्य मधुदीप की लघुकथाओं का वैशिष्टय है।"(3) मधुदीप की लघुकथाओं में जो यथार्थ की प्रधानता है वह है- व्यवस्था के विरुद्ध, बिखराव, विद्रोह, स्वार्थ या अनैतिकता साथ ही मधुदीप की लघुकथाओं में "रिश्तो में क्रमशः पैदा होने वाली दरार, आत्मीयता, कटुता, भावनात्मक शोषण या परंपरागत व्यवहार" (4) मिलता है। पूंजीवाद का दंश और आर्थिक विषमताओं का दर्द भी यहां मिलता है। कुछ अन्य उल्लेखनीय तत्व को मधुदीप के लघुकथाओं में मिलता है वह है - अफसरशाही, लालफीताशाही, व्यक्ति का अंतर्द्वंद, अभाव, मनोविज्ञान, विवशता, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, व्यवस्था, धार्मिक व्यवस्था के पाखंड, विडंबना, समझौता के बजाय संघर्ष, विरोध आदि। मधुदीप के लघुकथाओं की व्यापकता के विषय में डॉ. सतीश दुबे अपने आलेख मधुदीप का रचना संसार में लिखते हैं, "मधुदीप की लघुकथाएं उनके सामाजिक सरोकार या सोच का दिग्दर्शन करती हैं। सबसे बड़ी बात यह है

कि कथ्यों के चयन के संदर्भ में लघुकथा लेखन की तकनीक का निर्वाह इन रचनाओं में मिलता है। लघुकथाओं के कथानक अपना स्वतंत्र अस्तित्व तथा पहचान बनाए रखते हुए अपने लक्ष्य तक पहुंचाते हैं। अपनी यात्रा के दौरान ना तो इनका भाव खंडित होता है ना ही ये उपकथानक या वातावरण का आधार ग्रहण करते हैं। यह कथानक उसे नद के समान है जो उपधाराओं से मिलकर न तो अपने पाट को चौड़ा करते हैं न ही तल को गहरा। "(5)

लघुकथा में कथानक के अनुरूप भाषा महत्वपूर्ण है। भाषा से ही विद्या की शैली और समृद्धि तय होती है। भाषा का आधार शब्द है। समृद्ध शब्द संपदा कथन को प्रभावशाली बनाती हैं। "कथ्य की प्रस्तुति में शब्दों की कंजूसी नहीं, मितव्ययिता जरूरी है। दरअसल शब्दों की यह मितव्ययिता ही लघुकथा है। कथ्य को तराशते हुए, शब्दों की मितव्ययिता से कसावट आ जाती है।"(6) शब्द लेखक की शक्ति है। लघुकथा का आकार निर्धारण करने में शब्द के सावधानी पूर्वक प्रयोग का महत्व है। लघुकथा के संबंध में शब्दों के प्रयोग के लिए यह मुहावरा बहुत सटीक है 'सावधानी हटी दुर्घटना घटी'। शब्दों के प्रयोग में थोड़ी असावधानी लघुकथा को विकृत कर देती हैं। मधुदीप की लघुकथाएं इससे बची हुई है। इनकी लघुकथाओं में कथ्य के अनुरूप आंचलिक शब्द एवं मुहावरे मिलती है। लघुकथा के क्रमिक विकास के लिए भाषा के गुणात्मक स्तर को बनाए रखना आवश्यक हैं। मधुदीप ने ऐसा ही किया है। पंच लाइन को मधुदीप विकासशील पद्धति मानते हैं। आलेख 'लघुकथा : एक विहंगम दृष्टि' में मधुदीप लिखते हैं, "उपन्यास में मुख्य कथा के साथ बल देती हुई उपकथाएं चलती हैं। कहानी में मूल कथा के साथ पात्रों की मन:स्थितियों और वातावरण का वर्णनात्मक चित्रण होता है परंतु लघुकथा में उद्देश्य पर सीधा प्रहार होता है।"(7) सटीक अभिव्यक्ति लघुकथा की विशेषता है। लघुकथा इस भाग दौड़ भरी जिंदगी की जरूरत है और मधुदीप इस जरूरत को पूरा करने वाले लघुकथाकार।

निष्कर्ष

मधुदीप ने 119 लघुकथाएं लिखे हैं। जिनमें से 30 लघुकथा को 'मेरी बात तेरी बात' (1995) में और 'मेरी बात तेरी बात' के 30 लघुकथा और 41 नवीन लघुकथा सहित 71 लघुकथाओं को 'समय का पहिया...' (2015) लघुकथा संग्रह में स्थान मिला। लघुकथा संग्रह 'मेरी चुनिंदा लघुकथाओं' (2019) में 24 लघुकथाओं का पुनः प्रकाशन के साथ ही 42 नवीन लघुकथाओं को स्थान मिला जबकि 'पडाव और पड़ताल' खंड-19 के अंतर्गत 60 लघुकथाओं का पुनः प्रकाशन एवं 6 नवीन लघुकथाओं को स्थान मिला। इस प्रकार 30+41+42+6=119 लघुकथाएं हूंई। मधुदीप प्रयोगधर्मी लघुकथाकार है। वे लगातार लघुकथा के कथ्य और शिल्प को परिष्कृत करते हैं। उनके कथ्य की पहचान है विविधता और प्रयोगधर्मिता। मधुदीप का कथानक अभाव, संघर्ष, विद्रोह, विरोध, अंतरद्वंद आदि के इर्द-गिर्द घूमता है। उनके लघुकथाओं में पाठक का वर्तमान झलकता है, जिससे पाठक सीधे जुड़ पाते हैं। शिल्प की दृष्टि से मधुदीप के लघुकथा समृद्ध हैं। उन्होंने

फ्लैशबैक, नाट्य शैली, पंच लाइन, व्यंग, हास्य आदि का प्रयोग किया है। वे किसी भी शैली के अति से सचेत करते हैं। मधुदीप लघुकथा के लिए शाब्दिक मितव्ययिता को उपयोगी मानते हैं। इससे लघुकथा में कसावट बनी रहती है। मधुदीप कथानक के अनुरूप भाषा का प्रयोग करते हैं। मधुदीप आंचलिक, सटीक और मुहावरेदार भाषा का प्रयोग करते हैं। भाषा का प्रयोग करते हुए मधुदीप इसकी संप्रेषणीयता का सदैव ध्यान रखते हैं। इस दृष्टि से मधुदीप देशज एवं विदेशज शब्दों से परहेज नहीं करते। मधुदीप लघुकथा के सर्वांगीण विकास के अकांक्षी है।

संदर्भ सूची :

1. मधुदीप, "समय का पहिया....", दिशा प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ. 8
2. वही, पृ. 7-8
3. वही, पृ. 109
4. वही, पृ. 109
5. वही, पृ. 113
6. वही, पृ. 113
7. मधुदीप, "पड़ाव और पड़ताल खंड 19", दिशा प्रकाशन, दिल्ली, 2016, पृ. 221

9135316897, princekumar12051994@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 20-24
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारत मे महिलाओं के प्रति लैंगिक अपराधों के निवारण, प्रतिषेध और प्रतितोषण मे लोकहितवाद की भूमिका : एक समीक्षा

आर्या सिंह, शोध छात्रा (विधि विभाग),
चौधरी महादेव प्रसाद डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

सारांश

महिलाओं के प्रति लैंगिक अपराधों के निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोषण में न्यायपालिका का उल्लेखनीय योगदान है। लोकहितवाद के माध्यम से जहां विशाखा व अन्य बनाम राजस्थान राज्य के मामले में माननीय न्यायालय ने कार्य स्थल पर महिलाओं के यौन उत्पीड़न के मामलों में विधि के शून्यता को भरा है, वही दिल्ली प्रजातांत्रिक कामकाजी महिला मोर्चा बनाम भारत संघ, बोधिसत्व गौतम बनाम शुभ्रा चक्रवर्ती व अन्य के मामले में लैंगिक उत्पीड़न की दशा में पीड़िता को सम्यक रूप से प्रतिकर दिलाए जाने की व्यवस्था भी की है। विशालजीत बनाम भारत संघ एवम् गौरव जैन बनाम भारत संघ के मामले में समाज में वर्षों से चले आ रहे देवदासी प्रथा, जोगिन प्रथा पर प्रतिबंध एवं ऐसी महिलाओं के पुनर्वास की व्यवस्था करना माननीय न्यायालय के न्यायिक सक्रियता का परिचायक है। संक्षेप में कहें तो महिला अधिकारों के संरक्षण की दिशा में माननीय न्यायालय ने जनहित याचिकाओं के माध्यम से न्याय के ‘‘यूटोपिया‘‘ को धरातल पर उतारने का प्रयास किया है। यह न्याय का सबसे आदर्श, नैतिक, व्यावहारिक और वैज्ञानिक रूप है जहां लैंगिक अपराधों से पीड़ित महिला को बिना धन खर्च किये, बिना अदालत का चक्कर लगाए न्याय तक पहुंच माननीय न्यायपालिका द्वारा सुनिश्चित की गई है, जो वास्तव में एक सपने के सच होने जैसा है।

प्रस्तावना

भारतीय संविधान मे महिलाओं के शोषण, उत्पीड़न और प्रताड़ना के विरूद्ध अनेक सांविधानिक प्रावधान हैं, लेकिन स्वतंत्रता के अर्ध दशक के बाद भी विशेषकर महिलाओं की स्थिति में उत्साहवर्धक प्रगति परिलक्षित नहीं हुई है। यहाँ तक समाज की संभ्रान्त एवं सुशिक्षित वर्ग की महिलाओं को भी शोषण तथा उत्पीड़न का शिकार होना पड़ रहा है। यद्यपि लैंगिक समानता, महिला सशक्तिकरण, नारी उत्थान आदि जैसे– लूभावने वायदो की चर्चा बढ़ चढ़ कर की जाती है, लेकिन वास्तविक स्थिति इससे भिन्न है। सम्भवतः इसका मुख्य कारण सदियों से चली आ रही पुरूष प्रधान भारतीय सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन लाने की पुरूष वर्ग में इच्छा की कमी है। इसमें सन्देह नहीं है कि न्यायपालिका ने पिछले कुछ दशकों में अपनी न्यायिक सक्रियता का परिचय देते हुए महिलाओं के प्रति लैंगिक अपराधों के निवारण, प्रतिषेध और प्रतितोषण मे महत्वपूर्ण योगदान दिया है तथा लोकहितवादों के माध्यम से उनके सांविधानिक अधिकारो की रक्षा की है।[1] महिलाओं के शोषण उत्पीड़न से संरक्षण के सन्दर्भ में कुछ उल्लेखनीय लोकहितवाद निम्न है–

बालात्कार एवं यौन शोषण

गुडालूरे चेरियन बनाम भारत संघ [2] – इस लोकहितवाद के प्रकरण में एक याचिका द्वारा उच्चतम न्यायालय का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया था कि पुलिस द्वारा अन्वेषण में लापरवाही बरते जाने के कारण चार बालात्कार के आरोपितों के खिलाफ अपराध साबित नहीं हो सका और वह दण्डित होने से बच गये। जिसके कारण बालात्कार की शिकार महिला को भयंकर मानसिक संत्रास तथा अपमान झेलना पड़ा। इस पर उच्चतम न्यायालय ने उ0प्र0 सरकार को निर्देश दिया कि सम्बन्धित पुलिस अधिकारियों तथा चिकित्सको को तत्काल निलम्बित किया जाए तथा उनके विरूद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही आरम्भ की जाए। साथ ही

बालात्कार की शिकार हुई प्रत्येक महिला को रू0–2.50 लाख प्रतिकर के रूप में दिया जाए तथा अन्य पीड़ितों को रू0–1.00 लाख प्रतिमहिला के हिसाब से क्षतिपूर्ति की राशि प्रदान की जाए।**पी रथीनम् बनाम गुजरात राज्य** [3] – यह वाद बालात्कार के प्रतिकर से सम्बन्धित था। जिसमें गुताबेन नाम की एक अनुसुचित जनजाति की महिला का बालात्कार पुलिस अभिरक्षा में गुजरात पुलिस के कुछ कर्मचारियों द्वारा किया गया था। कथित तौर पर यह बालात्कार उसके पति के सामने किया गया था। यह घटना 1986 की थी। जिसके विरूद्ध एक अधिवक्ता द्वारा लोकहितवाद के माध्यम से न्यायालय का ध्यान आकृष्ट कराया गया था। उच्चतम न्यायालय द्वारा मामले की न्यायिक जाँच के आदेश दिए गए। जिसमें उपरोक्त आरोप को सही पाया गया, इस वाद में न्यायालय ने पीड़ितो का अन्तरिम क्षतिपूर्ति के रूप में रू0–50000.00 देने के निर्देश दिए क्योंकि मामले की कार्यवाही 1993 तक पुरी नहीं हो सकी थी एवं दोषी पुलिस कर्मियो पर भी विभागीय जाँच का आदेश दिया।

दिल्ली प्रजातांत्रिक कामकाजी महिला मोर्चा बनाम भारत संघ [4] – इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने महिलाओ के साथ बढ़ते हुए यौन अपराधो के प्रति गम्भीर चिन्ता व्यक्त की है, और ऐसे मामलो की शीघ्र परीक्षण तथा उन्हे प्रतिकर प्रदान करने एवं उसके पुनर्वास के लिए विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किया है। प्रस्तुत मामले में दिल्ली श्रमजिवी महिला फोरम ने लोकहितवाद के माध्यम से चार घरेलू श्रमजीवी महिलाओं के साथ 7 सेना के जवानो द्वारा यौन उत्पीड़न की घटना को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया। उक्त घटना उस समय घटी थी जब ये महिलाएँ रेलगाड़ी से राँची से दिल्ली जा रही थी। उच्चतम न्यायालय के 3 न्यायमुर्तीयों की खण्डपीठ ने ऐसी महिलाओं को प्रतिकर प्रदान करने और उनके पुनर्वास के लिए निम्नलिखित मार्ग दर्शक सिद्धान्त प्रस्तुत किए।

1. यौन शोषण के शिकायतकर्ता को वकील के रूप में विधिक सहायता दिया जाना चाहिए जो अपराधिक न्याय प्रणाली से भलीभांति परिचित हो। उसे पीड़ित व्यक्ति को कार्यवाहियों के बारे में पुरी जानकारी देना चाहिए बल्कि यह भी बताना चाहिए कि अन्य प्रकार की सहायता कैसे प्राप्त की जा सकती है। जैसे– मानसिक परामर्श या चिकित्सा सहायता आदि।
2. पुलिस स्टेशन पर विधिक सहायता देना आवश्यक है क्योंकि पीड़िता वहां घबडायी रहती है। ऐसे समय अधिवक्ता की सहायता उसके लिए अत्यन्त आवश्यक है।
3. पुलिस स्टेशन पर ऐसे अधिवक्ताओं की सूची होनी चाहिए जो कि ऐसे मामलो में स्वेच्छा से कार्य करना चाहते है।
4. अधिवक्ता की नियुक्ति पुलिस के आवेदन पर न्यायालय द्वारा यथासम्भव शीघ्र की जाएगी।
5. बालात्कार के सभी मामलो में पीड़ित व्यक्ति के पहचान को गुप्त रखा जाएगा।
6. अनुच्छेद–38(1) के अधीन नीति निदेशक तत्वो को ध्यान में रखते हुए अपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड का गठन किया जायेगा।

बोधिसत्व गौतम बनाम शुभ्रा चक्रवती [5] – इस वाद में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री कुलदीप सिंह और सग्गीर अहमद जी के खण्डपीठ द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय को बालात्कार की शिकार महिला को अन्तरिम प्रतिकर देने की शाक्ति है जब तक की परीक्षण न्यायालय अभियुक्त के उपर लगाए गए आरोप पर अपना निर्णय नहीं दे देता है। अतः न्यायालय ने अपीलार्थी को यह आदेश दिया कि वह मुकदमे की सुनवाई के दौरान प्रत्यर्थी को रू0–1000.00 प्रतिमाह अन्तरिम प्रतिकर दे।

अध्यक्ष रेलवे बोर्ड, बनाम श्रीमती चन्द्रिमा दास [6]– इस लोकहितवाद में एक बंगलादेशी महिला रेलवे द्वारा संचालित ''यात्री निवास'' में ठहरी हुई थी। जिसे अकेला पाकर कुछ रेलवे कर्मचारियों ने उसके साथ सामूहिक बालात्कार किया। इसके विरूद्ध जनहित याचिका में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि चूंकि रेलवे विभाग यात्रियों से ''यात्री निवास'' में ठहरने के एवज् में उनसे किराया वसूल करता है इसलिए इसे रेलवे की वाणिज्यिक गतिविधि ही कहा जाएगा। अतः ऐसे स्थानो पर रेल कर्मीयों द्वारा किए गये दुष्कृत्य के लिए रेलवे (केन्द्र सरकार) पर प्रतिनिहित दायित्व आरोपित किया जाना न्यायोचित होगा। क्योंकि वह अपने कर्मचारियों के अपकृत्यों के लिए दायित्वाधीन होती है।

श्रमजिवी महिलाओं का यौन उत्पीड़न से संरक्षण –

इस सम्बन्ध में **विशाखा बनाम राजस्थान राज्य** [7] का मामला उल्लेखनीय है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने श्रमजिवी महिलाओं के काम के स्थान में होने वाले यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए जब तक की इस प्रयोजन के लिए विधान नहीं बन जाता है, विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्त विहित किया है। इस प्रकरण में महिलाओं के अनुच्छेद–14, 19 और 21 में प्रदत्त मूल अधिकारो को लागू करने

के लिए विशाखा नाम की गैर सरकारी संस्था ने लोकहितवाद न्यायालय में फाइल किया था। याचिका फाइल करने का तात्कालिक कारण राजस्थान राज्य में एक सामाजिक महिला कार्यकर्ता के साथ सामूहिक बालात्कार की घटना थी। इस प्रकरण न्यायालय ने निम्नलिखित निर्देश दिए–

1. सभी नियोक्ता या अन्य व्यक्ति जो काम के स्थान के प्रभारी है चाहे वह प्राइवेट क्षेत्र में हो या पब्लिक क्षेत्र में कार्यस्थल पर महिलाओं के प्रति यौन उत्पीड़न को रोकने हेतु समुचित कदम उठायेगे। जिसमें निम्न बाते शामिल है शारीरिक सम्पर्क या अग्रगमन, यौन सम्बन्ध के लिए मांग या प्रार्थना करना, यौन सम्बन्धी छीटाकशी करना, अश्लील साहित्य या कोई अन्य शारीरिक, मौखिक या यौन सम्बन्धित मौन आचरण को दिखाना।
2. सरकारी या सार्वजनिक क्षेत्र के निकायो के आचरण और अनुशासन सम्बन्धी नियमो या विनियमो में यौन उत्पीड़न रोकने सम्बन्धी नियम शामिल किया जाना चाहिए और ऐसे नियमो में दोषी व्यक्तियों के लिए समुचित दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए।
3. प्राइवेट क्षेत्र के नियोक्ताओं के सम्बन्ध में औद्योगिक नियोजन (स्टैडिंग आर्डर) अधिनियम, 1946 के अधीन स्टैडिंग आर्डर में ऐसे निषेधो को शामिल किया जाना चाहिए। महिलाओं को काम, आराम, स्वास्थ और स्वास्थ विज्ञान के सम्बन्ध में समुचित परिस्थितियों का प्रावधान होना चाहिए और यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि महिलाओं को काम के स्थान में कोई विद्वेषपूर्ण वातावरण न हो न ही उनके मन में ऐसा विश्वास करने का कारण हो कि वह नियोजन आदि के मामले में अलाभकारी स्थिति में है।
4. जहाँ ऐसा आचरण भारतीय दण्ड संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन विशिष्ट अपराध होता हो तो नियोक्ता को विधि के अनुसार उसके विरूद्ध समुचित प्राधिकारी को शिकायत करके समुचित कार्यवाही प्रारम्भ करनी चाहिए।
5. यौन उत्पीड़न की शिकार महिला को अपना तथा उत्पीड़नकर्ता का स्थानान्तरण कराने का विकल्प होना चाहिए।

एयारल एक्सपोर्ट प्रोमोशन काउन्सिल बनाम ए0के0 चोपड़ा [8] – पहला मामला था, जिसमे ंउच्चतम न्यायालय द्वारा विशाखा बनाम राजस्थान राज्य के मामले में विहित सिद्धान्तो को लागू किया गया और यौन शोषण के लिए दोषी पाये गए एक कम्पनी में नियुक्त उच्च अधिकारी को सेवा से निकाल दिया गया।

मेधा कोतवाल लेले बनाम भारत संघ [9]– इस लोकहितवाद में यह प्रश्न उठाया गया था कि **विशाखा बनाम राजस्थान राज्य** [10] में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दिशा निर्देशों का पालन नहीं हो पा रहा है। जिस पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश आर0एम0 लोढ़ा के अध्यक्षता वाली 3 न्यायाधीशो की खण्डपीठ ने उपरोक्त मामले में दिए गए दिशा निर्देश के प्रभावी ढंग से अनुपालन हेतु दिशा निर्देश दिए है। जिसमें मुख्य दिशानिर्देश निम्नलिखित है –

1. राज्य तथा संघ क्षेत्र जिन्होने अभी तक अपने सिविल सेवा नियमो में यथायोग्य तथा समुचित संशोधन नहीं किए है वो दो महिने के अन्दर इसे करेंगे। जिनमे यह प्रावधानित किया जाएगा कि परिवाद समिती की रिपोर्ट अनुशासनात्मक कार्यवाही में जाँच रिपोर्ट मानी जाएगी, अर्थात कर्मचारी के दुराचरण की जाँच का निष्कर्ष माना जाएगा।
2. जिन राज्यो तथा संघ क्षेत्रो में औद्योगिक नियोजन नियमो में अभी तक संशोधन नहीं किए गए है वे इस प्रकार के संशोधन दो महीने में करेगे।
3. राज्य और संघ क्षेत्रो द्वारा पर्याप्त संख्या में परिवाद गठित की जाएगी, जिनका तालुका स्तर, जिला स्तर, राज्य स्तर पर कार्य करना सुनिश्चित किया जाएगा। प्रत्येक ऐसी समिति की अध्यक्ष एक महिला होगी और जहाँ तक सम्भव हो ऐसी समिति में एक स्वतंत्र सदस्य सहयुक्त किया जाएगा।

देवदासी कुप्रथा एवं महिलाओं का यौन शोषण –

विशालजीत बनाम भारत संघ [11] के वाद में एक सामाजिक कार्यकर्ता एवं अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय में लोकहित याचिका दायर करते हुए यह माँग की कि देश में व्याप्त बलात् वेश्याकरण, देवदासी तथा जोगिन प्रथा पर कड़ी रोक लगायी जानी चाहिए याचिका में कहा गया था कि महिलाओं के इस शोषण में पुलिस की मिली भगत रहती है। इसलिए सम्बन्धित दोषी पुलिस अधिकारियों के विरूद्ध जाँच बैठायी जाये तथा शोषित महिलाओं के पुनर्वास हेतु कारगर कदम उठाने के लिये राज्यो को निर्देश दिया जाए।

न्यायालय ने मानवो के अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम, 1956, संविधान के अनुच्छेद–23 जो बलात् श्रम को प्रतिबन्धित करता है तथा किशोर न्याय अधिनियम, 2000 एवं भारतीय दण्ड संहिता के विभिन्न प्रावधानो का उल्लंघन करते हुए अभिकथन किया कि ये सभी महिलाओं तथा बालको के शोषण से बचाने के लिए अधिनियमत किये गये है, परन्तु अपनी जीविका कायम रखने हेतु महिलायें स्वयं की इच्छा न होते हुए भी इन्हे न छोड़ने के लिए बाध्य होती है। अतः आवश्यक यह है कि इस अनैतिक धन्धे को चलाने वाले एजेण्टो, दलालों तथा वेश्यालय चलाने वाले व्यक्तियों के विरूद्ध कड़ी कार्यवाही कर इन्हे दण्डित किया जाए।

इस प्रकरण में न्यायालय ने विनिश्चित किया कि पुलिस अधिकारियों के विरूद्ध जांच आदेशित करने के बजाय यह उचित होगा कि महिलाओं और बालको को यौन शोषण से बचाने के हेतु राज्य सरकारे परामर्शदायी–समितियां गठित करे। जिसमें सरकारी अधिकारी, समाजसेवी, महिला कार्यकर्ता तथा विशेषज्ञो को सदस्य के रूप में समाष्टि किया जाए। शोषित महिलाओं के पुनर्वास हेतु भी राज्य सरकारे पुनर्वास संचालित करें।

भोलेनाथ तिवारी बनाम उ0प्र0 राज्य [12] – इस लोकहितवाद में एक पत्रकार पिटीश्नर ने लोकहित याचिका के माध्यम से न्यायालय का ध्यान इस ओर दिलाया कि कतिपय अपराधियों द्वारा एक महिला को अवैध रूप से परिशोधित कर धन कमाने के लिए उससे वेश्यावृत्ति करायी जा रही है। इस पर न्यायालय ने एक आयोग नियुक्त कर उसे प्रकरण की जाँच करने के निर्देश देते हुए आदेशित किया कि यदि सरसरी तौर पर बलात वेश्यावृत्ति का मामला बनता है तो पीड़िता महिला को किसी सुरक्षित स्थान पर हटाया जाए तथा उसे सक्षम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाए ताकि दोषीयों को दण्डित किया जा सके। स्थानीय पुलिस को भी आदेशित किया गया कि वह जाँच में आयोग की सहायता करे।

देवदासी प्रथा के अन्तर्गत महिलाओं तथा बालिकाओं के यौन शोषण के निवारणार्थ उच्चतम न्यायालय ने **गौरव जैन बनाम भारत संघ** [13] के लोकहितवाद में केन्द्र सरकार को निर्देशित किया कि इस कुप्रथा पर सख्ती से रोक लगायी जाए तथा देवदासियों, जोगिनो अथवा वेंकटेसिनो के रूप में काम कर रही महिलाओं के पुनर्वास हेतु समुचित योजना तैयार की जाए, न्यायालय ने कहा कि यह कार्य केन्द्रीय सरकार के समाज कल्याण विभाग द्वारा किया जाना चाहिए ताकि बाल वेश्याओं को समाज में पुनः स्थापित जा सके। इसी प्रकार इनकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध किया जाए तथा इन्हे केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित अथवा गैर सरकारी संगठनो द्वारा संचालित संप्रेक्षण गृहो, बालगृहो अथवा महिला आश्रमो आदि में रखने की व्यवस्था की जाए।

निष्कर्ष –

उपरोक्त अध्ययन के पश्चात हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि महिलाओं के प्रति लैंगिक अपराधों के निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोषण में हमारी शीर्ष न्यायपालिका का योगदान उल्लेखनीय है। माननीय न्यायालय ने लोकहितवादों के माध्यम से न केवल इस विषय पर विधि की शून्यता को भरा है बल्कि विधायिका एवं कार्यपालिका को भी अपने कर्तव्य के निर्वहन हेतु बाध्य किया है। माननीय न्यायपालिका का विशाखा व अन्य बनाम राजस्थान राज्य के मामले में दिया गया निर्णय आगे चलकर महिलाओं का कार्य स्थल पर लैंगिक उत्पीड़न निवारण, प्रतिषेध एवं प्रतितोष अधिनियम, 2013 का आधार बना। लैंगिक उत्पीड़न के मामलों में माननीय न्यायालय के द्वारा अपने विभिन्न निर्णय के माध्यम से अपकृत्य विधि के उपचारों एवं सिद्धांतों जैसे प्रतिकर पुनर्वास एवं प्रतिनिहित दायित्व को लागू किया गया है। जो कि आपराधिक न्याय प्रशासन में एक नवीन संकल्पना है।

सन्दर्भ सूची –

1. डॉ0 ना0वि0 परांजये; लोकहितवाद, विधिक सहायता एवं सेवाएं लोक अदालतें तथा पैरा लीगल सेवाएं, सेण्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद, तृतीय संस्करण,(2016),पेज–125
2. (1992) 1 एस0सी0सी0 397
3. (1994) एस0सी0सी0 (क्रिम0) 1163
4. (1995) 1 एस0सी0सी0 14
5. (1996) 1 एस0सी0सी0 490
6. ए0आई0आर0 2000 सु0को0 988
7. ए0आई0आर0 1997 एस0सी0 3011
8. ए0आई0आर0 1999 एस0सी0 625

9. ए0आई0आर0 2013 एस0सी0 93
10. ए0आई0आर0 1997 एस0सी0 3011
11. ए0आई0आर0 1990 सु0को0 1412
12. 1990) 2 सप्ली0 एस0सी0सी0 151
13. ए0आई0आर0 1997 सु0को0 3048
E-Mail : aryasingh.du@gmail.com Mob. No. +91-9628553784

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 25-29
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारतीय भाषाओं के संवर्धन में अवधी बोली का प्रदेय

पवन कुमार पाल, शोधार्थी (हिन्दी विभाग),
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला हिमाचल प्रदेश

शोध सार - भाषा संवाद या सम्प्रेषण का माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने विचारों, भावों और सूचनाओं का आदान-प्रदान करता है। मातृभाषा या क्षेत्रीय बोलियाँ किसी व्यक्ति की प्राथमिक भाषा होती है, सर्वप्रथम विचार व्यक्ति की मूल भाषा में ही आते हैं, विचारों की अभिव्यक्ति शब्दों के माध्यम से होती है। भाषा संस्कृतियों की वाहक होती हैं, कई बार व्यक्ति जब प्रवास या यात्रा करता है तो वह अपने साथ न केवल वहाँ की बोली बल्कि रीति-रिवाज तथा संस्कृति भी ले जाता है। भाषा और समाज का अन्योनाश्रित संबंध होता है अथार्त बिना समाज के भाषा का जन्म नहीं हो सकता है और न ही बिना भाषा के समाज का। अवधी भाषा में लोकमंगल की भवना का भाव छिपा होता है। यह भाव गोस्वामी तुलसीदास की इस पंक्ति से लगाया जा सकता है-
"परहित सरिस धर्म नहीं भाई ,पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।"
(रामचरितमानस - उत्तरकाण्ड)

बीज शब्द - अवधी, भाषा, बोली, साहित्य, हिंदी।

विषय वस्तु - अवधी बोली भी कभी भाषा हुआ करती थी। एक समय था जब हिंदी साहित्य का वृहत्तर समाज अपने आपको अवधी भाषा में रचने-बसने का पुरजोर प्रयास कर रहा था। मध्यकाल में अवधी भाषा अपने उत्कर्ष पर थी उसका एक अनुपम उदाहरण गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य 'रामचरितमानस' है। आज अवधी 'भाषा' न होकर वह मात्र एक क्षेत्र विशेष की बोली जाने वाली 'क्षेत्रीय भाषा' या महज 'बोली' बनकर रह गई है।

डॉ. हरदेव बाहरी ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी उद्‌भव,विकास और रूप' में अवधी बोली को पूर्वी खंड के पूर्वी हिन्दी के उपखंड में सम्मिलित तीन बोलियों(अवधी,बघेली,छत्तीसगढ़ी) में ही समाहित किया है।

अवधी मुख्यत: अवध के क्षेत्र में लोगों के द्वारा बोली जाती है। अवध अयोध्या का तद्भव रूप है। भारत एक भाषायी विविधता वाला सम्पन्न देश है, यहाँ अनेक भाषाओं के होने साथ-साथ

यहाँ की सांस्कृतिक विरासत या धरोहर अपने आप में अभिन्न है। यहाँ की भाषा या बोली के संबंध मे एक उक्ति कही जाती है -

"कोस-कोस पर बदले पानी
चार कोस में बानी।" (सामाजिक उक्ति)

कहने का तात्पर्य यह है कि भारत में यदि कोई व्यक्ति उत्तर से दक्षिण या पूर्व से पश्चिम की यात्रा करता है तो उसे भाषाओं में परिवर्तन आसानी से देखने को मिल जाता है।

भारतेन्दु का वह कथन भी सुनने को मिलता है जिसमें अपनी मातृभाषा या निजभाषा पर गर्व करने का बोध होता है -

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।"
"अंग्रेज़ी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन
पै निज भाषा ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।"

(मातृभाषा प्रेम पर दोहे- भारतेन्दु हरिश्चंद्र)

आजादी की लड़ाई के समय जनता में 'हिंदी भाषा' को लेकर जो एक प्रकार का उत्साह दिखाई पड़ रहा था उसके निर्माण में बोलियों की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। ये बोलियाँ एक विशेष भौगोलिक व क्षेत्रीय अस्मिता की अभिव्यक्ति हैं। बोलियों के बारे में हिंदी साहित्य के मूर्धन्य विद्वान महापंडित राहुल सांकृत्यायन कहते हैं- "बोली असल में धरती है उसके संबंध द्वारा ही साहित्यिक भाषा की जड़ धरती में खड़ी रहती है और उसे वहाँ से सर्वांगीण पुष्टि मिलती है।"

(राष्ट्रभाषा हिंदी पृष्ठ संख्या- ७८)

भारतीय भाषाविद डॉ भोलानाथ तिवारी का मानना है कि अवधी बोली के संकेत लगभग पहली शताब्दी से ही मिलने लगते हैं वह सोहगोरा, रूि म्मनदेई और खैरागढ़ के अभिलेखों से प्राप्त होते हैं।

अवधी का क्षेत्र विस्तार

अर्धमागधी (अपभ्रंश) के अंतर्गत 'पूर्वी हिंदी' उपभाषा में सन्निहित 'अवधी बोली' भारत के उत्तर प्रदेश नामक राज्य के लगभग १५ जिलों (इलाहाबाद,कानपुर,फतेहपुर, मिर्जापुर, प्रतापगढ़,सहारनपुर,सीतापुर,उन्नाव, जौनपुर,रायबरेली,फैजाबाद,गोंडा,बहराइच तथा लखनऊ) में बोली जाती है। अवधी बोलने वालों कि संख्या इन जिलों में लगभग १ करोड़ ६० लाख है। भारत के अलावा दूसरे राष्ट्रों में जैसे नेपाल,फ़िजी,गुयाना,त्रिनिदाद मॉरिशस एवं दुबई में अवधी बोली जाती है।

अवधी बोली के विकास को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(क) प्रारंभ से १४०० ई० तक - आदिकाल

(ख) १४०० ई० - १७०० ई० तक - मध्यकाल

(मध्यकाल में पुरानी अवधी या इसी को साहित्यिक अवधी कहा जाता था जो अवधी का परिमार्जित रूप थी इस समय बोली जाती थी इसके उदाहरण 'प्राकृत पैंगलम' व 'रामचरितमानस' हैं।)

(ग) १७०० ई० से आज तक - आधुनिक अवधी

महाजनपद काल जो मुख्यतः छठवीं शताब्दी में जैन व बौद्ध धर्म के उत्कर्ष का काल था उस समय अवध के क्षेत्र को 'कोसल प्रदेश' के नाम से जाना था जो दो भागों में बँटा था -

१ अवध / अयोध्या क्षेत्र

२ छत्तीसगढ़ और मध्यप्रदेश - यहाँ पर अवधी बोली के कोसली व बाँसवाडी बोलने वाले लोगों का चलन था।

अवधी भाषा की साहित्यिक विकास यात्रा

हिंदी भाषा में अवधी साहित्य की एक लंबी परंपरा रही है। हिंदी भाषा क्षेत्र के एक बहुत बड़े वर्ग की वैचारिक व सांस्कृतिक धरोहर के रूप में अवधी साहित्य को विश्व में जाना जाता था। अवधी का प्रथम उल्लेख अमीर खुसरो के 'नुहसिपर' में मिलता है।

(अवधी ग्रंथावली खंड-१,१२५३ ई० -१३२५ ई०)

इसके अतिरिक्त अवधी का पहला प्रयोग ११वीं शताब्दी में रोडा कृत 'राउलबेल' में मिलता है। दूसरा प्रयोग पंडित दामोदर द्वारा रचित 'उक्ति-व्यक्ति प्रकरण' में युगों-युगों से पौराणिक ग्रंथ व लोक गाथा गाई जा रही थी। आचार्य हेमचन्द्र ने अपने 'प्राकृत व्याकरण' में प्राचीन अवधी के कुछ उदाहरण दिए हैं-

जसु केरअ हुँकारूएं

जीवहिं मज्झे एझ

केही तणेण । (हिन्दी उद्भव,विकास और रूप- डॉ. हरदेव बाहरी पेज-६७)

इसी तरह 'प्रकृतपैंगलम' में भी प्राचीन अवधी का एक छंद उद्धृत है-

पंडव बंसहि जम्म धरीजै। सम्पन्न अजिअ धम्मक बिज्जै॥

सोउ जुहुठिर संकट पावा। देबक लिि‍क्खअ केण मेटवा॥

(हिन्दी उद्भव,विकास और रूप- डॉ. हरदेव बाहरी पेज-६७)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ में भक्तिकाल के अंतर्गत सूफी काव्यधारा व रामभक्ति काव्यधारा में रचनाएं अवधी में रचीं गईं हैं। यदि हम सूफी काव्याधरा के अंतर्गत अवधी में रचित रचनाओं के उदाहरण देखें तो मुल्लादाउद की 'चंदायन', कुतबन की 'मृगावती'(१५०३ ई०) हैं । प्रेमख्यानक कवियों में सबसे अधिक प्रसिद्धि मलिक मोहम्मद जायसी कि रचना 'पद्मावत' को मिली। पद्मावत में ठेठ अवधी का प्रयोग मिलता है। उस्मान की 'चित्रावली', शेखनवी की 'ज्ञानदीप', कासिमशाह की 'हंस-जवाहिर' एवं गोस्वामी तुलसीदास द्वारा

रचित ‘रामचरितमानस’, ‘विनय पत्रिका’, ‘कवितवाली’ व ‘गीतावली’ सभी रचनाएं अवधी में रचीं गईं है।

(हिंदी साहित्य का इतिहास - रामचंद्र शुक्ल)

डॉ. हरदेव बाहरी ने अवधी का प्रथम ज्ञात काव्य मुल्लादाऊद कृत ‘लोरकहा’ या ‘चंदायन’(१३७० ई.) को माना है। तदोपरांत लालचदास का ‘हरिचरित’, सूराजदास का ‘रामजन्म’, ईश्वरदास की ‘सत्यवती-कथा’, अंगपैज, कुतुबन का ‘मृगावती’ तथा मालिक मोहम्मद जायसी के ‘पद्मावत’, ‘अखरावट’ आदि ग्रंथ हैं।

(हिन्दी उद्भव,विकास और रूप- डॉ. हरदेव बाहरी)

अवधी में ध्वनियाँ

अवधी में कुछ अंतर के साथ सभी ध्वनियाँ मिलती हैं जैसे-

‘ण’ को ‘न’ - (गणपति को गनपति उच्चारित करते हैं।)

‘म’ को ‘व’ - (नाम को नाव उदाहरण- तोहार का नाव हो ?)

‘व’ को ‘ब’ - (वर्षा को बरसा उदाहरण- का बरसा जब कृषि सुखाने)

‘य’ को ‘व’ - (गया को गवा उदाहरण- जौंन आए रहैं चले गवा)

‘ज’ और ‘श’ को ‘स’ - (मर्यादा को मरजादा)

(आशिक को आसिक)

‘श’ को ‘स’ भी पढ़ते हैं- शीतल को सीतल

उदाहरण- **सीतल निसित बहसि बर धारा। कह सीता हरु मम दुख भारा॥**

(तुलसीदास कृत रामचरितमानस का पाँचवाँ सोपान ९-१० दोहे के बीच की चौपाई)

अवधी भाषा में ध्वनियों के बदलने का कोई तय नियम नहीं है।

अवधी में शब्दावली का प्रयोग

कई बार विदेशी शब्दों को भी इसी तरह प्रवाह में लाने के लिए ‘ईया’, ‘वइवा’ प्रत्यय लगाने से प्रवृत्ति सपष्ट हो जाती है उदाहरण के लिए ‘किताब’ एक विदेशी शब्द है इसी को यदि अवधी मे कहें तो यह ‘कितबिया’ और ‘स्कूल’ को ‘स्कूलवा’ हो जाता है।

अवधी में उकारांतता की प्रवृत्ति होती है- कहतु,चलु, दिनु आदि।

‘ऐ’ एवं ‘औ’ का उच्चारण के रूपों में ‘अइ’ और ‘अउ’ हो जाता है।

एक उदाहरण से बात स्पष्ट करें तो ‘ऐसा’ को ‘अइसा’ कहते हैं-

१. (ऐसा है हमसे ठीक से बात कीजिए को अवधी में ‘अइसा है मनौ मोहिसे मेनय म बोलेव’ कहेंगे।)

२. और को ‘अउर’ (अउर का हालचाल है, गुरु?)

अवधी का प्रयोग भाषा में ठहराव व लचीलापन व्यक्त करता है।

निष्कर्ष

अवधी मध्यकाल में जनमानस के मनोविज्ञान की भाषा रही है परंतु १९वीं शताब्दी के इस बदलते दौर में महज एक बोली के रूप में सीमित होकर रह गई है। आज जीवन की तमाम जटिलताओं व उलझनों की अभिव्यक्ति के लिए अवधी का प्रयोग उस तरह से नहीं हो पा रहा है जिस तरह से हिंदी खड़ी बोली का ।

अवधी यदि राम की अभिव्यक्ति करने में सक्षम है तो निश्चित ही किसी अन्य भाषा या बोली से कम नहीं है। जिस भाषा ने 'रामचरितमानस' जैसा विश्वस्तरीय महाकाव्य दिए हों, उस भाषा को सिर्फ काव्यभाषा तक सीमित रह जाने की अपनी सीमाएं रही होंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. हिंदी साहित्य का इतिहास - रामचंद्र शुक्ल (प्रयाग पुस्तक सदन २१, यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद, संस्करण- २०१५)
२. राष्ट्र भाषा हिंदी - राहुल सांकृत्यायन
३. गवेषणा पत्रिका में लेख - संगीता केशरी (केन्द्रीय हिंदी संस्थान,आगरा अंक-१२५ जुलाई-सितंबर,२०२१)
४. हिंदी,उद्भव,विकास और रूप- डॉ हरदेव बाहरी
५. हिंदी भाषा- डॉ भोलानाथ तिवारी (किताब महल, इलाहाबाद)

ई-मेल:palpawankumar66@gmail.com

फोन नं: 7905348714

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. :30-36
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

साङ्ख्यदर्शनसंक्षिप्तपरिचयः

Dr R BHARANIDHARAN, Assistant Professor, Department of Sanskrit,
Swami Dayananda College of Arts & Science, Manjakkudi, Tiruvarur District, Tamilnadu.

साङ्ख्यदर्शने शब्दद्वयं वर्तते। साङ्ख्यम् एवं दर्शनम् इति। साङ्ख्यशब्दः सम् इति उपसर्गात् परं ख्या प्रकथने इति धातोः निष्पन्नोऽयम्। तदर्थो भवति सम्यक् रूपेण कथनं वा सम्यक् रूपेण विचारणम् वा सम्यक् रूपेण ज्ञानप्राप्तिः च। एवं साङ्ख्यशब्दस्य द्वितीयमर्थं वदति यत् प्रकृतिपुरुषयोः विवेकज्ञानं सांसारिकबन्धनात् मुक्तिं प्राप्य मोक्षस्य कारणं भवति।

दर्शनशब्दस्य अर्थः भवति यत् ज्ञानम्, आत्मज्ञानं, परमात्मदर्शनज्ञानं, सम्यक्ज्ञानं वा सम्यग्विचारः येन दर्शनार्थकः अर्थात् प्रत्यक्षात्मकः, ज्ञानार्थकः दृश् धातोः उपरि ल्युट् इति प्रत्ययेन सम्पन्नोऽयं शब्दः। अनेन विचार्यते वा सम्यग्रूपेण दृश्यते वा यथार्थरूपेण दृश्यते, सात्त्विकज्ञानप्राप्यते तथा येन सांसारिकबन्धनात् आबद्धव्यक्तिः मुक्तो भवति।

ज्ञानादृते न मुक्तिः।[12] **तमेव विदित्वातिऽमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।।**[3]

सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि।[4] अपि तु

ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति।[5]

उपर्युक्तश्रुतिस्मृतवाक्ययोः आधारे यत् स्पष्टं भवति तत् ज्ञानात् अज्ञानस्य तथा मिथ्याज्ञानस्य निवृत्तिः स्वाभाविका अस्ति। साङ्ख्यशास्त्रम् एकं व्यावहारिकं शास्त्रं भवति। यस्य व्यावहारिकदृष्ट्या न्यायवैशेषिकस्य समानमस्ति। अयं गतिशीलः जगति सुखदुःखमोहैः सह समन्वयोऽस्ति। अतः कारणगुणाः कार्यगुणानारभन्ते इति न्यायेन त्रिगुणजगदात्मकस्य कार्यस्य त्रिगुणात्मकमेव कारणं भवति। अस्य दृष्टिकोणस्य आधारे महामुनिः कपिलः प्रधानापरपर्यायभूतप्रकृतिरेव स्थावरजङ्गमात्मकस्य जगतः एकमात्रं कारणमङ्गीकरोति। इयं प्रकृतिः सत्त्वरजोतमोगुणस्य स्वरूपा भवति। अत्र साङ्ख्यपुरुषः निर्गुणवान्नस्ति एवं सः पुष्करपलाशस्य समानः सर्वथा निर्लेपोऽस्ति।

एतस्यां परिस्थित्यां या शङ्का उपस्थिता भवति यत् यदा पुरुषः पुष्करपलाशवन्निर्लेपः निर्गुणः च अस्ति। तादृशस्य अन्यथासिद्धस्य साङ्ख्यपुरुषस्य अङ्गीकारेण कोऽर्थः कथञ्च भवति एवं कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथाकर्तुञ्च त्रिभ्यः पृथगस्ति।

अस्य समाधानं साङ्ख्यः एवं वदति यत् यथा **पुरोहितोऽयं राजा संवृत्तः** अर्थात् पुरोरितराज्ञः सन्निधाने निवसन् राज्ञः धनादिकं प्राप्य राजा इति कथयितुम् आरभते, तथैव चेतनपुरुषस्य छायायाः

कारणात् प्रकृतिरपि स्वचेतनं मन्यते। तदर्थं पुरुषनिष्ठचैतन्यस्य आधारे चेतनोऽहं करोमि इति प्रतीतिः प्रकृतौ एव भवति। अनेन कारणेन साङ्ख्यपुरुषस्य अङ्गीकरणमस्ति। एवमुच्यते यत् चे**तन्याभिमानान्यथानुपपत्त्या तत्कल्पनम्**[6] अर्थात् प्रकृतौ चैतन्याभिमानस्य अनुपपत्तिरेव भविष्यति, यदि पुरुषस्य अङ्गीकारः न भवति। एवं पुरुषस्य अभ्युपगमनितान्तम् आवश्यकमस्ति। अतः साङ्ख्यस्य लक्षणमस्ति सम्यग्दर्शनमिति। सङ्ख्यायते ति सङ्ख्या परविद्या, सम्यक्ज्ञानं, सम्यग्दर्शनं तत्प्रतिपादकं शास्त्रं साङ्ख्यदर्शनम्।

भगवान् कपिलः

भगवान् विष्णोः नाभेः जन्मप्राप्तचतुर्मुखब्रह्मणः प्रपौत्रः, स्वायम्भुवमनुशतरूपयोः दौहित्रः, कर्दमदेवहूत्योः पुत्रः, भगवतः आवेशावताररूपः अयं महामुनिकपिलः।

कपिलस्तत्वसङ्ख्याता भगवानात्ममायया।
जातः स्वयमजः साक्षादात्मप्रज्ञप्तये नृणाम्।।[7]
स्वायंभुवो मनुः पूर्वं ततः स्वारोचिषोऽभवत्।
उत्तमस्तामसाश्चैव रैवतश्चाक्षुषेति षट्।।[8,9]

चतर्दशमनुषु आद्यः अयं स्वायम्भुवो नाम मनुः। स्वपत्न्या शतरूपया सह कर्दमऋषिस्थानं स्वपुत्रीं देवहूतिं नीत्वा गतवान्। कर्दमऋषिः देवहूतिश्च तयोः विवाहः जातः। ताभ्याम् अस्य कपिलस्य जन्म अभवत्। अयं कपिलः भगवान् विष्णोः पूर्णावशेषयोः आवेशावतारः भवति। अतः अयमपि भगवानेव इतिकारणात् भगवान् कपिलः इति सर्वैः आहूतः। एवञ्च भागवते

तस्यां बहुतिथे काले भगवान् मधुसूदनः।
कार्दमं वीर्यमापन्नो जज्ञेऽग्निरिव दारुणि।।[10]

इत्यत्र ब्राह्ममहाकल्पारम्भेन साङ्ख्यशास्त्रस्य पुनर्जन्म बभूव इति सुस्पष्टं सिद्ध्यति।

पञ्चमः कपिलो नाम सिद्धेशः कालविप्लुतम्।
प्रोवाचासुरये साङ्ख्यतत्त्वग्रामविनिर्मणयम्।।[11]

अनेन सिद्धमस्ति यत् सदसद्विवेचनात्मकं निर्विशेषज्ञानमेव सम्यक्ज्ञानं यत् तदेव साङ्ख्यदर्शनमस्ति। कपिलमुनेः साङ्ख्यदर्शनस्य भगवान् श्रीकृष्णः स्वोपदिष्टायां गीतायामुल्लेखयति स्म। **एषा तेऽभिहिता साङ्ख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां श्रुणु।**[12]**, पुरा महामुनिः सिद्धः कपिलो विष्णुरीश्वरः। साक्षात् स्वयं हरिर्योऽसौ सिद्धानामुत्तमो मुनिः।।**[13]

आस्तिकनास्तिकत्वविचारः

भारतवर्षे दार्शनिकसम्प्रदायः प्रायः द्विधा भागेन विभक्तोऽस्ति आस्तिकः नास्तिकश्चेति। वेदप्रामाण्यस्य अभ्युपगन्तारः आस्तिकाः, तद्विपरीताः नास्तिकाः एव। वेदः प्रमाणमस्ति इति मतिः येषां ते आस्तिकाः, वेदः प्रमाणं नास्ति इति मतिः येषां ते नास्तिकाः इति व्युत्पत्तेः सिद्ध्यति। कपिलादिभिः वेदप्रामाण्याभ्युपगमात् आस्तिकाः, **त्रयो वेदस्य कर्तारः भण्डधूर्तनिशाचाराः। जर्फरी**

तुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचस्स्मृतम्।। इति चार्वाकादिभिः वेदप्रामाण्यानभ्युपगमात् नास्तिकाः इति दृश्यन्ते। तथा च उक्तम्

नास्ति वेदोदितो लोक इति येषां मतिः स्थिरा।

नास्तिकास्ते तथास्तीति मतिर्येषां त आस्तिकाः।

अवैदिकप्रमाणानां सिद्धान्तानां प्रदर्शकाः।

चार्वाकाद्याः षड्विधास्ते, ख्याता लोकेषु नास्तिकाः।।[14] इति।

अत एव **ईश्वरासिद्धेः** इति साङ्ख्यसूत्रे **नत्वीश्वराभावात्** इति तद्व्याख्यातृभिः उक्तिमिति दिक्। नास्तीश्वरः मतिः येषां ते नास्तिकाः इति लक्षणं यदि उच्यते कपिलादौ नास्तिकत्वं संभवत्येव। परन्तु इदं शास्त्रम् आस्तिकदर्शनेषु विद्यते। कथमिति चेत् - श्रुतिस्मृतीतिहासेषु पुराणे भारतादिके। साङ्ख्योक्तं दृश्यते स्पष्टम्।।[15] वेदज्ञानद्वारा मुक्तिप्रयासिना कपिलेन सगुणेश्वर अनङ्गीकारेऽपि नित्यवस्तुनिर्गुणसत्ताकपरमात्मनः स्वीकारादिदं साङ्ख्यशास्त्रम् आस्तिकदर्शनम्। **साङ्ख्या निरीश्वराः केचित् केचिदीश्वरदेवताः। सर्वेषामपि तेषां स्यात् तत्वानां पञ्चविंशतिः।।**[16]

साङ्ख्यमतानुसारं तत्त्वपरिचयः

साङ्ख्यशास्त्रे पञ्चविंशतितत्त्वानि सन्ति। संक्षिप्तरूपे चतुर्षु भागेषु अस्य समावेशः कृतः। प्रकृतिः, विकृतिः, प्रकृतिविकृतिः, अप्रकृतिविकृतिः चेति। अर्थात् कारणम्, कार्यम्, कारणकार्यम्, अकारणकार्यमिति।

साङ्ख्यः प्रकृतिरेव अस्य चराराचरविश्वस्य कारणमिति वदति। प्रकरोति स्वयति विश्वं या सा प्रकृतिः इति यौगिकव्युत्पत्तेः आधारे प्रकृतिः जगतः कर्त्री इति मन्यते। प्रकृतेः कार्यं भवति महत्, प्रकृतेः कारणं कोपि नास्ति अकारणत्वात् **प्रकृतिः** केवलं कारणमेव। महत्तत्वम् अहङ्कारतत्त्वादयः प्रकृतेः परिणामभूताः भवन्ति। ते विकृतयः कार्याणि सन्ति। अतः सम्पूर्णचराचरविश्वं प्रकृतेः विकृतस्वरूपं मन्यते एवं षोडशगणानेव विकृतेः स्वरूपमिति। अर्थात् आकाशादि पञ्चमहाभूतानि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाः, श्रोत्रादि पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि श्रोत्रत्वक्चक्षुजिह्वाप्राणाः, वागादि पञ्चकर्मेन्द्रियाणि वाक्पाणिपादपायूपस्थानि मनः केवलं **विकृतयः** सन्ति। यस्मात् पञ्चमहाभूतानि उत्पद्यन्ते तानि पञ्चतन्मात्राणि भवन्ति, यस्मात् ज्ञानकर्मेन्द्रियाणि च उत्पद्यन्ते सः अहङ्कारः भवति। महद्रूपतत्त्वम्, अहङ्काररूपतत्त्वम् एवं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धादिपञ्चतन्मात्ररूपतत्त्वञ्चेति एतानि सप्ततत्त्वानि प्रकृतिविकृतयः सन्ति। अर्थात् महतः अहङ्कारः जायते इत्यत्र महतः कारणं प्रकृतिः महतः कार्यम् अहङ्कारः इति। एवमेव शब्दतन्मात्रस्य कारणं भवति अहङ्कारः शब्दतन्मात्रस्य कार्यं भवति आकाशः इति क्रमेण सप्ततत्त्वस्य प्रत्येकस्य कारणमपि भवति कार्यमपि भवति। अतः एते सप्तपदार्थाः **प्रकृतिविकृतयः** इति वदन्ति। पुष्करपलाशवान् पुरुषः कस्मात् न जायते तस्मात् किमपि न जायते। अर्थात् पुरुषस्य कारणं नास्ति पुरुषस्य कार्यं नास्ति अतः **अप्रकृतिविकृति**र्भवति अयं पुरुषः। श्रीमद्भागवते एवं प्रतिपादितमस्ति यत्

पञ्चभिः पञ्चभिर्ब्रह्मन् चतुर्भिर्दशभिस्तथा।

एतच्चतुर्विंशकं गणं प्राधानिकं विदुः।।[17] इति।
चतुर्विंशतितत्त्वानि उक्तानि।

एतावानेव संख्यातो ब्रह्मणः सगुणस्य ह।
संनिवेशो मया प्रोक्तो यः कालः पञ्चविंशकः।।[18]

पञ्चविंशतितमं तत्त्वं भवति कालः इति। भगवान् शरीराभ्यन्तरे पुरुषरूपतः बाह्यतश्च कालरूपतः प्रतीयते।

अयमेव विषयः ईश्वरकृष्णेनापि प्रतिपादितः -

मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त।
षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरुषः।।[19]

इत्यत्र पुरुषः, मूलप्रकृतिः, महदादि सप्तपदार्थाः, ज्ञानकर्ममनभूतादि षोडशपदार्थाः एव पञ्चविंशतितत्त्वानि सन्ति।

जीवात्मस्थानीयपुरुषस्य बन्धनस्य मोक्षस्य च व्यवस्थायाः आधारमस्ति अर्थात् बन्धनग्रस्तोऽयं पुरुषः बन्धात् विनिर्मुक्तोऽयं पुरुषः इति। अतः जीवात्मस्वरूपः पुरुषः प्रत्येकशरीरे भिन्नः भिन्नः अस्ति। अनेनास्य नानात्वं स्पष्टं भवति। ईश्वरकृष्णेन रचितकारिकायां पुरुषस्य नानात्वं स्पष्टीकृतं वर्तते।

जननमरणकरणानां प्रतिनियमादयुगपत्प्रवृत्तेश्च।
पुरुषबहुत्वं सिद्धं त्रैगुण्यविपर्ययाच्चैव।।[20]

जन्मादिव्यवस्थातः पुरुषबहुत्वम्।[21] इति अनेन सूत्रेण पुरुषस्य नानात्वं स्पष्टं भवति। पुरुषबहुत्वविषये वाचस्मपतिमिश्रः एवं वदति स्वकृत्यां -**एकस्मिन् जायमाने सर्वे जायेरन्। एकस्मिन् म्रियमाणे सर्वे म्रियेरन्** इत्यनेन प्रकारेण सुखदुःखादीनां व्यवस्थाऽपि अव्यवस्थिता भविष्यति। अतः पुरुषस्य बहुत्वं तु अङ्गीकरणीयमेव एवं पुरुषः अकर्ता भवति। प्रकृतिरेव अस्य चराचरविश्वस्य कर्त्री भवति।

प्रश्नः उदेति यत् पुरुषस्य कारणत्वं यदि न सिद्ध्येत तर्हि तस्य आवश्यकता एव नास्ति। तत्त्वेषु अस्य स्थानं किमर्थं को वा लाभः इति। प्रश्नस्य उत्तरमेवमस्ति **चैतन्याभिमान अन्यथानुपपत्त्या पुरुषकल्पनम्**[22] इत्यनेन। अर्थात् **चेतनोऽहं करोमि** इत्यस्य न्यायस्य अनुसारेण प्रकृतौ चैतन्याभिमानस्य उपपत्तिरेव न संभवति यदि पुरुषस्य आङ्गीकरणेन।

पुरुषस्य अस्तित्वप्रमाणम्

अत्र एवं प्रश्नः उपस्थितः भवति यत् यदि पुरुषे कारणत्वं न सिद्ध्यति तस्मात् कार्यत्वं न सिद्ध्यति तर्हि तस्य अस्तित्वे प्रमाणं किमिति।

साङ्ख्यस्य उत्तरं कथितमस्ति यत् **चेतनोऽहं करोमी**ति। अनया प्रतीत्या अचेतनबुद्धौ चैतन्यधर्मस्य प्रतीतिर्भवति एवं चैतन्यविषयिणी प्रतीतिः बुद्धौ वास्तविकं नास्ति, तस्मिन् आरोपितमित्येव वक्तुं शक्यते। कथमिति चेत् यः धर्मः यस्मिन् न तिष्ठति कालान्तरे तस्य तस्मिन्

साक्षात्कारे आरोपितवान् इति वक्ष्यति। यथा पीतः शङ्खः इति प्रतीत्या शङ्खे पीतत्वं आरोपितमिति वक्ष्यते। यतः शङ्खे शुक्लत्वमस्तीति कारणात् पीतरूपं न दृश्यते। पाण्डुरोगस्य कारणादेव शङ्खे पीतत्वं वा पीतस्य आरोपं भवति। तच्च आरोपमपि प्रसिद्धधर्मस्य एव भवति न तु अप्रसिद्धस्य धर्मस्य। **दोषोऽप्रमायाः जनकः** इति न्यायेन आरोपस्य कारणं भवति। प्रधानम् एवं बुद्धितत्त्वादि सर्वेषु पदार्थेषु यदि जडत्वं सिद्धयति तर्हि चैतन्यधर्मस्य आश्रयः कदापि कथमपि न शक्य इति। अतः प्रकृतितत्त्वादिषु चैतन्यस्य आश्रयाभावात् अन्ततोगत्वा पुरुषस्यैव चैतन्यधर्मस्य आश्रयं वक्तव्यं स्यात्। तत्र पारिशेष्यात् व्यतिरेकी अनुमानप्रयोगेनैव सफलता भविषयति। पुरुषः चैतन्यधार्मिकः भवति, किमर्थमिति चेत् इतर चतुर्विंशतितत्त्वानि जडानि अतः तेषु चैतन्याश्रयाभावत्वमेव सिद्ध्यति। अतः कश्चन चैतन्यः आवश्यकः भवति स पुरुषः एव।

जगद्विचारः

भुवनज्ञानं सूर्यसंयमात् इत्यनेन सूत्रेण चतुर्दशानां भुवनानां उल्लेखः कृतः। संक्षेपे ऊर्ध्वरूपेण अधोरूपेण चतुर्दशभुवनानि द्विधारूपेण विभाजितानि सन्ति। भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः, सत्यञ्चेति एवं अतल वितल सुतल रसातल तलातल महातल पातालञ्चेति। मध्ये जम्बूद्वीपमस्ति, तस्मिन् मध्ये सुमेरुपर्वतमस्ति, तस् पूर्वपश्चिमादि चतसृषु दिक्षु मन्दरम्, गन्धमादनम्, विपुलम्, सुपार्श्व नामकः विष्टम्भपर्वताः सन्ति। सुमेरुपर्वतस्य दक्षिणभागे भारतवर्षः, हिमालयपर्वते किम्पुरुषः, हेमकूटपर्वते हरिवर्षः, निषधपर्वते विराजमानाः सन्ति। सुमेरुपर्वतस्य उत्तरभागे नीलपर्वतः, श्वेतपर्वतः, श्रृङ्गिपर्वतः, कुरवर्षः, हिरण्यवर्षः, रम्यकवर्षः स्वशोभया सर्वं शोभयति। सुमेरुपर्वतस्य पूर्वभागे गन्धमादनपर्वतः, माल्यवत्पर्वतः, भद्राश्वपर्वतः, केतुमालवर्षः शोभाधायकरूपे विद्यामानाः सन्ति। सुमेरुपर्वतस्य अधोभागे लक्ष्ययोजनपरिमितजम्बूद्वीपमस्ति, तत्सदृशं लवणसमुद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं शाखद्वीपमस्ति, तत्सदृशम् इक्षुरससमुद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं कुशद्वीपमस्ति, तत्सदृशं सुरासमुद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं क्रौञ्चद्वीपमस्ति, तत्सदृशं घृतसमद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं शाल्मलिद्वीपमस्ति, तत्सदृशं दधिसमुद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं प्लक्षद्वीपमस्ति, तत्सदृशं दुग्धसमुद्रमस्ति। तस्मात् द्विगुणं पुष्करद्वीपमस्ति, तत्सदृशं स्वदूदकसमुद्रमस्ति। एवं प्रकारेण लोकालोकपर्वतानां वेष्टनेन ब्रह्माण्डरूपेण चतुर्भ्यः दिग्भ्यः परितः इदं चराचरविश्वमस्ति। एतद्विश्वं सत्यमस्ति मिथ्यारूपं भवति। अयं विषयः शास्त्रसमीक्षतया ज्ञातव्योऽस्ति।

सत्कार्यवादः

साङ्ख्यमते कारणमेव कार्यरूपेण परिणमते। अतः कार्यकारणयोः अनन्यत्वं सत्यत्वञ्च सिद्ध्यति। यथा दुग्धमेव दधिरूपेण परिणमते चेदपि दधिदुग्धयोः आकारे भेदः भवति न तु स्वरूपे भिन्नः। एवं पीडनेन तिलेषु तैलस्य, अवघातेन धान्येषु तण्डुलानां, दोहनेन सौरभेयीषु पयसश्च च अभिव्यक्तेः परिदृश्यमानत्वात्। तदेव स्पष्टीक्रियते सदेव कार्यमुत्पत्तेः पूर्वं कारकरूपकम्। आविर्भावतिरोभावौ जन्मनाशावृदीरितौ।। एवम् अयं वादः इतरेभ्यः भिन्नः एव भवति। **असतः सज्जायते** सर्वे कार्यरूपा भावाः अभावकारणकाः, कार्यत्वात्, बीजनाशोत्तरोत्पन्नाङ्कुरादिवत् इति

शून्यकार्यवाद्भिन्नोऽयम्। कथमिति चेत् अङ्कुरः बीजावयवः इति कारणात् बीजे अङ्कुरस्य, अङ्कुरे बीजस्य च अभावः नास्तीति। **सतः असज्जायते** स्वोत्पत्तेः पूर्वं तत् कार्यं नासीदेव, पश्चात् कारणसामग्रीवशाद् उत्पद्यते इति असत्कार्यवादाद्भिन्नोऽयं वादः। **नासदुत्पादो नृशृङ्गवत्** इति कपिलसूत्रेण सिद्धमस्ति यत् कारणे असतः कार्यस्य कार्यसत्तया सह संबन्धस्य असंभवात्। **सतत्त्वतोऽन्यथाप्रथा विकार इत्युदीरितः। सतत्त्वतोऽन्यथाप्रथा विवर्त इत्युदाहृतः।।** इति कारणमेव कार्यस्वरूपेण भासते। अत्र कारणस्यैव सत्यत्वं न तु कार्यस्य। यथा शुक्तौ इदं रजतमित्यनेन विवर्तवादः प्रतिपाद्यते। तस्मादपि भिन्नः अयं सत्कार्यवादः। असति बाधे प्रत्यक्षसिद्धपदार्थस्य मिथ्यात्व असंभवात्। अर्थात् जगतः मिथ्यात्व असंभवात् विवर्तवादः असङ्गतः एव। **जगत्सत्यत्वम् अदुष्टकारणजन्यात्वाद् बाधकाभावात्** इति कपिलसूत्रेण खण्डितः। अतः एतन्मते सत्कार्यवादः एव सिद्धः।

असदकरणादुपादानकरणात् सर्वसंभवाभावात्।
शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्।।[23]

कारणानि क्रियासंबद्धानि कारकत्वात् अन्धकारकवत् इति स्पष्टीकृतः। एवं उत्पत्तेः पूर्वं कार्यं सदेव।

साङ्ख्यशास्त्रोद्देश्यम्

परमकारुणिकः भगवान् कपिलमूर्तिः नारायणोऽशेषश्रुतिन्यायोपबृंहितमिदं प्रणितं संसारदुःखपरिहारोपाय चिख्यापयिषया। चिकित्साशास्त्रे रोगः, रोगनिदानं, रोगनिराकरणं, तदुपायनिर्धारणञ्च चतुर्विषयाः सन्ति यथा तथा साङ्ख्यशास्त्रेऽपि दुःखम्, दुःखकारणम्, दुःखहानिः, तदुपायविज्ञानञ्चेति चतुर्विषयाः सन्ति। लौकिकोपायवत् अलौकिकयज्ञादिष्वपि दुःखक्षयं न संभवत्येव। अतः साङ्ख्यमुनिः कपिलः अस्य उपायं वदति स्म यत् प्रकृतेः पुरुषः भिन्नः, पुरुषाच्च प्रकृतिः भिन्ना इति विवेकज्ञानमेव अज्ञानबन्धनिवृत्तिद्वारा मोक्षस्य कारणं भवतीति एवं दुःखत्रयपरिहाराय इदमेव साधनमित्यपि प्रतिपादितम्।

मोक्षः

प्रकृतिवियोगो मोक्षः पुरुषस्यैवान्तरज्ञानात्।
मानत्रितयं च भवेत् प्रत्यक्षं लैङ्गिकं शाब्दम्।।[24]
ज्ञानेन मुक्तिं कपिलः, तत्त्वज्ञानमपेक्षते।[25]

सृष्टेः आरम्भे सर्वतः आद्यं प्रकतितः बुद्धिरेव उत्पद्यते। बुद्धेः महत्तत्वस्य उत्पत्तिः सिद्ध्यति। बुद्धौ एव सुखदुःखे तिष्ठतः। अस्याः व सुखदुःखयोः छाया पुरुषे पतति, ततः एव अयं पुरुषः आत्मा सुखदुःखवान् इति प्रतीयते। तेन संसारे बद्धोऽयं पुरुषः। यदा प्रकृतिपुरुषयोः विवेकज्ञानात् बुद्धेः नाशः भवति तदा एव तदीयसुखदुःखयोः छायायाः अपि नाशः जायते ततः आत्मा शुद्धः अवशिष्यते। तस्मात् अहं भिन्नोऽस्मीत्यनेन मोक्षः सिद्ध्यति।

सन्दर्भसूची

1. श्वेताश्वतरोपनिषद् 3.8

2. भगवद्गीता 4.36
3. भगवद्गीता 4.39
4. न्यायसिद्धान्तमुक्तावली
5. भागवतपुराणम् 3.25.1
6. भविष्यपुराणम् 4.2.36
7. स्कन्धपुराणम् 7.1.105.39
8. भागवतपुराणम् 3.24.6
9. भागवतपुराणम् 1.3.10
10. भगवद्गीता 2.39
11. कालिकापुराणम् 12.32.3
12. सर्वदर्शनसंग्रहः
13. सर्वदर्शनसंग्रहः 4
14. षड्दर्शनसमुच्चयः 2
15. भागवतपुराणम् 3.26.11
16. भागतवपुराणम् 3.26.15
17. साङ्ख्याकारिका 3
18. साङ्ख्यकारिका 18
19. साङ्ख्यसूत्रम्
20. न्यायसिद्धान्तमुक्तावली
21. हिरण्यकेशीयशाखा
22. साङ्ख्यकारिका 9
23. षड्दर्शनसमुच्चयः 10
24. सर्वसिद्धान्तसङ्ग्रहः 3

9543058948 bharani.iyengar@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 37-42
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

डॉ. अर्जुन तिवारी की भोजपुरी-साहित्येतिहास-दृष्टि

डॉ. सुरेश कुमार प्रजापति, असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग,
स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजीपुर (उ. प्र.)

शोध-सार : जिस प्रकार हिंदी साहित्येतिहास लेखन में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' लिखकर एक मौलिक इतिहास दृष्टि एवं मानदंड स्थापित किया वैसा भोजपुरी में तो नहीं हो सका किन्तु भोजपुरी साहित्येतिहास की यात्रा को रेखांकित करते हुए कई ग्रंथ लिखे गए जिनमें सुविख्यात भाषाविद डॉ. उदयनारायण तिवारी का 'भोजपुरी भाषा और साहित्य', लोक साहित्य के मर्मज्ञ डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय का 'भोजपुरी साहित्य का इतिहास', महेश्वराचार्य रचित 'भोजपुरी के काव्य साहित्य के इतिहास', डॉ. तैयब हुसैन 'पीड़ित' कृत 'भोजपुरी के संक्षिप्त इतिहास', श्री नागेन्द्र प्रसाद सिंह के 'भोजपुरी साहित्य के इतिहास', चन्द्रमा सिंह द्वारा 'भोजपुरी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास' आदि उल्लेखनीय हैं। इसी कड़ी में 'भोजपुरी साहित्य के इतिहास' डॉ. अर्जुन तिवारी द्वारा लिखित एक श्रेष्ठ साहित्येतिहास ग्रन्थ है। प्रस्तुत शोधपत्र में उल्लिखित ग्रंथ की समालोचना प्रस्तुत की गई है।

बीज-शब्द : भोजपुरी, साहित्येतिहास, लोकसाहित्य, भोजपुरी-साहित्य, अर्जुन तिवारी।

मूल शोधालेख

डॉ. अर्जुन तिवारी द्वारा लिखित 'भोजपुरी साहित्य के इतिहास' शीर्षक ग्रंथ भोजपुरी साहित्य के इतिहास को क्रमिक रूप से सहेजने वाला अत्यंत महनीय प्रयास है। इसका महत्त्व कई अर्थों में है-पहला, इसमें भोजपुरी का साहित्येतिहास भोजपुरी माध्यम में ही लिखा गया है। दूसरा, इसमें इतिहास का लेखन तर्कपूर्ण, प्रमाणों पर आधारित, वैज्ञानिक, सुव्यवस्थित एवं सुविस्तृत है। तीसरा, भोजपुरी में इस प्रकार के विवेचनात्मक ग्रन्थ की भारी कमी रही है जिसकी क्षतिपूर्ति इस ग्रंथ से होती है। भोजपुरी भाषा में लिखे जाने के कारण यह भोजपुरी साहित्य भण्डार को समृद्ध करता है। इस प्रकार, यह अपने ढंग की अनूठी कृति है ।

लेखक ने पुस्तक की भूमिका 'अगरासन' शीर्षक से लिखी है जिसमें ग्रन्थ की संक्षिप्त रूपरेखा को स्पष्ट कर दिया गया है। आरम्भ में लेखक ने भोजपुरी की महिमामयी सुभूमि को पौराणिक काल के ऋषि-महर्षियों, महापुरुषों, सन्त-महात्माओं से जोड़कर इसके गौरवशाली महत्त्व को

उद्घाटित किया है। साथ ही, स्पष्ट रूप से इस बात का समर्थन किया है कि भाषाओं का विकास उसकी लोक-बोलियों से हुआ है तथा हिंदी के विकास में भोजपुरी की बड़ी भूमिका रही है।

भोजपुरी का प्रयोग-क्षेत्र आज विस्तार प्राप्त कर चुका है। वह लोक-गीतों, लोक-संस्कारों या लोक-संस्कृति तक ही सीमित नहीं है, अपितु कम्प्यूटर, इंटरनेट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी अपनी पैठ बना चुका है। लेखक ने भोजपुरी की अद्भुत अभिव्यक्ति क्षमता पर प्रकाश डालते हुए, कई दुर्लभ विशेषताओं को प्रकट किया है जिस पर कदाचित् ही किसी का ध्यान गया होगा।

साहित्य का इतिहास कभी समाप्त नहीं होता। वह हर काल में अपने को जीवन्त रखता है क्योंकि नित नवीन साहित्य सृजित होते रहते हैं, उसका विकास सतत् रूप से होता है। वह एक विकसनशील विधा है। इसके लेखन की अनेक पद्धतियाँ प्रचलित रही हैं; यथा-वर्णानुक्रमी पद्धति, कालानुक्रमी पद्धति, वैज्ञानिक पद्धति, विधेयवादी पद्धति, समाजशास्त्रीय पद्धति आदि। इनमें विधेयवादी पद्धति सर्वाधिक उपयुक्त और सार्थक मानी जाती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' इसी पद्धति पर लिखा है। इसमें इतिहासकार साहित्य से जुड़े कई तथ्यात्मक आँकड़ों को एकत्र करता है। उन आँकड़ों का विश्लेषण कर वह तत्कालीन सामाजिक जीवन का अध्ययन करता है, फिर समाज और साहित्य में कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करता है। इसमें कालविभाजन का आधार युगीन परिस्थितियाँ और साहित्यिक प्रवृत्तियाँ होती हैं।

अधिकांश भोजपुरी साहित्य का इतिहास-लेखन हिंदी साहित्य के इतिहास-लेखन के बाद ही हुआ है। भोजपुरी साहित्येतिहास लेखन हिंदी साहित्येतिहास लेखन से बहुत हद तक प्रभावित रहा है। उसमें भी अधिक प्रभाव आचार्य शुक्ल का है। समीक्ष्य ग्रन्थ में भी कई स्थानों पर आचार्य शुक्ल का प्रभाव परिलक्षित होता है।

डॉ. तिवारी ने अपने साहित्येतिहास ग्रन्थ को कुल नौ अध्यायों में विभाजित किया है। प्रथम अध्याय-"अथातो भोजपुरी भाषा"; द्वितीय अध्याय-"इतिहास का ह"; तृतीय अध्याय-"काल विभाजन आ नामकरन"; चतुर्थ अध्याय-"प्रवर्तन (सिद्ध आ नाथ) काल"; पंचम अध्याय-"लोक गाथा काल"। षष्ठ अध्याय-"प्रबोधन (सन्त समागम) काल"; सप्तम अध्याय-"नवजागरन काल"; अष्टम-"प्रसार काल"; नवम अध्याय-"भोजपुरी आ संविधान के आठवीं अनुसूची।”

प्रथम अध्याय में लेखक ने भोजपुरियाजन के व्यक्त्वि की, उनके स्वभाव आदि की चर्चा की है। साथ ही, भोजपुरी के विविध रूप, भोजपुरी की उत्पत्ति, भोजपुरी के विस्तार, भोजपुरी के महत्त्व आदि की चर्चा की है।

वस्तुतः उक्त बातें भोजपुरी 'साहित्य' के इतिहास की नहीं, अपितु भोजपुरी 'भाषा' के इतिहास की हैं , जबकि ग्रन्थ का शीर्षक (भोजपुरी साहित्य के इतिहास) केवल 'साहित्य के इतिहास' का संकेतक है, 'भाषा के इतिहास' का नहीं। भाषा के इतिहास की चर्चा 'भूमिका' में ही या मुख्य अध्याय से हटकर कहीं और की जा सकती थी। इससे एक अध्याय अतिरिक्त ही बढ़ गया है।

दूसरे अध्याय में 'इतिहास क्या है ?' का उत्तर विचारपूर्वक दिया गया है।

इस ग्रन्थ में वास्तविक रूप से इतिहास लेखन का आरम्भ तीसरे अध्याय से हुआ है। यह अध्याय कालविभाजन और नामकरण का है। काल विभाजन से इतिहास को समझने में सुगमता होती है। अतः काल विभाजन आवश्यक है। काल विभाजन का कोई न कोई आधार होता है। लेखक ने काल-विभाजन के आधार को स्पष्ट करते हुए कहा है कि काल-विभाजन कर्त्ता, कृति, विषय, रस, स्थान, शासक, प्रवृत्ति के आधार पर होता है। इस ग्रन्थ का काल-विभाजन प्रवृत्ति-आधृत है।

काल-विभाजन और नामकरण को लेकर लेखक का मंतव्य बहुत साफ़ है। उन्होंने विभिन्न साहित्येतिहासकारों के काल-विभाजन के प्रति अपनी सहमति-असहमति तर्क व वैज्ञानिकता के आधार पर प्रकट की है। कुछ साहित्येतिहासकारों ने हिंदी की देखा-देखी एक काल (लोक गाथा काल) का नाम 'चारण काल' रखा, किसी ने 'पँवारा काल' कहा, इन दोनों ही नामों पर लेखक ने स-तर्क आपत्ति की है और इसे भोजपुरी के चरित्र को दूषित करने वाला बताया है । उनका कहना है-"चारण आ पँवारा के रूप में लोकगाथा के लिखल उचित नइखे बुझात काहे कि अइसन शब्दावली देके अपना भोजपुरी के चरित्र के दूषित कइल उचित नइखे ।"[1]

स्पष्ट है कि भोजपुरी काव्य प्रायः राजस्थानी दरबारी-संस्कृति के समान राजदरबार से निःसृत नहीं था। डॉ. तिवारी 'लोकगाथा काल' के प्रकरण में पुनः लिखते हैं-"अपना भोजपुरी साहित्य के एह काल के कुछ इतिहासकार लोग 'चारण काल', 'पँवारा काल' कहले बा। आपन भाषा, आपन जवार में कहीं भी इचिकियो भर दरबारी संस्कृति आ पँवारा गावल संस्कृति नइखे।...चापलूसी आ ठकुरसुहाती से भोजपुर इलाका बहुत दूर रहेला...हम कब चारण रहनीं, हमार साहित्य कब राग-दरबारी गावे लागल?"[2]

अतः यदि भोजपुरी में शुरुआती काल का नाम चारणकाल या पँवाराकाल रखा जाए तो यह भोजपुरी प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं होगा। उसी प्रकार, रीतिकाल जैसी स्थिति भोजपुरी साहित्येतिहास में नहीं बनती, फिर भी यदि भोजपुरी साहित्य के किसी काल का नाम 'रीतिकाल' रखा जाता है तो यह तर्कसंगत नहीं है ।

डॉ. अर्जुन तिवारी ने उपर्यक्त तथ्यों पर बहुत सोच-विचार करने के बाद अपना अभिमत प्रस्तुत किया है। उन्होंने तर्क पर आधारित काल-विभाजन किया है।

सप्तम अध्याय-नवजागरन काल में लेखक ने स्वाधीनता संग्राम में लोकवीरों व साहित्यकारों की भागीदारी के विषय में ऐसी खोजपूर्ण बातें उद्घाटित की हैं, जिसे पहले किसी ने नहीं की; जैसे-'आजादी आ पाँच फौजी जवान', 'फूलेना प्रसाद आ पन्दरह शहीद' आदि शीर्षकों पर लेखन उल्लेखनीय है। इसी के साथ 'गिरमिटिया मजदूर और भोजपुरी' पर भी बहुत सारगर्भित लेखन किया गया है।

भोजपुरी में गद्य विधाओं का आविर्भाव एक बड़ी घटना थी। यद्यपि भोजपुरी में गद्य लेखन की शुरुआत स्वतंत्रता से पहले हो चुकी थी, तथापि स्वतंत्रता के बाद लगातार इसमें

नाटक, निबन्ध, कहानी, उपन्यास लिखे जाने लगे। इन विधाओं के क्रमिक विकास को लेखक ने बड़े ही सहज ढंग से हमारे समक्ष रखा है। ख़ास बात यह है कि भोजपुरी फिल्मों की भी चर्चा इसमें हो गई है ।

1975 ई. के बाद भोजपुरी ने जो साहित्यिक गति पकड़ी वह अद्वितीय थी। भोजपुरी साहित्य का जो प्रचार-प्रसार इसके बाद हुआ वह पहले नहीं हुआ था। इसी आधार पर लेखक ने 1975 ई. से अबतक के कालखण्ड को 'प्रसार काल' कहा है। इस कालखण्ड में काव्य के साथ-साथ गद्य का लेखन प्रचुरता से हुआ जो नैरन्तर्य बनाए हुए है। इस ग्रन्थ में इस समय तक की साहित्यिक गतिविधियों की जानकारी देकर भोजपुरी के साहित्येतिहास को विस्तृत कर दिया है। यह अद्यतन इतिहास ग्रन्थ है जो भोजपुरी साहित्य में अभिरुचि रखने वालों के लिए आह्लादकारी और शोधार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी है ।

ग्रन्थ में कुछ ऐसी बातें भी हैं जो आलोच्य हैं; यथा-

(1) लेखक ने भोजपुरी के प्रथम कवि को लेकर संशय उत्पन्न कर दिया है। उन्होंने एक ओर लिखा है -

"सातवीं शताब्दी के 'ईसानचन्द्र जी' आ 'बेनीभारत' (बर्नकबी) भोजपुरिये भाषा में आपन रचना कइले रहलें । सम्राट हर्षवर्द्धन (सन् 606-648 ई०) के समय के महाकवि बाणभट्ट अपना 'हर्षचरित' में ई दूनों कवियन के 'संस्कृत' आ 'प्राकृत' से फरका, ओह समय के गाँव-गँवई के बोली के कवि लिखले बाड़ें ।"[3]

दूसरी जगह घोषित किया कि-"भोजपुरी के पहिलका कवि सरहपा रहनीं।"[4]

अब सिद्ध सरहपा के समय पर गौर करें तो लेखक स्वयं लिखते हैं -"ई लोग के समय यद्यपि विवाद के विषय बा, बाकिर 800-1200 ई० के बीच ई लोग के अस्तित्व में कवनों शंका नईखे ।"[5]

विरोधाभास स्पष्ट है। लेखक के अनुसार ईसानचन्द्र या बेनीभारत कवि ने सातवीं शताब्दी में ही भोजपुरी में रचना की इस हिसाब से वे पहले कवि होने चाहिए, किन्तु वे पहले कवि नहीं हुए जबकि सरहपा ने नौवीं शताब्दी में लिखा फिर भी पहले कवि हो गए। यह कैसे सम्भव है?

यदि मान भी लें कि सरहपा भोजपुरी के पहले कवि हैं तो उनकी कौन-सी रचना भोजपुरी में है, इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं है। एक दोहा अवश्य प्रचलित है, किन्तु वह भोजपुरी के कितना निकट है?

जह मन पवन न संचरइ, रवि ससि नाहि पवेस।
तहि बट चित्त बिसाम करु, सरहे कहिअ उवेस॥

इसी क्रम में यह तथ्य भी उजागर हो जाता है कि सभी सिद्धों या नाथों की भाषा (ग्रन्थ में दी गई रचनाओं के आधार पर) भोजपुरी के निकट नहीं है। फिर भी यदि सभी सिद्धों-नाथों को भोजपुरी का ही कवि कहा जाता है तो यह तनिक असंगत लगता है ।

(2) नवजागरण काल के समय को लेकर भी भ्रम की स्थिति हो गई है। सातवाँ अध्याय, 'नवजागरन काल' शीर्षक से है। उसमें समय 1757 ई० से 1974 ई० तक लिखा है। किन्तु लेखक नीचे लिखता है-"एही से सन् 1858 ई० से 1974 ई० के काल-खण्ड के नवजागरन के नाम से पुकारल उत्तम बा।"[6]

(3) विषय सूची में दस अध्याय हैं किन्तु पुस्तक के भीतर नौ-अध्याय में ही अध्याय संख्या लिखी गई है ।

(4) प्रथम अध्याय 'भाषा' के इतिहास को रेखांकित करता है , 'साहित्य' के इतिहास को नहीं। इस दृष्टि से देखा जाए तो ग्रन्थ का शीर्षक 'भोजपुरी साहित्य के इतिहास' से मेल नहीं खाता। इसमें भाषा का इतिहास भी है तो शीर्षक 'भोजपुरी भाषा आ साहित्य के इतिहास' उपयुक्त होता।

(5) ग्रन्थ का नौवाँ अध्याय 'भोजपुरी आ संविधान के आठवीं अनुसूची' का सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से भोजपुरी साहित्य के इतिहास से सम्बन्धित नहीं दिखायी देता। यह एक अलग प्रकरण है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि यह इतिहास ग्रन्थ वैज्ञानिक, प्रामाणिक, सुव्यवस्थित, सरस तथा सुविस्तृत है। भोजपुरी साहित्य का इतिहास लिखना कोई सहज कार्य नहीं है क्योंकि न तो अभी इतनी पुस्तकें उपलब्ध हैं, न इसके लिखित साहित्य की अधिक खोज हुई है, न इसका कोई बड़ा संग्रहालय या पुस्तकालय है। फिर भी लेखक ने दुर्लभ सामग्री संकलित कर जो कार्य किया है वह प्रशंसनीय है। यह अभी तक के सम्पूर्ण भोजपुरी साहित्येतिहास ग्रन्थों में सर्वोच्च स्थान पर है। इसने भोजपुरी के साहित्यिक-भंडार में श्रीवृद्धि की है। यह भोजपुरी साहित्येतिहास जगत में कालजयी ग्रन्थ है। लेखक ने भोजपुरी की अनमोल धरोहर को परिशिष्ट में सँजोकर स्तुत्य कार्य किया है। परिशिष्ट में संकलित The Bhojpuri National Anthem, भोजपुरी : बलिष्ट जाति के व्यावहारिक भाषा, वीर कुँवर सिंह खातिर इनाम के घोषणा, श्री हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत', रघुवीर नारायण की 'बटोहिया', प्राचार्य मनोरंजन प्रसाद सिन्हा की 'फिरंगिया', गुंजेश्वरी मिश्र 'सुजस' की 'लुटेरवा', अखिल भोजपुरी साहित्य सम्मेलन में बतौर सभापति महापण्डित राहुल सांकृत्यायन का भाषण, ये वे नायाब हीरे हैं जो भोजपुरी के विरासत हैं, जो संग्रहणीय और सँजोकर रखने योग्य हैं। लेखक ने परिशिष्ट में इन्हें स्थान देकर भोजपुरी साहित्य प्रेमियों को कृतार्थ किया है।

सन्दर्भ-ग्रंथ

1. तिवारी, अर्जुन, 'भोजपुरी साहित्य के इतिहास', विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2014 ई., पृ. xviii

2. वही, पृ. 38
3. वही, पृ. 35
4. वही, पृ. 51
5. वही, पृ. 49
6. वही, पृ. 124

मोबाइल नं. 7905375148 ई-मेल : sureshhindizna@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 43-46
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

भारतीय संस्कृति में राम की महिमा

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर, सहा. प्रा. हिन्दी,
शा. काकतीय स्नातकोत्तर महा. जगदलपुर, जिला–बस्तर (छ.ग.)

सारांश :–

भारतीय संस्कृति में भगवान राम का महिमा अत्यधिक महत्वपूर्ण है। राम भारतीय समाज में मर्यादा, आदर्श, और न्याय के प्रतीक माने जाते हैं। उनके जीवन और चरित्र को रामायण में वर्णित किया गया है, जिसमें वे एक आदर्श पुत्र, भाई, पति, और राजा के रूप में प्रतिष्ठित हैं। राम के जीवन की हर घटना हमें धर्म, सत्य, और कर्तव्य का पालन सिखाती है। राम का चरित्र भारतीय संस्कृति के हर पहलू में रचा–बसा है। वे केवल ईश्वर के अवतार ही नहीं, बल्कि मानवता के आदर्श भी हैं, जिन्होंने कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी अपने सिद्धांतों का पालन किया। राम का जीवन एक ऐसा पथ है जो समाज को संयम, धैर्य और सहनशीलता की प्रेरणा देता है। उनके संघर्षों और त्याग का महत्व भारतीय संस्कृति में इस कदर व्याप्त है कि रामराज्य को आदर्श राज्य का प्रतीक माना जाता है, जहाँ सभी के साथ न्याय होता है और प्रत्येक नागरिक सुख–शांति का अनुभव करता है। इस प्रकार, भारतीय संस्कृति में भगवान राम का महिमा आदर्श जीवन का प्रतीक है, जो हमें अपने जीवन में सत्य और धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है।

मुख्य शब्द :– भारतीय संस्कृति, भगवान राम, सुख–शांति, आदर्श, धर्म, कर्तव्य पालन, मानवता, सहनशीलता, संघर्ष और त्याग।

प्रस्तावना :–

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है और इसे भारत देश के मस्तक का मुकुट कहा गया है। यह भारतीय जनमानस की एक अमूल्य निधि है, जो भारत की माटी का गौरव और उसके ऐतिहासिक विकास की अभिव्यक्ति है। भारतीय संस्कृति के विभिन्न आयामों धर्म, दर्शन, साहित्य, संगीत में एक ऐसा महान व्यक्तित्व है, जिसके स्मरण मात्र से हमारे अंतस में जिजीविषा, धैर्य और साहस का प्रस्फुटन होता है; वह हमें जीवनदायी शक्ति से भर देता है। यह महान नाम है राम का, जिनका व्यक्तित्व न केवल भारतीय संस्कृति का आधार है बल्कि जीवन के हर पहलू में मानवता का मार्गदर्शक भी है।

भारतीय समाज और संस्कृति में भगवान श्रीराम का चरित्र एक आदर्श का प्रतीक है, जो सदाचार और मर्यादा का पथ दिखाता है। राम का जीवन संघर्ष और त्याग का ऐसा उदाहरण है, जो समाज को उच्च आदर्शों की शिक्षा देता है। उनकी जीवन गाथा न केवल व्यक्तिगत गुणों, बल्कि सामाजिक व्यवस्था के लिए भी प्रेरणास्त्रोत है। समाज में अच्छाई–बुराई, असत्य–सत्य, और देवत्व तथा आसुरी वृत्तियों का संघर्ष सदियों से चलता आ रहा है। रामकथा इस शाश्वत संघर्ष में विजय प्राप्त करने का मार्ग दिखाती है, जहाँ मर्यादा, त्याग, और तपस्या ही मानवता को ऊँचाइयों पर ले जाने का साधन बनती है।

वैदिक युग में 'राम' का नाम मात्र संकेत के रूप में ही पाया जाता है, लेकिन पौराणिक युग में राम का चरित्र भारतीय संस्कृति में इतना गहराई से व्याप्त हो जाता है कि दोनों एक–दूसरे के पूरक प्रतीत होते हैं। राम का उज्ज्वल चरित्र और उनके आदर्श भारतीय जनमानस में इतने घुल–मिल गए हैं कि उनकी कथा की सुगंध भारत की सीमाओं को पार करके विदेशों तक पहुँचने लगी। भारतीय संस्कृति और साहित्य में राम

का स्थान सर्वोपरि है, और रामकथा की परंपरा को देखकर यह कहा जा सकता है कि राम का व्यक्तित्व न केवल भारत में बल्कि विभिन्न देशों, संस्कृतियों, और साहित्य में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

राम का चरित्र भारतीय संस्कृति के आदर्शों का मूर्त रूप है। अयोध्या के राजा दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र राम को विद्वानों ने 'मर्यादा पुरुषोत्तम' की संज्ञा दी है। वाल्मीकि रामायण और पुराणों में राम के शील, पराक्रम और कर्तव्यपालन का चित्रण किया गया है, जिससे वे भारतीय समाज में पूजनीय बन गए। उनके जीवन में स्नेह, सेवा, और त्याग की भावना प्रमुख रूप से दृष्टिगत होती है, और उनके इन आदर्शों का महत्व आज भी संपूर्ण भारत में बरकरार है। राम भारतीय जीवन दर्शन, संस्कृति, और लोक विश्वास के प्रतीक हैं, जो समाज को संयम, साहस, और सत्य के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देते हैं।

राम भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं और नैतिक मूल्यों के प्राण हैं। उनके जीवन और आदर्शों में मानवता के सच्चे सिद्धांत निहित हैं। वे मानवता के अधिष्ठाता के रूप में पूजनीय हैं, जिनका जीवन संयम, मर्यादा और कर्तव्यपरायणता की अद्वितीय मिसाल है। वास्तविक अर्थ में राम ही भारतीय संस्कृति का समग्र सार हैं। राम के गुणों और उनके आदर्शों में भारतीय संस्कृति की हर भावना और सिद्धांत संजोया हुआ है। राम का चरित्र हमें बताता है कि जीवन में कैसे संयमित रहना चाहिए, अपने कर्तव्यों का निर्वाह कैसे करना चाहिए और मानवता का सम्मान कैसे करना चाहिए। उनके आदर्श हमें संयमित जीवन जीने की प्रेरणा देते हैं और समाज में आदर्श आचरण का महत्व स्थापित करते हैं।

राम भारतीय संस्कृति के सूर्य हैं। उनकी उपस्थिति और उनके आदर्शों की रश्मि ने संपूर्ण राष्ट्र को आलोकित किया है और जीवन के सभी क्षेत्रों को दिशा और ऊर्जा प्रदान की है। राम का चरित्र एक ऐसा पथ प्रदर्शक है, जो हमें जीवन में आगे बढ़ने की राह दिखाता है और कठिनाइयों में सहनशीलता, धैर्य और साहस का संबल देता है। उनके सिद्धांत और उनके जीवन की कहानियाँ हमें न केवल सांस्कृतिक दृष्टि से बल्कि व्यक्तिगत और सामाजिक दृष्टि से भी प्रेरित करती हैं। राम का चरित्र एक ऐसा आदर्श है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी हमारे समाज में सद्गुणों का संचार करता है और हमें समाज में एक सकारात्मक बदलाव लाने की प्रेरणा देता है।

राम का अलौकिक और लौकिक दृष्टिकोण में समन्वय है। तुलसीदास ने अपने ग्रंथ रामचरितमानस में राम को एक ओर परमेश्वर का रूप माना है, तो दूसरी ओर वे उन्हें मानवीय गुणों से युक्त एक आदर्श व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं। तुलसी के राम अपने अलौकिक शक्तियों के साथ ही मानवीय रूप में भी दिखाई देते हैं। विद्वान प्रेमशंकरजी के मतानुसार राम ऐसे व्यक्ति हैं जो 'नाना विधि कर्म' करते हुए शील और मर्यादा का पालन करते हैं। उनकी जीवन लीलाओं में वे एक महान शासक और परमेश्वर हैं, परंतु अपनी विनम्रता और सहजता के कारण वे मनुष्य भी हैं। यही कारण है कि भारतीय जनमानस में राम के प्रति अगाध आस्था है, और उनकी पूजा किसी अलौकिक शक्ति के रूप में नहीं, बल्कि एक ऐसे आदर्श व्यक्ति के रूप में की जाती है, जो अपनी लीलाओं में मानवीय रूप में भी उपस्थित हैं।

राम की कथा और उनके आदर्शों ने भारतीय समाज को नैतिकता, कर्तव्यपालन और न्याय के आदर्शों से परिचित कराया है। राम भारतीय संस्कृति का ऐसा प्रकाश स्तंभ हैं, जो समाज को मर्यादा, संयम, और सद्गुणों के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। भारतीय जनमानस में राम के प्रति जो आस्था है, वह उनके चरित्र के लौकिक और अलौकिक समन्वय के कारण है। राम के आदर्शों का यह समन्वित रूप उन्हें भारतीय संस्कृति में सर्वकालिक और सार्वभौमिक प्रतीक के रूप में स्थापित करता है।

इसीप्रकार वाल्मीकि रामायण में शिक्षा ''रामादिवत् प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्'' एक गहन नैतिक संदेश देती है। इसका अर्थ है कि व्यक्ति को जीवन में राम के आदर्शों का पालन करना चाहिए, न कि रावण के दुर्गुणों को अपनाना चाहिए। राम का जीवन हमें सिखाता है कि चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी कठिन क्यों न हों, व्यक्ति को अपने सिद्धांतों और मर्यादा का पालन करना चाहिए। दूसरी ओर, रावण का चरित्र यह बताता है कि अहंकार, अधर्म और दूसरों का अपमान अंततः विनाश का कारण बनते हैं। यह शिक्षा भारतीय समाज में गहरी जड़ें जमाए हुए है और इसे आत्मसात कर भारतीय जनमानस अपने जीवन को उच्च आदर्शों की ओर प्रेरित करता है।

राम के वनवास का निर्णय उनके व्यक्तिगत जीवन का एक महान उदाहरण है। सीता और लक्ष्मण ने अपने सुख और आराम को त्यागकर राम के साथ वन में रहने का निर्णय लिया। उन्होंने राजमहल के वैभव

को छोड़कर तपस्या और त्याग का मार्ग अपनाया। इसी प्रकार, भरत ने अयोध्या का राज्य मिलने के बावजूद अपने भाई राम के प्रति प्रेम, त्याग और निष्ठा का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने नंदीग्राम में तपस्वी जीवन जीते हुए केवल एक न्यासी के रूप में राज्य संचालन किया और राम की प्रतीक्षा में स्वयं को उनके चरणों में समर्पित कर दिया। यह प्रेम, त्याग, और कर्तव्य की भावना रामकथा का मूल है, जो भारतीय समाज में आदर्श जीवन का प्रतिमान बन गई है।

रामकथा के अन्य पात्र जैसे हनुमान, जिनकी निष्काम भक्ति; लक्ष्मण, जिनका समर्पण और सेवा भाव; उर्मिला का त्याग; और सीता का पातिव्रत धर्म सभी समाज में जीवन की उच्च मर्यादा और आदर्श प्रस्तुत करते हैं। हनुमान का समर्पण और भरत का सच्चा प्रेम रामकथा में ऐसे चरित्र हैं जो हमें सिखाते हैं कि ईश्वर की भक्ति और मानवता के प्रति निस्वार्थ सेवा ही सच्ची भक्ति का मार्ग है। राम के प्रत्येक कार्य में उनके मानवीय और आध्यात्मिक गुण प्रकट होते हैं, जो मानव मात्र के लिए अनुकरणीय हैं।
श्रीराम का जीवन आज के समाज में सर्वाधिक प्रासंगिक है, जहाँ असंतोष, अहंकार और उच्छृंखलता का बोलबाला है। उनके चरित्र को अपनाकर समाज में शांति और संतोष का वातावरण स्थापित किया जा सकता है। माता–पिता और गुरुजनों के साथ व्यवहार, शबरी और केवट के साथ उनका आचरण, समाज में समानता और भाईचारे का संदेश देता है। उनके द्वारा अपनाया गया हर कदम समाज के लिए आदर्श प्रस्तुत करता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में रामराज्य की विस्तृत चर्चा की है, जहाँ राम अपने प्रजा और परिवार के प्रति अद्वितीय प्रेम और त्याग की भावना रखते हैं। राम के चरित्र में हमें भारतीय संस्कृति के आदर्श पारिवारिक और सामाजिक मूल्यों की झलक मिलती है। भवभूति द्वारा उल्लिखित श्लोक, "स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि, आराधनाय लोकस्य मुंचतो नास्ति मे व्यथा," से यह स्पष्ट होता है कि राम अपने कर्तव्यों के प्रति इतने समर्पित थे कि वे अपने सर्वस्व को त्यागने के लिए तैयार थे। यह भावना लोकहित के प्रति उनके गहरे प्रेम और त्याग को दर्शाती है, जो उन्हें भारतीय समाज में एक आदर्श स्थान प्रदान करता है।

राम के चरित्र में मानवीय गुणों की एक ऐसी समृद्धता है, जो उन्हें भारतीय समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत बनाती है। उनके कार्यों में दीनों, असहायों, संतों और धर्मप्रिय लोगों की रक्षा के लिए जो सेवा और त्याग दिखाया गया है, वह उन्हें भारतीय मानस में एक पवित्र स्थान पर आसीन कर देता है। तुलसीदास का उद्देश्य राम के ब्रह्मत्व से अधिक उनके मानवीय पक्ष को सामने लाना था। वे राम को "मर्यादा पुरुषोत्तम" के रूप में प्रस्तुत करते हैं, जो अपने संयम और आदर्श आचरण के कारण पूजनीय हैं।

राम का चरित्र इस तरह गढ़ा गया है कि वे जहाँ भी जाते हैं, वहाँ की सुंदरता और समृद्धि में वृद्धि हो जाती है। तुलसीदास के शब्दों में, जब ते आई रहे रघुनायक, तव ते भयउ वनु मंगलदायकु, यह पंक्ति राम के ब्रह्मत्व और उनके उपस्थिति मात्र से परिवेश में सकारात्मकता की वृद्धि को दर्शाती है। जंगल में फूलों का खिलना, मधुकरों का मंडराना और शीतल हवा का बहना यह दर्शाता है कि राम का चरित्र अपने परिवेश में मंगल और सौंदर्य की वर्षा करता है।

राम के चरित्र में मानवीयता का एक अंर्तमनः वेग दिखाई देता है। तुलसी ने अपने राम को लौकिक धरातल पर लाकर ऐसे अनेक भावनात्मक क्षण रचे हैं, जहाँ राम मानवीय संघर्षों और दुःखों का सामना करते हुए दिखाई देते हैं। सीता–वियोग में उनका विलाप करना, लक्ष्मण शक्ति के समय अकेलापन महसूस करना, पयोधि (समुद्र) के प्रति तीन दिन तक विनम्र प्रार्थना करना, और निषादराज तथा केवट जैसे निम्न वर्ग के लोगों को गले लगाना ये सभी घटनाएँ राम के मानवीय गुणों को दर्शाती हैं। तुलसीदास के राम ऐसे आदर्श पुरुष हैं जो सभी मानवीय गुणों से संपन्न हैं और मानवीय जीवन को सर्वोपरि मानते हैं।

रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में तुलसीदास ने राम के मुख से यह घोषणा कराई है कि मानव जीवन का उद्देश्य संसार के बंधनों से मुक्त होना है और यह एक अत्यंत दुर्लभ अवसर है। तुलसी के राम हमें यह सिखाते हैं कि मानवीय गुणों के पालन और साधना के माध्यम से ही जीवन को सार्थक बनाया जा सकता है। बड़े भाग मानुष तन पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा यह पंक्ति मानव जन्म के महत्व को रेखांकित करती है। इसी क्रम में, राम स्वयं कहते हैं, जो न तरे भव सागर, नर समाज अस पाई। इससे यह स्पष्ट

होता है कि राम के लिए मानवीय जीवन केवल साधना का एक माध्यम नहीं है, बल्कि उसे उन्नति और आदर्शों के माध्यम से संपूर्ण बनाने का अवसर है।

राम का चरित्र मानवीयता और आदर्शों का प्रतीक है। उनका जीवन हमें यह सिखाता है कि किस प्रकार संयम, सेवा, त्याग, और न्याय के माध्यम से जीवन को सफल बनाया जा सकता है। उनके आदर्श और जीवन मूल्य भारतीय समाज के लिए एक अनमोल धरोहर हैं, जो हमें न केवल नैतिकता का मार्ग दिखाते हैं बल्कि जीवन को ऊँचाई प्रदान करने की प्रेरणा भी देते हैं। राम के आदर्शों पर आधारित यह परंपरा भारतीय संस्कृति में सदैव जीवित रहेगी और आने वाली पीढ़ियों को भी मार्गदर्शन प्रदान करेगी।

इस प्रकार, भारतीय संस्कृति का सार राम के जीवन और आदर्शों में ही समाहित है। उनके आदर्श हमें याद दिलाते हैं कि हमें सत्य और धर्म के पथ पर चलना चाहिए, न्याय और सहनशीलता का पालन करना चाहिए, और जीवन के हर पल में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना चाहिए। राम के चरित्र में निहित मूल्य और गुण हमें सदैव प्रेरणा देते रहेंगे और भारतीय संस्कृति को समृद्ध बनाए रखेंगे।

उपसंहार –

भारतीय संस्कृति में गृहस्थ व्यवस्था का महत्व सर्वोपरि है, और श्रीराम इस व्यवस्था के आदर्श प्रतीक हैं। उन्होंने परिवार, समाज और राज्य के प्रति त्याग और कर्तव्य की भावना को सर्वोच्च स्थान दिया। उनके आदर्शों पर आधारित समाज में मर्यादाएं बंधी हैं, और ये मर्यादाएं समाज में अनुशासन, सेवा, और प्रेम का आधार बनती हैं। वाल्मीकि से लेकर तुलसीदास तक अनेक रचनाकारों ने राम के चरित्र को उजागर कर समाज में उनके आदर्शों को प्रकट किया है। रामकथा का प्रभाव केवल भारत में ही नहीं, बल्कि विश्वभर में फैला है और राम भारतीय संस्कृति के प्रतीक बन गए हैं। रामायण में मानवता और दानवता के बीच संघर्ष का उल्लेख है, जहाँ श्रीरामचरित्र मानवता के उच्च गुणों का प्रतीक है और रावणचरित्र अहंकार, दुष्टता और उच्छृंखलता का प्रतीक है। राम का जीवन इस सत्य का उद्घाटन करता है कि विनय और मर्यादा ही जीवन की सच्ची कसौटी हैं। जहाँ विनय से सुख, शांति और समाज का कल्याण होता है, वहीं उच्छृंखलता से दुख और विनाश की उत्पत्ति होती है। रावण का अहंकार और दुष्ट प्रवृत्ति, राम की विनम्रता और त्याग के सामने पराजित होती है। श्रीराम के चरित्र में मर्यादा की महिमा के साथ त्याग और संघर्ष की प्रेरणा भी है। राज्यलक्ष्मी के त्याग, पत्नी सीता के लिए सामाजिक लोकापवाद का सहन, और वनवासियों के प्रति अपनत्व का भाव, ये सभी राम के उज्जवल चरित्र के पहलू हैं। उन्होंने दिखाया कि एक सच्चा शासक और एक सच्चा व्यक्ति वही है, जो अपने कर्तव्यों और मर्यादाओं का पालन करते हुए समाज के कल्याण का विचार करे। राम ने हर परिस्थिति में मर्यादा का पालन किया और इसी मर्यादा में ही उनका महानत्व निहित है। इस प्रकार, भगवान श्रीराम का चरित्र भारतीय समाज के लिए जीवन का आदर्श मार्ग है। उनका जीवन सत्य, धर्म, और मर्यादा का प्रतिरूप है, जो हमें यह सिखाता है कि अपने जीवन में दूसरों की सेवा, त्याग, और प्रेम को अपनाने से ही सच्चे अर्थों में मानवता का विकास संभव है। रामकथा का यह प्रेरक चरित्र युगों–युगों तक समाज को अपने आदर्शों से आलोकित करता रहेगा।

संदर्भ सूची–

- श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण– गीताप्रेस, गोरखपुर।
- वाल्मीकि रामायण, 1 / 2 / 15
- भ.ह. राजूरकर रामकथा के पात्र क्रं0 130
- प्रेमशंकर राम काव्य और तुलसी क्रं0 107
- तुलसी मानस –1– 201
- भगवती प्रसाद सिंहः राम काव्य धारा– अनुसंधान एवं अनुचिंतन क्रं0 196
- तुलसी मानस–2 / 137 / 3–4
- भगवत शरण द्विवेदीरू तुलसी साहित्य का सांस्कृतिक अनुशीलन क्रं0 172

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 47- 51
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

क्षेत्रीय भाषाओं में कानूनी शिक्षा-वर्तमान और भविष्य

डॉ0 शैलेश पाण्डेय,
शकुंतला कुंज कॉलोनी, चक मुंडेरा, जनपद-प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

सारांश:-

1947 में, अंग्रेजों से स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद, भारतीय नेताओं ने हिंदी को भारत की आधिकारिक भाषा के रूप में चुना, इस उम्मीद में कि यह क्षेत्रीय संचार की सुविधा प्रदान करेगी और राष्ट्रीय एकता को प्रोत्साहित करेगी। भारत के बहुभाषी परिवेश में एक ही भाषा शिक्षा का माध्यम भी थी। बाद में हिंदी और अंग्रेजी ने आधिकारिक भाषाओं और शैक्षणिक संस्थानों में शिक्षा के माध्यम के रूप में भी अपनी स्थिति साझा की। इस पेपर के माध्यम से भारत में भाषाओं और कानूनी शिक्षा के इतिहास और वर्तमान परिदृश्य पर नज़र डालना आवश्यक होगा।

मुख्य शब्द :- कानून,क्षेत्रीय भाषा,शिक्षा, संविधान,न्यायालय,मातृभाषा आदि

परिचय :-

भारत में 22 प्रमुख भाषाएँ हैं जो 720 से अधिक बोलियों के साथ 13 विभिन्न लिपियों में लिखी जाती हैं। आधिकारिक भारतीय भाषाएँ हिंदी (लगभग 420 मिलियन बोलने वालों के साथ) और अंग्रेजी हैं, जो पूरे भारत में व्यापक रूप से बोली जाती है।

भारत की क्षेत्रीय भाषाएँ

भारतीय भाषाएँ कई भाषाई परिवारों से संबंधित हैं, लेकिन उनमें से अधिकांश इंडो-आर्यन भाषाई समूह हैं, कुछ द्रविड़ भाषाई परिवार हैं जो मुख्य रूप से दक्षिणी भारत पर केंद्रित हैं। भारत में बोली जाने वाली अन्य भाषाएँ ऑस्ट्रो-एशियाटिक, तिब्बती-बर्मन और कुछ छोटी भाषा परिवारों से संबंधित हैं, जो अभी भी अवर्गीकृत हैं।

1961 की जनगणना के अनुसार, भारत में 1652 क्षेत्रीय या स्थानीय भाषाएँ हैं, उनमें से हिंदी को भारत सरकार द्वारा आधिकारिक भाषा का दर्जा प्राप्त है। कारण बताया गया कि भारत की 40% से अधिक आबादी हिंदी को अपनी मुख्य भाषा के रूप में उपयोग करती है। भारत का संविधान अनुच्छेद 343 के तहत हिंदी को आधिकारिक भाषा घोषित करता है। अंग्रेजी द्वितीयक राजभाषा है।

आधिकारिक भाषा के रूप में हिंदी का चयन हर उस व्यक्ति के लिए गंभीर समस्याएँ प्रस्तुत करता है जिनकी "मातृभाषा" हिंदी नहीं है। इससे उन लोगों के लिए एक बड़ी समस्या खड़ी हो गई जो अपनी क्षेत्रीय भाषाओं (असमिया, गुजराती आदि) में अधिक पारंगत हैं और उनके लिए भी जिनके पूरे शैक्षणिक सत्र में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी था। हिंदी के बिना भारत में 21 और आधिकारिक भाषाएं हैं।

भारत में कानूनी शिक्षा पारंपरिक विश्वविद्यालयों और बार काउंसिल ऑफ इंडिया द्वारा मान्यता प्राप्त विशेष विधि विश्वविद्यालयों और कॉलेजों द्वारा विभिन्न स्तरों पर प्रदान की जाती है। भारत को वैदिक काल से कानूनी शिक्षा में समृद्ध परंपरा वाला देश माना जाता है। इस अवधि के दौरान, यह माना जाता था कि भारत में एक व्यापक कानूनी प्रणाली थी। शायद यही कारण है कि कानूनी शिक्षा की अवधारणा धर्म की धारणा पर आधारित है और नैतिकता और नैतिकता के अध्ययन के साथ निकटता से जुड़ी हुई है। उस समय कानून के क्षेत्र में कोई औपचारिक शिक्षा या प्रशिक्षण नहीं था। क्षेत्र में ज्ञान और विशेषज्ञता स्व-अध्ययन और आत्म-विश्लेषण के माध्यम से प्राप्त की गई थी।

हालाँकि, भारत में ब्रिटिश शासन स्थापित होने के बाद, इस प्रणाली को धीरे-धीरे बदल दिया गया। इस प्रकार, आज भारत में प्रचलित व्यवस्था एक और औपनिवेशिक खुमारी है और भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के बाद स्थापित की गई थी। इसके बाद ही इस पेशे को सुव्यवस्थित करने के प्रयास शुरू किये गये। ऐसा इसलिए था क्योंकि तब केवल मुख्तारों और वकीलों को ही मुफस्सिल अदालतों में प्रैक्टिस करने की अनुमति थी और वे कानून के नियमों से बिल्कुल भी परिचित नहीं थे। इसके बाद, उनकी जगह वकीलों को ले लिया गया, जिन्हें कानून की डिग्री प्राप्त करने के आधार पर जिला स्तर पर प्रैक्टिस करने की अनुमति दी गई थी। अधिवक्ता के रूप में नामांकित लोगों को उच्च न्यायालयों के अधीनस्थ किसी भी न्यायालय में अभ्यास करने की अनुमति दी गई थी। 1857 में, कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे में तीन विश्वविद्यालय स्थापित किए गए, जिन्होंने इस विषय को अपने पाठ्यक्रम के हिस्से के रूप में पेश करके औपचारिक कानूनी शिक्षा प्रदान करने की दिशा में पहला कदम उठाया।

कानूनी क्षेत्र को तब प्रोत्साहन मिला जब 1859 के विद्रोह के बाद अंग्रेजों ने बहुत सारे कानून बनाए जिसके परिणामस्वरूप भारत में एक ऐसी कानूनी व्यवस्था बनी जो यूनाइटेड किंगडम के समान थी। ये क़ानून (भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872, भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 और कई अन्य) अंग्रेजी में तैयार किए गए थे जिसके परिणामस्वरूप अदालती कार्यवाही अंग्रेजी में की जाने लगी। चूँकि अधिकांश भारतीय आबादी ग्रामीण और अशिक्षित थी, इसलिए उन्हें न्यायालयों को जवाब देने में भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यहां तक कि शहरी आबादी को भी प्रचलित कानूनों के जाल को समझने में परेशानी हो रही थी। इसलिए कानून के क्षेत्र में शिक्षित व्यक्तियों के एक वर्ग की सख्त आवश्यकता थी ताकि न्यायालय तक उचित पहुंच

सुनिश्चित हो सके। कानून का शासन कायम रखने के लिए योग्य वकीलों का होना जरूरी है। इसलिए सक्षम अधिवक्ताओं की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता है और ऐसे व्यक्ति केवल तभी इस क्षेत्र में प्रवेश कर सकते हैं यदि आवश्यक शिक्षा और कौशल प्रदान करने के लिए पर्याप्त संस्थान हों।

1855 में बॉम्बे में पहला सरकारी लॉ स्कूल स्थापित होने के बाद से कानूनी शिक्षा आगे बढ़ी। इस विषय की जांच कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग 1917-1919, विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49, बॉम्बे कानूनी शिक्षा समिति, 1949, द्वारा की गई है। अखिल भारतीय बार समिति, 1953, राजस्थान कानूनी शिक्षा समिति, 1955 और मुख्य न्यायाधीशों के सम्मेलन, 1993 के संकल्प के अनुसार भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा नियुक्त न्यायाधीशों की समिति। वे आखिरी बार उन उपायों का प्रस्ताव देने के लिए मिले थे जो इसमें लिए जा सकते हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि स्नातकों को अदालतों में प्रैक्टिस करने का अधिकार मिलने से पहले पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो। कानूनी पेशे का चरित्र और क्षमता लगभग पूरी तरह से उभरते वकीलों द्वारा प्राप्त कानूनी शिक्षा की गुणवत्ता और सामग्री पर निर्भर करती है।

शिक्षा का माध्यम शिक्षण में उपयोग की जाने वाली भाषा है। यह देश या क्षेत्र की आधिकारिक भाषा हो भी सकती है और नहीं भी। जहां छात्रों की पहली भाषा आधिकारिक भाषा से भिन्न है, इसका उपयोग आंशिक या संपूर्ण शिक्षाविदों के लिए शिक्षा के माध्यम के रूप में किया जा सकता है। द्विभाषी या बहुभाषी शिक्षा में शिक्षा की एक से अधिक भाषा का उपयोग शामिल हो सकता है। यूनेस्को का मानना है कि "बच्चे की मातृभाषा में शिक्षा प्रदान करना वास्तव में एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। असमानताओं से भरी शिक्षा प्रणाली में भाषा भी सीखने के रास्ते में आने वाली बाधा हो सकती है। शिक्षाविद् इस बात से सहमत हैं कि मातृभाषा में पढ़ाना सबसे अच्छा है, प्राथमिक विद्यालयों में, लेकिन यह मुद्दा जटिल और भावनात्मक है, क्योंकि देश में भाषाओं और बोलियों की विविधता है और राजनेता अपने लाभ के लिए अंग्रेजी का शोषण करने के लिए उत्सुक हैं सामाजिक गतिशीलता के लिए पासपोर्ट, इस बीच माता-पिता के बीच शिक्षा की पसंदीदा भाषा बन रही है, जिनमें से कई लोग अपने बच्चों को गैर-मान्यता प्राप्त स्कूलों में केवल इसलिए डालते हैं क्योंकि उनके साइनबोर्ड पर 'अंग्रेजी-माध्यम' लिखा होता है।

कई संस्थान स्नातक स्तर पर क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा प्रदान करते हैं। परिणामस्वरूप, कुछ राज्यों में कई उम्मीदवारों को अंग्रेजी भाषा में कुछ बुनियादी ज्ञान के बिना भी कॉलेजों में प्रवेश दिया जाता है। यदि कोई किसी विशेष राज्य में ट्रायल कोर्ट या उच्च न्यायालयों में प्रैक्टिस करना चाहता है तो क्षेत्रीय भाषा में महारत मददगार होती है और कभी-कभी आवश्यक भी होती है और संपत्ति विवादों से संबंधित मामलों में भी सहायक होती है क्योंकि अतीत से उपलब्ध अधिकांश दस्तावेज़ इसी तरह के होते हैं। हिंदी या अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में बनाया गया। हालाँकि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि यदि शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय है तो शिक्षा की

गुणवत्ता में काफी कमी आती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संकाय को क्षेत्रीय भाषा में भी पारंगत होना पड़ता है, जो कॉलेजों को क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्तियों से अच्छे विजिटिंग संकाय या अतिथि व्याख्यान देने से रोकता है।

कानून पाठ्यक्रमों के दौरान चुनौतियाँ - शिक्षा के माध्यम के कारण - भारत में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी, हिंदी और संबंधित राज्यों की आधिकारिक भाषाओं में भिन्न है। निजी कॉलेज और राष्ट्रीय लॉ कॉलेज आमतौर पर अंग्रेजी को प्राथमिकता देते हैं, जबकि केंद्रीय और राज्य विश्वविद्यालय और उनके संबद्ध कॉलेज अंतिम दो में से एक को पसंद करते हैं। राज्य और उनकी भाषाएँ - असम-असमिया और अंग्रेजी, पश्चिम बंगाल-बंगाली और अंग्रेजी, कर्नाटक-कन्नड़ या अंग्रेजी, गोवा-अंग्रेजी या कोंकणी,महाराष्ट्र-अंग्रेजी या मराठी, आंध्र प्रदेश-अंग्रेजी या तेलुगु। कुछ स्कूल/संस्थान संस्कृत, हिंदी और उर्दू का उपयोग करते हैं, तेलंगाना- तेलुगु, उर्दू, हिंदी या अंग्रेजी तमिलनाडु-तमिल या अंग्रेजी, केरल-अंग्रेजी या मलयालम, ओडिशा-उड़िया या अंग्रेजी,लॉ कॉलेजों में शिक्षा का माध्यम या तो अंग्रेजी या हिंदी है चाहे वह केंद्रीय विश्वविद्यालय हो या राज्य विश्वविद्यालय। यद्यपि राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी है, जो उन उम्मीदवारों को स्पष्ट रूप से अस्वीकार करने का आधार है, जिन्हें उनके पूरे शैक्षणिक सत्र में हिंदी में पढ़ाया गया था और अगर वे इन विश्वविद्यालयों में चयनित भी हो जाते हैं, तो उन्हें अंग्रेजी की कमी के कारण बहुत संघर्ष करना पड़ता है। ज्ञान और भले ही शिक्षा का माध्यम हिंदी हो, व्यापक रूप से कवर किया गया पाठ्यक्रम अंग्रेजी में उपलब्ध है और जो कुछ भी हिंदी में उपलब्ध है वह हिंदी के कारण सिर के ऊपर चला जाता है जिसे सभी आसानी से नहीं समझ सकते हैं लेकिन इसे केवल प्रतिष्ठित हिंदी पुरस्कार विजेता ही समझ सकते हैं और इसका अनुवाद करना कठिन है। छात्रों द्वारा अन्य भाषाएँ। कुछ भाषाओं को तथाकथित उच्च वर्ग और शिक्षित लोगों द्वारा पिछड़ी हुई या केवल अशिक्षितों द्वारा उपयोग की जाने वाली भाषा माना जाता है जो उस क्षेत्रीय भाषा से अपना संबंध छिपाते हैं। क्षेत्रीय भाषा के कम प्रयोग के पीछे का कारण यह नहीं है कि इसके अनुयायी संख्या में कम हैं, बल्कि शिक्षा के माध्यम के आधार पर होने वाला भेदभाव इसके विलुप्त होने का कारण है।

आज समय की मांग यही है कि जिस प्रकार से देश को प्रगति की ओर ले जाने के लिए विभिन्न क्षेत्रों में कठोर और बड़े फैसले लिए जा रहे हैं, उसी प्रकार कानूनी शिक्षा में भी एक बड़ा बदलाव लाने की आवश्यकता है। समय आ गया है कि अपने देश के आम नागरिकों की सुविधा को देखते हुए कानून की शिक्षा लेने वाले विद्यार्थियों को उनकी क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा ग्रहण करने की छूट दी जाए जिससे अदालतों में क्षेत्रीय भाषा में दलीलों और बहस को बढ़ावा मिले।

अंत में मैं क्षेत्रीय भाषा आधारित कानूनी शिक्षा के गुण और दोषों का उल्लेख करना चाहूंगा।

क्षेत्रीय भाषा आधारित कानूनी शिक्षा के गुण

कुछ शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा होने से छात्र पाठ्यक्रम की सामग्री को आसानी से समझ पाते हैं क्योंकि वे शब्दावली के आदी हो जाते हैं। क्षेत्रीय भाषाओं की सुरक्षा एवं संरक्षण करना।

जिला स्तर की अदालती कार्यवाही में संपत्ति विवादों से संबंधित अधिकांश पुराने दस्तावेज़ क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध हैं। इस प्रकार क्षेत्रीय भाषा का ज्ञान ऐसे दस्तावेजों को समझने में मदद करता है।

क्षेत्रीय भाषा आधारित शिक्षा के दोष: लॉ कॉलेज में उन छात्रों के लिए एक दर्दनाक बदलाव होगा जब उन्हें अंग्रेजी में कानूनी अवधारणाओं को सीखने की आवश्यकता होगी जो अंग्रेजी में अच्छी तरह से पारंगत नहीं हैं। कॉलेज में कई बैच साथियों ने हिंदी आधारित शिक्षा प्राप्त की और कॉलेज में पहले दो वर्षों के दौरान उन्हें बहुत कष्ट सहना पड़ा।

क्षेत्रीय भाषा आधारित शिक्षा ब्रिज भाषाओं (भारत में यह हिंदी और अंग्रेजी है) की कीमत पर मातृभाषा को बढ़ावा देती है जो छात्रों को बाकी दुनिया से जुड़ने में सक्षम बनाती है। यदि स्कूल/कॉलेज उन्हें अंग्रेजी नहीं सिखाता है, तो उन्हें इस भाषा में महारत हासिल करने में बहुत कठिनाई होगी जैसा कि उनके माता-पिता और आसपास के लोग नहीं जानते हैं।

निष्कर्ष -

यह सच है कि कानूनी शिक्षा के प्रसार में भाषा एक बाधा के रूप में कार्य करती है, लेकिन पेशे की बाधा के साथ भाषा की बाधा वास्तविक चुनौती के रूप में कार्य करती है। जटिल कानूनी भाषा के अनावश्यक उपयोग से आम जनता के लिए कानून का लाभ उठाना मुश्किल हो जाता है और वे उन लोगों के सामने असहाय रह जाते हैं जो इस जटिलता का अपने लाभ के लिए उपयोग करने में सक्षम हैं। निष्कर्ष निकालने के लिए आदर्श रूप से हमारे पास अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषा का मिश्रण होना चाहिए, जहां माता-पिता बच्चों को क्षेत्रीय भाषा/मातृभाषा में पढ़ाते हैं और स्कूल/कॉलेज अंग्रेजी में पढ़ाते हैं, जिससे दोनों के बीच एक तरह का पुल बन जाता है। लॉ कॉलेजों में शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषाओं का मिश्रण होना चाहिए और पाठ्यक्रम भी बहुभाषी पहलुओं में शामिल होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. बख्शी, पी.एम. (2008) द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिकेशन
2. पांडे, जे.एन. (2008) द कॉन्स्टिट्यूशन ऑफ इंडिया, इलाहाबाद, सेंट्रल लॉ एजेंसी.693-695.
3. एनसीईआरटी द्वारा अखिल भारतीय स्कूल शिक्षा सर्वेक्षण, 8वां संस्करण (2016)
4. भारतीय माध्यमिक शिक्षा (मुदालदार) आयोग की रिपोर्ट, 1952-53
5. डॉ0 अवध नारायण द्विवेदी (2020),नई शिक्षा नीति एवं भारतीय भाषाएं (शोध पत्र)

shaileshrspl.sp@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 52-55
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

दलित साहित्य और भारतीय युवा

डॉ0 अंकुर श्रीवास्तव, सहायक आचार्य,
हिन्दी विभाग, बरेली कॉलेज बरेली।

भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक ढाँचे में परिवर्तन के क्रांतिकारी अभिव्यक्ति से दलित साहित्य का जन्म हुआ। आलोच्य साहित्य की उर्वर भूमि गौतम बौद्ध का दर्शन ''अप्पो दीपो भव'', कबीर, रैदास, दादू दयाल आदि सन्त कवियों की काव्योक्तियों– महात्मा ज्योतिबा फुले के दलितोत्थान के सामाजिक, शैक्षणिक कार्य और डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के ''शिक्षित हो, संगठित हो व संघर्ष करो'' के आह्वान से बनी है। इस उर्तर भूमि का वैचारिक रूप ''दलित विमर्श'' कहलाता है। ''दलित विमर्श'' एवं ''दलित साहित्य'' ने भारतीय सामाजिक संरचना की यथार्थ सच्चाई का पर्दाफाश करके भारतीय समाज की मनोवृत्ति को परिवर्तित होने के लिए मजबूर किया है। ऐसे यथार्थ साहित्य धारा केवल मंनोरंजन के लिए सृजित नहीं हैं वरन् प्रबोधन– उद्बोधन इसका मूल प्रयोजन है। उच्च और शुद्ध कलावादी या जीवनवादी कलाकृति को आज सामाजिक संदर्भ में ही अर्थ प्राप्त होता है। यह अर्थ व्यक्ति और समाज दोनो के महत्तम सुख कल्याण कामना के अनुकूल होना दलित–साहित्य का प्रमुख प्रयोजन है।

वर्तमान भारत विश्व में युवाओं की जनसंख्या के आंकड़ो के आधार पर सर्वाधिक युवा आबादी वाला देश है। वर्ष 2014 के नेशनल यूथ पॉलिसी के अनुसार 15 साल से ज्यादा और 30 वर्ष से कम आयु के लोग युवा है। इस लिहाज से देश में 37 करोड युवा है। यानी कुल आबादी का करीब 27 प्रतिशत फीसदी जनसंख्या युवा है। जबकि विश्व के सबसे ज्यादा जनसंख्या वाले देश चीन में युवा आबादी प्रतिशत 19 है। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक आकलन के अनुसार अपनी बडी युवा आबादी के साथ भारत अर्थव्यवस्था की नई ऊचाईयॉ प्राप्त कर सकता है बशर्ते वे युवा लोगों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य में भारी निवेश करे और उनके अधिकारों का संरक्षण करें। चूंकि दलित साहित्य के संदर्भ में वर्तमान युवाओं की बात हो रही है तो सर्वप्रथम देश के युवाओं को अप्रांसगिक एवं जर्जर वर्ण–जातिवादी व्यवस्था से मुक्त करने और प्रगतिशील मानसिकता युक्त युवा चेतना की आवश्यकता महसूस होती है। इस दृष्टि से दलित साहित्य भारतीय युवाओं के लिए एक मानसिक संजीवनी की भांति कार्य कर सकता है जो उनमें वैज्ञानिक तर्क और जाति–वर्ण निरूपाधि सहित व्यक्तित्व के विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

ज्ञातव्य है कि दलित साहित्य सामाजिक–राजनीतिक आन्दोलन का परिणाम है। डॉ0 अम्बेडकर द्वारा दलित–दमित वर्ग के सामाजिक, न्याय के निमित्त महाराष्ट्र में व्यापक आन्दोलन छेड़ा। मराठी साहित्य में दलित चेतना इसी के परिणाम है। ''दलित साहित्य'' शब्द मराठी साहित्य में ही पहली बार प्रयुक्त हुआ। ''महाराष्ट्र में दलित साहित्य शब्द का प्रयोग सन् 1954 में होने लगा था।''[1]

1967 ई0 में इस पर विधिवत् बहस शुरू हुई और महाराष्ट्र में ''लघु पत्रिका'' आन्दोलन ने साहित्य के क्षेत्र में हिन्दू लेखकों के वर्चस्व को चुनौती दी। दलित साहित्य ने अमेरिका में चल रहे ब्लैक आन्दोलन से भी प्रेरणा ग्रहण की ''ठीक इसी समय अमेरिका में मेलकम एक्स के जुझारू नेतृत्व में काली का आन्दोलन विकसित हो रहा था। इस आन्दोलन ने भी दलितों की काफी प्रभावित किया। यह 'अश्वेत कविता', 'अश्वेत रंगमंच', 'अश्वेत संगीत' और 'अश्वेत संवाद' का जमाना था।''[2]

1972 में दो दलित कार्यकर्ताओं नामदेव ढसाल और जे0बी0 पवार ने बंबई में ''दलित पैन्थर'' का गठन किया, जो अमेरिकी ''ब्लैक पैन्थर'' संगठन से प्रेरित था। राजा ढाले के लेख ''कला स्वतंत्रता दिवस'' ने ''दलित'' शब्द व्यापक बनाने का कार्य किया। पैन्थर और दलित लेखकों की रचनाओं ने युवा दलित बौद्धो और गैर बौद्धो को आकर्षित किया।

यह आन्दोलन केवल महाराष्ट्र में ही नहीं रूका इसका विस्तार हिन्दी पट्टी में भी फैल गया। सन् 1975 में ''सारिका'' पत्रिका के सम्पादक कमलेश्वर ने दो दलित विशेषांक निकाले और हिन्दी क्षेत्र में भी दलित चेतना की ध्वनि सुनाई पडने लगी। इस प्रकार ''दलित साहित'' तत्कालीन युवाओं के द्वारा सामाजिक न्याय की मांग के रूप में उभरा।

प्रसिद्ध उक्ति है कि ''साहित्य समाज का दर्पण होता है'' का व्यवहारिक रूप हम ''दलित साहित्य'' आन्दोलन में देखते है। ''दलित साहित्य'' साहित्य के दर्पण के साथ–साथ पथ–प्रदर्शक रूप में अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है क्योंकि यह साहित्य धारा व्यापक सामाजिक सरोकार से जुड़ी हुई है। ओम प्रकाश बाल्मीकि कहते है ''वर्ण व्यवस्था से उपजी घोर अमानवीयता, स्वतन्त्रता–समाज–विरोधी सामाजिक अलगाव की पक्षधर सोच को परिवर्तित कर बदलाव की प्रक्रिया को तेज करना दलित साहित्य की मूलभूत संवेदना है।''[3] वर्तमान युवा समाज को स्वतंत्रता, समता और सामाजिक न्याय के लिए जागरूक करने और सामाजिक परिवर्तन बोध को ग्रहण करने के लिए एक प्रेरणा स्रोत के रूप में दलित साहित्य उपस्थित है। अतः विकसित हो रहे वर्तमान भारत के युवाओं से अपेक्षा है कि वह पुरातन जर्जर सामाजिक ढांचे और मान्यताओं से मुक्त होकर नवीन विकसित भारत के नवनिर्माण में अपना योगदान दे।

जैसा कि उपर्युक्त पक्तियों में कहा गया है 'दलित साहित्य' व्यापक सामाजिक सरोकार से जुड़ा साहित्य है। इस सामाजिक सरोकारता के विविध पक्ष एवं आयाम 'दलित साहित्य' में दिखलाई पड़ते है। दलित कविताओं, आत्मकथाओं, कहानियों, उपन्यासों और समीक्षा साहित्य में अमानवीय वर्ण–व्यवस्था का विरोध, शिक्षा के महत्व, अर्न्तजातीय विवाह का समर्थन, कर्मठ एवं कर्तव्य–परायण जीवन शैली का महत्व जैसे पक्ष प्रस्तुत है। मोहनदास नैमिशराय की कविता ''शब्द'' मनुवादी वर्ण–व्यवस्था को नकारती है–

शब्द ही तो थे
जो मनुस्मृति के लिखे गए
राम राज चला गया
पर शम्बूक की चीख अभी बाकी है
जैसे दलितों की पीठ पर
चोट के निशान
शब्द सिसकते नहीं बोलते है
चोट करते है।''[4]

सतनाम सिंह की कविता ''गाय और गोबर'' सामाजिक न्याय भागीदारी और अधिकार संरक्षण की बात करती है–

यहां आदमी
कीडे–मकोडे की तरह
मर रहे हैं
और वे हैं कि
गाय और गोबर की
रक्षा की बात कर रहे हैं।''[5]

दलित काव्य साहित्य वर्तमान युवा समाज के लिए मात्र उद्बोधन नहीं वरन संवेदानत्म रूप से जागृत करने का माध्यम है। भारतीय समाज के एक नवीन इतिहास की रचना करने के लिए दलित कविता युवा समाज को झकझोरती है और इतिहास के पुर्ननिर्माण के लिए उठ खडे होने का सम्बल प्रदान करती है। राकेश प्रियदर्शी की कविता 'इतिहास' इसकी साक्षी है–

सदियों की शांति जब भंग होती है।
तो आकाश के पृष्ठ पर भी
क्रांति का इतिहास बना जाती है।''[6]

'दलित आत्मकथाएं'' भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अमानवीय पक्ष को ही नहीं दिखलाती है, वरन वे कर्तव्यमान और कर्मठ जीवन शैली को भी प्रस्तुत करती है। वर्ण–व्यवस्था की विजय परिस्थितियों की कीचड़ से कमल के समान कोमल एवं दीप्तिमान व्यक्तित्व के उभरने की सच्ची घटनाएं इन दलित आत्मकथाओं में दृष्टिगत होती है। ओम प्रकाश बाल्मीकि की आत्मकथा ''जूठन'' में भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म और इतिहास में पवित्र समझे जाने वाले शिक्षण संस्थान, शिक्षक और प्रेम पर कड़ा प्रहार

है। साथ ही शिक्षा प्राप्ति के द्वारा ''पढ लिखकर जाति सुधारनी है''[7] मोहनदास नैमिशराय की आत्मकथा ''अपने–अपने पिंजरे'' में मेरठ शहर के दलित समाज की स्थिति का चित्रण करते हुए। अपने परिवार की बेहतर आर्थिक स्थिति के पश्चात नीची सामाजिक स्थिति का अन्वेषण करता है, ''हमारे पास सिर्फ कड़वा अतीत और जख्मी अनुभव था। सदियों से गर्दिश में रहते–रहते हम अपने इतिहास से कह गये थे। अपनी संस्कृति भूल गए थे।''[8] श्यौराज सिंह 'बेचैन' की आत्मकथा ''मेरा बचपन मेरे कंधो पर'' विषम परिस्थितियों में कर्मठ जीवन शैली द्वारा उच्च पदस्त होने का वर्णन है तो ''डॉ0 माता प्रसाद की आत्मकथा'' ''झोपडी से राजभवन'' में एक सामान्य परिवार, और नीची समझी जाने वाली जाति में जन्मे बालक का अपने अदम्य साहसी व्यक्तित्व के बल पर शासन स्तर पर उच्च पदस्त होने की सत्य घटना वर्णित है।

''दलित उपन्यास'' दलित जीवन के यथार्थ अभिव्यक्ति के प्रतीक है। जय प्रकाश कर्दम का छप्पर उपन्यास दलित समाज की समस्या और उसके शोषण उत्पीडन को व्यक्त करता है, किन्तु दलित स्त्रियों के यौन शोषण और बलात्कार भी इसकी मुख्य समस्या है। कमला का चरित्र इसी का साक्षी है। प्रेम कपाडिया का ''मिट्टी का सौगन्ध'' और सत्य प्रकाश का ''जस–तस भई सवेर'' उपन्यास स्त्री बलात्कार समस्या से ही सम्बद्ध है। मोहनदास नैमिशराय के उपन्यास ''मुक्ति–पर्व'' के माध्यम से भारत की दूसरी आजादी, जो निश्चय ही दलितों की पहली आजादी होगी, की बात की है। उपन्यास का नायक बंसी का पुत्र अपने मालिक से कहता है ''जनाबे अली हम न गुलाम थे, न गुलाम है और न गुलाम रहेगे''[9] कौशल्या बैसंती का ''दोहरा अभिशाप'' उपन्यास दोहरी पीड़ा का दस्तावेज प्रस्तुत करता एक दलित समाज में पैदा होने और दूसरा दलित स्त्री होने का। इस उपन्यास में एक संभ्रांत दलित स्त्री के तिल–तिलकर घुटने और पति तथा समाज की पुरूषवादी मानसिकता वाले लोगों से लांछित–प्रताड़ित होने की कहानी है।

'दलित कहानियां' भारतीय समाज के विविध सवालों से टकराती है, जो अब तक साहित्य से ओझल रहे है। ओम प्रकाश बाल्मीकि की कहानी ''शाल का पेड़'' आदिवासी कर्मचारी को केन्द्र में रखकर लिखी गयी है। शाल का पेड यहां आदिवासी जीवन या मार्क्सवादी शब्दावली में सर्वहारा का प्रतीक है, जिसकी विशाल छाया में आमजन विश्राम करते हैं। मोहनदास नैमिशराय की कहानी 'कर्ज' दलित जीवन के सामाजिक अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान के इर्द–गिर्द घूमती है। 'कर्ज' कहानी का नायक अशोक अपने माता–पिता द्वारा लिए गए महाजन के आर्थिक कर्ज को तो नहीं उतार पाता, किन्तु अपनी मॉ–बहन सहित दलित समाज की बहु–बेटियों के कर्ज उतार देता है, जिनकी इज्जत महाजन में ली थी। दलित चेतना की धार यहॉ बडी तेज है। प्रतिकार का स्वर अत्यन्त मुखर है। दयानन्द बहोही की कहानी 'सुरंग' समाज की शैक्षिक व्यवस्था की पोल खोलने वाली कथा है ''मुझे कतई दुख नहीं कि रिसर्च मुझे करने नहीं दिया गया, मुझे बराबर जान–पॉत के पचड़े के कारण टकराना पड़ा है।''[10] सुरंग की लाक्षणिकता एक साथ ही व्यक्ति के अन्धकारपूर्ण दमघोटू वातावरण तथा समाज की रूढि और परम्परागत संकीर्णताओ को व्यंजित करती है।

प्रहलाद चंद्र दास की कहानी ''लटकी हुई शर्त'' जागृत वर्ग चेतना की कहानी है। कहानी की संवेदना और सरोकार एक शर्त के इर्द–गिर्द घूमती है, जो आज तक लटकी हुई है। ''समर्थ हुए तो जाति की एक दीवार को तोड़ो या ऊंची जाति के होने के उनके दम्भ को।''[11] जय प्रकाश कर्दम की कहानी 'नोबार' अन्तरजातीय विवाह की समस्या को उठाती है। भारतीय समाज के आधुनिक होने के बावजूद अभी भी यहां जातीय अस्मिता का अस्तित्व विद्यमान है, जो परिवर्तनकामी मूल्यों को नकारता है ''हम जाति–पाति नहीं मानते और हमारे मैट्रोमोनियल में भी 'नो बार'' छपा था, फिर भी कुछ चीजे तो देखनी ही पडती है। आखिर ''नो बार' का यह मतलब तो नहीं कि हम किसी चमार–चूहड़े के साथ..... ।''[12] दलित जीवन के माध्यम से लोकतांत्रिक मूल्यो को उभारने वाली कहानियों में ''अपने हिस्से की रोटी'' डॉ0 शत्रुधन कुमार) ''द्रोणाचार्य एक नहीं'' (कानेरी) हशिये से बाहर (रजतरानी मीनू) काले हशिये पर ''यातना की परछाइयॉ'' (डॉ0 एन0 सिंह) साग और अन्य कहानियां (ठाकुर प्रसाद राही) कठपुतली (अरविन्द घोस) आदि प्रमुख है।

दलित नाट्य साहित्य अम्बेडकरवादी दर्शन पर आधारित है, जहां वर्ण–जाति को खत्म करने, सम्प्रदायिकता का उन्मूलन करने और दलितों के शिक्षाधिकार मुद्दो को उठाया गया है। सुशीला टाकमभौरे के नाटक ''रंग और व्यंग्य'' तथा ''जीवन के रंग'' जाति–वर्ण व्यवस्था के यथार्थ को उभारते है। कर्मशील भारती की एकांकी 'गुनाहो की सजा' में दलित जीवन से जुड़ी अज्ञान, अशिक्षा, अंधविश्वास तथा जातिभेद

की समस्या को रेखांकित किया है। अनीता भारती की एकांकी ''दहाड उठा था सिंह'' डॉ0 अम्बेडकर के निर्भिक व्यक्तित्व एवं कृतिव्य को उजागर किया है।

इस प्रकार सम्पूर्ण दलित साहित्य भारतीय युवा वर्ग के लिए नवीन सामाजिक ढॉचे के निर्माण, लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा और बंधुत्व के लिए प्रेरणा का एक अजस्र स्रोत है। पिछले कुछ वर्षों के घटनाक्रम को देखे तो हमें दलित साहित्य का भारतीय युवाओं पर प्रभाव पड़ता दिख जाता है, चाहे वह ऊना की घटना के बाद जिग्नेश मेवाणी का उदय हो। जेएनयू लखनऊ हैदराबाद वर्धा, चंडीगढ, पटना आदि विश्वविद्यालयों के छात्र आन्दोलन हो। ये छात्र–नवजवान समाज की जातिवादी नियत को उखाड़ फेकने के लिए कटिबद्ध है। महत्वपूर्ण बात यह है कि ये युवा पढे–लिखे है, वैचारिक चेतना से लैस है, बौद्धिक है। यही अब नवीन भारत के पौधे के लिए खाद–पानी का काम करेगें।

संदर्भ–

1. दलित कविता : जयन्त परमार, युद्धरत आम आदमी अंक 47, जुलाई–सितम्बर 1999, पृष्ठ–28
2. 'अस्मिताओं का सहअस्तित्व' : धनश्याम शाह, आधुनिकता के आईने में दलित सम्पादक अभय कुमार दूबे, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ– 208
3. 'प्रज्ञा साहित्य' अंक मार्च–जून 1995 के हवाले से देवेन्द्र चौबे का कथन आजकल, दिसम्बर 2000 पृष्ठ–7
4. 'युद्धरत आम आदमी' अंक–47 जुलाई–सितम्बर 2003 में संकलित, सं0 रमणिका गुप्ता
5. 'दलित साहित्य वार्षिकी' वर्ष 2005 में संकलित, सं0 जय प्रकाश कर्दम
6. 'युद्धरत आम आदमी' अंक 47 दिसम्बर 2003 में संकलित सं0 रमणिका गुप्ता
7. 'जूठन' ओम प्रकाश बाल्मीकि पृष्ठ–40
8. 'अपने–अपने पिंजरे' मोहनदास नैमिशराय पृष्ठ–158
9. ''मुक्तिपर्व'' मोहनदास नैमिशराय– पृष्ठ–28
10. सुरंग– दयानन्द बटोही पृष्ठ– 108
11. लटकी हुई शर्त – प्रहलाद चन्द्र दास– पृष्ठ– 128
12. नो बार : जय प्रकाश कर्दम– पृष्ठ 35

ई–मेल– ankursrivastava262@gmail.com Mob.: 9936111027

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 56-58
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पंचायत राज में महिलाओं की भूमिका

प्रवीण कुमार, सहायक आचार्य (राजनीति विज्ञान),
प्रतापसिंह भाटी महाविद्यालय नाणा बाली, पाली, (राज.)

प्रस्तावना – प्रजातंत्र तब तक सफल नही हो सकता जब तक आधी आबादी वाली मातृत्व शक्ति को सवैधानिक व मानसिक तौर पर भूमिका नही मिल जाती है इस दिशा में शासन व समाज में पंचायत राज व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है क्योंकि, इसके माध्यम से सामाजिक स्तर पर सशक्तिकरण लाने का प्रयास किया जा रहा है महिलाओं की भूमिका की दृष्टि से स्थानिय स्वशासन में मील का पत्थर साबित हो रहा है।

महिला भूमिका एक महत्वपूर्ण एवं सतत् प्रक्रिया है – महिला सशक्तिकरण का आशय महिलो को पुरूषो के बराबर वैधानिक , राजनीतिक, मानसिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में स्वतः निर्णय लेने की खुली छुट हो उसमें ऐसी क्षमताओं का विकास करना है जिसमें वे अपने जीवन के प्रत्येक पहलु अपनी इच्छानुसार व्यतित कर सके जिससे उसके अन्दर आत्मविश्वास व सृजनात्मक एवं स्वाभिमान जागृत हो। महिला भूमिका एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य एक न्यायपूर्ण एवं गरिमा युक्त समाज की स्थापना करना है क्योंकि, लैगिंग समता को शासन व लोकतंत्र की कुंजी कहा जाता है। शासन जब तक सफल नही होता है तब तक महिलाओं को मानसिक व सामाजिक तौर पर प्रतिनिधित्व प्राप्त नही हो जाता है। इस दिशा में में पंचायत राज व्यवस्था कारगर और सार्थक भूमिका अदा कर सकता है क्योंकि, इसके माध्यम से सामाजिक स्तर पर बदलाव में महिला के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है पाश्यात्य उग्रनारीवादी विचार सीमॉन द दुआर कहती है कि ''महिलाएं पैदा नही होती है बल्कि बनायी जाती है।

पंचायती राज लोकतांत्रिक विक्रेन्द्रीकरण का एक रूप है :– प्राचीन काल में सभा, समिति, आदि का उल्लेख सत्ता के विकेन्द्रीयकरण के लिए किया गया पंचायती राज में विकेन्द्रीयकरण का एक रूप यह की जिसमें प्रत्येक सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करके पूर्ण निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्रयास किया जाए एवं अच्छी शासन व्यवस्था के मुख्य लक्ष्यों के अन्तर्गत व्यवस्थाओं को अधिकाधिक क्षमतावान एव जन आवश्यतापूर्ति, समस्या निराकरण, तीव्र आर्थिक प्रगति सामाजिक सुधार वितरणात्मक न्याय एवं मानवीय विकास करना है। स्वतंन्त्रता के बाद भारत में उदारवादी लोकतंत्र अपनाया गया भारतीय लोकतंत्र पूर्णतः ब्रिटिश संसदीय माडल पर आधारित है किन्तु कुछ भारतीय मानकों भी समावेश किया गया जिसमें गांधी स्वावलम्बी गांवो एव ग्राम स्वराज्यों के मूल्यों को भारतीय संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 40 में उल्लेख किया गया इस अनुच्छेद में ग्राम पंचायत के सगठन हेतु राज्यो को निर्देशित किया गया था भारत जब आजाद हुआ तब ग्रामिण विकास जन सहभागिता बढाने के लिए 2 अक्टुम्बर 1952 को के.एम. मुशी समिति की सिफारिस पर समुदाहियक विकास कार्यक्रम चलाया लेकिन अत्यधिक प्रशासनिक हस्तक्षेप व जनसहभागिता के अभाव के कारण असफल हो गया। बलवन्तराय मेहता समिति कि सिफारिस पर 2 अक्टुम्बर 1959 में नागौर के बगदरी गावं में पी.एम. नेहरू ने पंचायत राज का उद्घाटन किया लेकिन अनेक समस्या रही जिसमें (1).समय पर चुनाव नही (2).सस्थाओ के कार्य निर्धारित नही थे (3). धन का अभाव (4). राज्य सरकार का अत्यधिक हस्तक्षेप आदी रहा लेकिन मुल समस्या की पंचायत राज को सवैधानिक मान्यता नही होना।

<u>संवैधानिकरण के प्रयास पंचायत राज</u> :– एम.एल. सिघवी व पी. के शगुन समिति की सिफारिस के उपरान्त राजीव गांधी सरकार ने 1989 में 64 वा संविधान संशोधन संसद में लाया गया लेकिन पारित

नही हो सका फिर 1992 में नरसिन्हाराव सरकार ने 73 वा संशोधन के बाद 24 अप्रैल 1993 से प्रभाव में आया इस सशोधन के बाद पंचायत राज सस्थाओं के बाध्यता हो गई एवं सविधान के भाग 9 अनुसूचि 11 के अनुच्छेद 243 से 243(0) तक कुल 16 अनुच्छेद जोडे गये पंचायती राज की स्थापना के उद्देश्यो के साथ साथ पंचायतीराज में महिलाओं की भूमिका के विश्लेषण का महत्वपूर्ण स्थान है। महिलाओं के बारे में अध्ययनों और आन्दोलन का केन्द्र बिन्दु अब मानव हित में नारी मुक्ति से हट कर महिलाओं को अधिकार देने पर केन्द्रित हो गया है। विकास एवं आधुनिकरण के साथ–साथ लिंग समानता की अवधारणा को सामाजिक परिवर्तन का सर्वप्रमुख मुद्दा माना जाता है महिलाओं को न केवल आर्थिक विकास में समान भागीदार बनाने पर बल दिया जा रहा है अपितु इन्हे प्रत्येक मोर्चे पर समान समझने की आवश्यकता महसुस की जा रही है इसके साथ–साथ महिलाओं की पुरूषो के समान राजनीतिक सहभागिता का प्रश्न भी आधुनिक सभ्यता का सर्वप्रिय चर्चित विषय है।

<u>महिलाओं को समान अधिकार</u> :–महिलाओं को अधिकार देने की अवधारणा विकासशील समुदायों में भी अधिक लोकप्रिय है विकासशील देशों का नारी आन्दोलन मुख्य रूप से सामाजिक आर्थिक मुद्दो पर आधारित है। भारत भी इसका अपवाद नही है। भारत के सविधान लागू होते ही महिलाओ को समान राजनीतिक अधिकार एवं नागरिक स्वतंत्रता मिल गई हमारे सविधान में न केवल कानून के समाने समानता और समान कानूनी सरक्षण की गारण्टी दी गई है। बल्कि राज्य को ऐसे अधिकार भी दिये गये है कि वह भारत में महिलाओं के हितो को बढावा देने के रचनात्मक उपाय करे जैसे की निदेशक तत्वों के अनुच्छेद 39 में पुरूषो और स्त्रियो को समान कार्य के लिए समान वेतन मूल कर्तव्य में भारत के सभी लोगो में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म भाषा और प्रदेश या वर्ग आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है। भारतीय संसद ने समय समय पर विभिन्न कानूनो का निर्माण किया गया है जैसे प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961 समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, महिला घरेलू हिन्सा अधिनियम (2006) एवं महिलाओ के अधिकारो की रक्षा के लिए (1992) में महिला आयोग का गठन किया गया इस प्रकार कानून के ढांचे में महिलाओ और उसकी विशेषताओं आवश्यकताओं का पर्याप्त ध्यान रखा गया है इस प्रकार भारतीय संविधान नारी हितों की दिशा में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

<u>महिलाओ की सहभागिता एवं समस्याये</u> :–

पुरे देश मे पंचायतो मे महिलाओ की सहभागिता अनिवार्य हो गई है किन्तु भारतीय समाज का ढॉचा इस प्रकार का है कि महिलाओ को हमेशा से दबाकर रखा गया है, अतः निरक्षरता, गरीबी तथा परम्परा के बंधनो को तोडना मुश्किल होते हुए भी जरूरी था। नवीन पंचायत राज व्यवस्था मे महिलाओ की भुमिका एंव योगदान मे क्रियान्वयन के स्तर पर कई समस्याये उजागर हुई है। इनका विश्लेषण निम्न रुपो मे किया जा सकता है।

हर्ष की बात है राजस्थान पहला राज्य है जहॉ पंचायत चुनावो में महिलाओ ने चुनाव मे 50% आरक्षण किया जा चुका है। वसुंधरा राजे सरकार ने 11 अप्रेल 2008 को महिलाओ के लिए पंचायत चुनाव मे 50% आरक्षण लागु किया है। भारत मे लगभग 14 राज्यो की नगरीय निकायो मे एंव 17 राज्यो के ग्राम पंचायतो मे 50% आरक्षण का प्रावधान किया गया है, किन्तु अब भी महिला जनप्रतिनिधियो के सामने जटिल समस्याये है जो निम्नलिखित है–

1 शिक्षा का अभाव
2 प्रशिक्षण का अभाव
3 स्थानीय दलालो की भुमिका
4 महिला प्रतिनिधियो के प्रति होने वाली हिंसा
5 सामाजिक समस्याएँ
6 पारिवारिक समस्याये
7 जाति बंधन, आत्म–सम्मान ,गरिमा की समस्या
8 वित्तीय समस्या
9 पितृसतात्मक समाज कि अवधारणा
10 'अदृश्य कॉच कि सिल्ली प्रभाव'
11 बाल विवाह

<u>महिलाओ की भागीदारी को कारगर बनाने के प्रयास एवं सुझावः–</u>

1. महिला प्रतिनिधि अपने काम को प्रभावपूर्ण तरीके से सम्पन्न कराने के लिये शिक्षण प्रशिक्षण के क्रार्यक्रम और सघन तरीके से चलाने के साथ व्यावहारिक मुद्दो पर अधिक आधारित होने चाहिए।
2. पंचायत के कार्य मे स्त्रियो की विशेष भुमिका चिन्हित की जाए ताकी दुसरो का दखल उसमे न हो।
3. ऐसी प्रथाओ को दुर करने की पहल की जाए जिनका सीधा सम्बन्ध महिलाओ से हो ताकी उनकी भागीदारी अधिक निर्बाध गति से हो सके।
4. आज के सूचना युग मे महिलाओ पंचायत सम्बन्धि सभी प्रकार महत्वपूर्ण सूचना होनी चाहिए जिसमे उनकी गतिशीलता और बाहरी जन सम्पर्क पुरुषो की अपेक्षा कम हो सके।
5. पंचायत के कार्यो मे महिला शिक्षा को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए ताकि निरक्षता के कारण आ रही बाधाओ को आसानी से पार कर सके।
6. महिलाओ को ग्रामीण स्तर पर प्रशिक्षण देना चाहिए, ताकि वे सुविधाओ का ठीक से लाभ उठा सके।
7. एक–एक ग्राम पंचायत मजबुत होगी आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होगी तो उनमे महिला भी मजबुत होगी।
8. महिला के लिए जनप्रतिनिधियो को ऐसी प्रथाए बाल–विवाह विरोध, विधवा–विवाह के लिए प्रेरित, महिला शिक्षा को बढावा देना, पर्दा–प्रथा का विरोध, आदि
9. स्वय सहायता समुह मे मजबुती देना एवं वित्तिय सुरक्षा।
10. सहकारी समितियो में महिलाओ कि भूमिका तय करना।
11. महिला कृषको को पंचायत से मिलने वाले लाभ कि भागदारी तय करना।
12. कृत्रिम बुद्धिमता व प्रौद्योगिकी से महिलाओ को जागरूक करना।
13. ग्रामीण स्तर पर महिलाओं के स्वास्थ्य से संबंधित योजनाओं का प्रत्यक्ष लाभ।
14. पर्यावरण विकास में महिलाओं की भूमिका सुनिश्चित करना।

निष्कर्षः–

73 वे संविधान संशोधन द्वारा देश मे नयी व्यवस्था के बाद पारम्परिक पुरुष प्रधान निर्णय लेने वाले समाज मे अब निर्णय की प्रकिया मे महिलाओ का समावेश होने लगा है लेकिन समाज की मानसिकता के चलते अभी भी इस रास्ते मे महिलाओ के सामने अनेक कठिनाइयॉ है। यह सत्य है कि हमारा सामाजिक ढॉचा और उनकी मानसिकता समुचे देश में एक समान नही है, किन्तु यह प्रति सोच मे देश के विभिन्न भागो मे काफी समानताये है। तात्पर्य यह है कि, वे अब भी राजनीतिक रुप से काफी पिछडी है पर तेजी से जागरुक हो रही है, और आगे आ रही है। नई व्यवस्था 50 प्रतिशत ने उन्हे और प्रेरित किया है।

1. डॉ.विमला आर्य–पंचायती राज में महिलाओ की भूमिका।
2. वन्दना बंसल–पंचायती राज में महिलाओ की भागीदारी।
3. भारत डोगर–पंचायती राज और महिलाए।

मोबाईल नंबर – 9928914776 **ईमेल** – praveensena776@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 59-64
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

y“A study of academic anxiety among secondary school students in relation to their Mental Health Status.

DR. Anupama Ahuja, Principal
Tiny Tots School

Abstract

The present study aims to determine the academic anxiety and mental health relation among secondary school students. The research was carried out sample of 800 students of rural and urban area . The results shows that secondary school students have significant correlation between academic anxiety and mental health.

Keywords; Academic anxiety, Mental health

Introduction

Education is a part of wider part of human development strategy because it has strong spill-over benefits to mortality rates, income and even social cohesion. Educated people can make better informed choices among alternatives in all their activities. Educated women have fewer and healthier children and education provides women with greater opportunities of employment and income. Education is also a catalyst of social change and it plays significant role in cultural transmission too.

Academic Anxiety

Anxiety is a common condition noticed in people of all age groups. It may be caused by a physical condition, mental condition & effects of drugs or due to a combination of these. Anxiety is defined as a painful or apprehensive uneasiness of mind usually over an impending or incepted ill. The common types of anxiety is panic disorder, Generalized Anxiety Disorder (GAP), Phobic disorder obsessive compulsive disorder (OCD), separation anxiety & stress disorders.

Parents craving that their children climb the steps of presentation to as high as a level possible. This craving for a high level of success puts a lot of pressure an students that can be a cause of academic anxiety. This high parental expectation, social demands, anxiety of social disapproval are the main causes of academic anxiety. Peer rising level of aspiration all these factors contribute in developing anxiety in academic situation, sometimes it may be situational such as in the case of test or examination or else it may be exhibits during stage fear. In this way academic anxiety is experience when the characteristics of anxiety are associated with academic or evaluative situation.

Mental Health

Mental health is defined as a state of well being in which every individual realizes his or her own potential, can cope write the normal stress of life can work productively & fruitfully & us able to make a contribution to her or his community. (WHO 2014).

Mental health is a term used to describe how will the individual is adjusted to the demands & opportunities of life. The idea of mental health is complex &

comprehensive. Mental health may be better understood by its comparison with physical health. A parson is said to be physically healthy when his body is physically healthy when his body is functioning well & he is free from pains & troubles.Similarly,apersonisingoodmentalhealthwhenhismindorpersonality is functioning effectively & he is free from emotional disturbances. In general, he enjoys life. He is self confident, hopeful about himself.

Mental health status is a deliberating factor which impact on students academic anxiety. These factors necessitate a moral formal, systematic & intensive process of carrying on the methods of analysis. A systematic structure of investigation must be involved to improve the performance of students in different shapes to introduce an atmosphere conductive to intellectuals & to minimize the anxiety of students because a manageable level of

academic anxiety is actually a good thing. Moderate academic anxiety provides the motivation students require to exert effort completing assigned schoolwork & preparing to take examinations. Academic anxiety only becomes a problem that needs a solution when the amount experienced grows so excessive that a student is no longer able to function. It was in this content that present venture was planned & executed. Present study is a humble effort to answer the query i.e. why students feel anxiety & is this academic anxiety is related to mental health.

Statement of the Problem

"A study of academic anxiety among secondary school students in relation to their Mental Health Status."

Method of Study :-

In the study, Sampling method was used and information was obtained from students.

Tools Used in the Study:-

1. Academic anxiety scale for children by Dr. A.K. Singh & Dr .A. Sen Gupta.
2. Mental Health Battery by Dr . Arun Kumar Singh & Alpana Sen Gupta.

Objectives of the Study

To study the relatedness between academic anxiety and across different levels of mental health of secondary school students.

Hypothesis

1. "There exists significant correlation between excellent mental health & academic anxiety".
2. "There exists significant correlation between good mental health & academic anxiety".
3. "There exists significant correlation between academic anxiety & average mental health".
4. "There exists significant correlation between academic anxiety & poor mental health of secondary school students".
5. "There exists significant correlation between very poor mental health & academic anxiety of secondary school students".

1. "There exists significant correlation between Excellent mental health & academic anxiety".

Variable	No. of student	Mean	S.D.	Correlation Coefficient	Type of Correlation	Significance Level	
Academic Anxiety	359	12.59	2.25	-0.088	Negative	0.05	0.01
Excellent Mental Health	359	121.46	10.46			Reject	Reject

The mean score of the academic anxiety of students & excellent mental health is 12.59 & 121.46 respectively. The standard deviation of the academic anxiety of students & excellent mental health of students is 2.25 & 10.46 respectively. To find out the correlation of academic anxiety & excellent mental health ,the researcher calculate the coefficient correlation from received data. The researcher get -0.088 coefficient correlation that is between 0 to 0.25 according to correlation table from this it is clear that there is negative correlation between academic anxiety & excellent mental health of students of secondary level. It means if academic anxiety increased than mental health decreased in its lowest level.

2.“There exists significant correlation between good mental health & academic anxiety”.

Variable	No .of student	Mean	S.D.	Correlation Coefficient	Typeof Correlation	Significance Level	
Academic Anxiety	136	13.37	2.29	0.079	Low Positive	0.05	0.01
Good Mental Health	136	101.46	10.87			Accept	Accept

136+136–2=272– 2=270

The mean score of their academic anxiety & good mental health is 13.37 & 101.46 respectively. The standard deviation of their academic anxiety & good mental health is 2.29 & 10.87 respectively. To find out the correlation of academic anxiety & good mental health the researcher calculate coefficient correlation from received data. The researcher get 0.079 coefficient correlation. That is between 0 to 0.25. According to correlation table it is clear that there is low positive correlation between academic anxiety & good mental health of students. It mean of academic anxiety increased than mental health increase in its lowest level.

3.“There exists significant correlation between academic anxiety & average mental health”.

Variable	No .of student	Mean	S.D.	Correlation Coefficient	Type of Correlation	Significance Level	
Academic Anxiety	123	12.98	2.21	-0.043	Low Negative	0.05	0.01
Average Mental Health	123	87.91	5.89			Accept	Accept

123+123–2=244

In the above mentioned table the data of students related to their academic anxiety & average mental health is taken. The mean score of their academic anxiety & average mental health is 12.98 & 87.91 respectively. The standard deviation of their academic anxiety & average mental health is 2.21 & 5.89 respectively. To find out the correlation of academic anxiety & average mental health the researcher calculate coefficient correlation from received data. The researcher get -0.043 coefficient correlation that is between 0 to 0.25 according to correlation table. From this it is clear that there is low negative correlation between academic anxiety and average mental health of students. It means if academic anxiety increased than mental health decrease its lowest level.

4.“There exists significant correlation between academic anxiety &poor mental health of secondary school students”.

Variable	No. of student	Mean	S.D.	Correlation Coefficient	Type of Correlation	Significance Level	
Academic Anxiety	40	12.56	2.00	-0.079	Low Negative	0.05	0.01
Poor Mental Health	40	69.07	5.17			Accept	Accept

40+40–2=78

The mean score of their academic anxiety & poor mental health is 12.56 & 69.07 respectively. The standard deviation of their academic anxiety & poor mental health is 2.00 & 5.17 respectively. To find out the correlation, the researcher calculated the coefficient correlation from received data. The researcher get -0.079 coefficient correlation that is between 0 to 0.25 according to correlation table. From this it is clear that there is low negative correlation between academic anxiety & poor mental health of students of secondary level. It means if academic anxiety increased than mental health decreased in its lowest level.

5.“There exists significant correlation between very poor mental health & academic anxiety of secondary school students”.

Variable	student	Mean	S.D.	Correlation Coefficient	Type of Correlation	Significance Level	
Academic Anxiety	142	12.95	2.27	0.0631	Low Positive	0.05	0.01
Very Poor Mental Health	142	39.55	16.5			Accept	Accept

142-142–2=282

The mean score of their academic anxiety & very poor mental health is 12.95 & 39.55 respectively. The standard deviation of their academic anxiety & very poor mental health is 2.27 & 16.5 respectively. To find out the correlation the researcher calculated the coefficient correlation from received data. The researcher get 0.0631 coefficient correlation that is between 0 to 0.25 according to correlation table. From this it is clear that there is low positive correlation between academic anxiety & very poor mental health of students of secondary level. It means if academic anxiety in creased than mental health increased in its lowest level.

Conclusion:-

1. The data related to excellent mental health & academic anxiety of students are taken data are analyzed to find out correlation. It is concluded that there is negative correlation between excellent mental health & academic anxiety .So ,our hypothesis is rejected.
2. The data related to academic anxiety & good mental health of students are taken data are analyzed to find correlation. It is concluded that there is low positive correlation between academic anxiety & good mental health. So, our hypothesis is accepted.
3. The data related to academic anxiety &average mental health of students are taken data are analyzed to find correlation between academic anxiety & average mental health of students. It is concluded that there is low negative correlation between academic anxiety & average mental health. So, our hypothesis is accepted.
4. The data related to academic anxiety & poor mental health of students are taken data are analyzed to find correlation between academic anxiety & poor mental health of students. It is concluded that there is low negative correlation between academic anxiety & poor mental health. So, our hypothesis accepted.
5. The data related to academic anxiety & very poor mental health of school students are analyzed. Data are analyzed to find out correlation academic anxiety & very poor mental health. It is concluded that there exist significant correlation between academic anxiety & very poor mental health. So, hypothesis is accepted.

Educational Implication

Studies strongly suggest that the main factors mental health, anxiety affecting the academic performance of students. So, students should be provided healthy atmosphere at home & schools. They must be motivated not underestimated. Therefore, this study influencing changeable factors that would produce positive results in mean future. The study is considered to be timely & valuable in the attempt to support the education of children.

Bibliography

1. Aruna anchalam, P. (2010) : "Higher education sector in India : Issues & imperatives", Journal Economy 6(4), 267-291
2. Bantley, Y.K. & Zinn, J. (2007) : "Calming your anxious mind (2nd ed.)", Qaklank : New Herbinger Publications Inc.
3. Natarajan, G. (2015) : "Study on anxiety level among school students undergoing higher secondary examination", International journal of students research in technology & management 3(03), 302-304.
4. Vitasari, P. et. al. (2010) : "The relationship between study anxiety & academic performance among engineering students", International conference on mathematics education research, Procedia social & behavioral sciences, 8(7) 490-497.
5. Peterson, D.L. Pere et al (2004) : "Respect cost nothing : A survey of discrimination faced by people with experience of mental illness in Axtearea New Zealand, Wellington, mental health foundation.
6. Rinke, R.P. Corrigan et al (2004) : "Examining two aspects of contact on the stigma of mental illness", Journal of social & cynical psychology 23(3) 377-389.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 65-69
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

तुलसी के रामचरितमानस में नारी - चिंतन का विश्लेषण

सजना यादव, सहायक आचार्या हिंदी
राजकीय महाविद्‌यालय कैलाशनगर ,सिरोही (राज.)

भारतीय स्वतंत्रता की प्रभात वेला से बहुत पहले नारी जागृति का विचार भारतीय समाज में अपनी सुगबुगाहट छोड़ने लगा था । नारी के पुरातन और हिंदू शास्त्रीय आदर्शों को उसके शोषण के हथियार के रूप में देखा जाने लगा। किसी भी दौर में चाहे वह प्राचीन हो या अर्वाचीन न तो सारी बाते ग्राह्य होती है न, ही त्याज्य। किंतु जब कोई बात आंदोलन के स्तर पर चल निकलती है तब अच्छे बुरे का विवेक पीछे छूट जाता है और उसका स्थान एक उग्र नारेबाजी लेने लगती है। भारत में ऐसा ही हुआ, नारी के पुरातन आदर्शों के प्रति एक पूर्ण रूपेण अनास्था प्रकट करने का यह फैशन सा चल निकला। इस तुमुल - नाद में गोस्वामी तुलसीदास पर सर्वाधिक आक्रमण किए गए। हुआ यह कि दो चार चौपाइयां रामचरितमानस से चुनी और आव देखा न ताव तुलसी निंदा का भीषण कोलाहल खड़ा कर दिया। स्त्री हो या पुरुष जहाँ गुणों के कारण प्रशंसित होता है वहीं अवगुणों के कारण प्रताड़ना भी झेलता है ऐसे में यदि गोस्वामीजी ने स्त्रियों के दोष और अवगुणों के बारे में कुछ स्पष्ट लिख दिया तो अन्यत्र उन्होंने ही स्त्री जीवन की व्यथा कथा और उसकी श्रेष्ठता का जो गान किया उसे क्यों भुला दिया गया। तुलसीदास की स्त्री निंदा विषयक कतिपय युक्तियों को लेकर उन पर खूब कीचड़ उछाला गया, यहाँ तक कि ऐसा करते हुए उस साहित्यिक विवेक को ही तिरोहित कर दिया गया जो किसी कृतित्व के सम्यक मूल्यांकन की प्राथमिक कसौटी होता है

गोस्वामी तुलसीदास ने नारी जाति के संबंध में क्या कुछ कहा है और उसका कथा प्रसंग किया है, इस पर विचार किए बिना खंड दृष्टि से कुछ भी कह देना बुद्‌धिमानी नहीं कही जा सकती। विशेष परिस्थिति और प्रसंग में किसी पात्र द्‌वारा कहलाए गए वाक्य उन पात्रों के अपने चरित्र के उद्‌घाटन भी होते हैं। उन्हें हमेशा ही कवि के अपने मंतव्य के रूप में मान लेना ठीक नहीं होता। कवि की अपनी मान्यता या तो उसके स्वतंत्र कथन के रूप में प्रकट होती है या कवि के आदर्शों के मूर्त रूपों पात्रो के कथन में। रामचरित मानस की उक्ति का अन्वेषण और विवेचन इस दृष्टि से आरंभ में ही कर देना समीचीन होगा।

"मानस" के बालकांड में नारी के संशयशील दुरावपूर्ण स्वभाव की बात इस प्रकार कही गई है

(क) सुनहि सती तव नारी सुभाउ।

संशय असं न धरिए उर काऊ।।

(ख) सती किन्ह चह तन्ह हूं दुरऊ।

देखहु नारी सुभाव प्रभाउ।

(ग)भय बस शिव सन किन्ह दुराऊ।

कछू न परीक्षा लिन्हीं गोसाई।

(घ)सती ह्दय अनुमान किय, सब जाने सर्वग्य।

किन्ह कपट में संभु सन, नारी सहज जड़ अग्य।।

इस अंतिम दोहे में नारी की सहज जड़ता का वर्णन है। प्रसंग सर्वविदित है। सती की श्रीराम के ब्रह्मत्व के विषय में शंका भगवान शंकर द्वारा शंकालुता का निषेध सती द्वारा राम की परीक्षा। श्रीराम के बारे में ब्रह्मत्व का बोध। सती की आत्मग्लानी, भगवान शंकर से दुराव, इस समग्र प्रसंग में सती को संशय हुआ श्रीराम के नर चरित्र को देखकर दुख हुआ भय वर्ष की कई प्रभु मेरे परीक्षण के साहस का बुरा न मानें। नारी सहज जड़ अग्य यह कथन किसी अन्य का नहीं स्वयं सती के आत्मग्लानी का है ।संशय का कारण है शिव के सामने परिपक्व भक्ति का अभाव। दुराव, असत्य भाषण का कारण है। आराध्य पर अविश्वास के कारण पति ह्दय पर प्रतिकूल प्रभाव की आशंका भगवान शंकर ने भी श्रीराम की सर्वशायनी माया को सिर नवाया। जिसके कारण सती ने उनसे झूठ बोला नारी के स्वभाव में उपर्युक्त दुर्गुणों की चर्चा कोई असत्य नहीं है कटु जरूर है। सती जैसी परम उच्च कोटि के नारी भी माया के प्रभाववश दुराव करती है। पति से दुराव सती का कोई स्थायी स्वभाव नहीं है यह तो स्पष्ट ही है और उसका आत्मग्लानी में उपचारात्मक कथन कवि की मान्यता क्यों कर हो सकता है। यही आत्मग्लानी और साथ में पति पत्नी का आदर्श चरित्र इन पंक्तियों में प्रकट हुआ है -

नारी के सुंदर से सुंदर, मधुर से मधुर रूप की झांकी मानस में मिलती है। नारी के वात्सल्य में ह्दय का वर्णन तीनों भाइयों सहित श्री राम के बाल्यकाल में वर्णन उपलब्ध होता है। नारी के सौंदर्यमय और प्रेम रूप के दर्शन सीताजी के गौरी पूजन प्रसंग तथा स्वयंवर प्रसंग के अंतर्गत होते है। नारी के सुकुमार सुकोमल रूप में कितनी चारित्रिक दृढ़ता प्रकट हो सकती है। इसका निर्देशन तुलसीदासजी ने आलंकारिक ढंग से किया है-

सगे ना शंभू सरासन कैसे।

कामी वचन सती मन जैसे।।

नारी जीवन के दो पहलू मात्र पित्र अधीनता पति अधीनता मानस के कथा प्रसंग में असाधारण रूप से मार्मिक बन पड़े हैं-

(क)गूढ़ विरा सुनि सकुचानी।
भवऊ विलंब मातृ भय मानी।।
(ख) अति स्नेह बस सखी सयाना।
नारी धरम शिकवही मृदु नानी।

पहले उदाहरण में सीताजी की गौरी पूजन से शीघ्र घर आने की चिंता का वर्णन है तो दूसरे में विवाह के बाद विदा लेती सीता के ससुराल में उचित विधि से जीवन यापन करने की शिक्षा है। दोनों में मर्यादा, वेदना और करुणा का क्या ही अभिराम संयोजन है यह देखने लायक है विवाह की समस्त लोक कृतियों में नारी के प्रधानता की चर्चा तो दोहराव मात्र ही होगी।

अयोध्या कांड में मंथरा, केकई संवाद प्रसंग में मंथरा और केकई दोनों ही क्रूरता कुटिलता और कुचाली स्वभाव का विवरण उपस्थित किया गया है। महाराज दशरथ पर केकई का, केकई पर मंथरा का मानसिक प्रभुत्व कितने बड़े कुचक्र को सामने लाता है। वरदान मांगने के समय राम प्रेम में दशरथ की दुर्दशा दशरथ द्वारा विनय, केकई की क्रूरता और अयोध्या के सिंहासन के स्वामित्व को लेकर दुखी अयोध्यावासियों के मुख से नारी स्वभाव और एक सामान्य उक्त उगती कहलाई गयी है।

सत्य कहहि नारी सुभाऊ ।
सब विधि अगह, अगाध दुराऊ।।
निज प्रतिबिंब वरुक महि जाई।
जाई न जाई नारी मत भा।।
का ना करई अबला प्रबल,
केही जग काल न खाई।।

परंतु इन पंक्तियों के बारे में कोई यह कहे कि तुलसी का नारी के प्रति दृष्टिकोण सवस्थ नहीं हैं अथवा ये पंक्तियाँ तुलसी के स्त्री द्वेष की परिचायक है तो निवेदन यह है कि कौशल्या, सुमित्रा, सीता, मंदोदरी आदि के समूजुवाल चित्रण के बारे में वे क्या कहेंगे। उपर्युक्त में इन पंक्तियों का औचित्य स्वयंसिद्ध है सच तो यह है की नारी का स्वरूप भी ऐसा ही होता है। चाहे वह स्वरूप उज्ज्वल नहीं है परंतु क्या इसकी सत्यता को नकारा जा सकता है इसे नारी का समग्र और सामान्यकृत चित्रण मान लेना भी गलत होगा।

मंथरा के उकसाने पर कैकई के मन में सोतिया डाह भी जागृत होता है-

नोहर जन्म भारराभ बरु जायी।
जीयत न करब सकत सेवकाई ।
अरि बस देवु जियावत जाहि ।
मरन नीक तेही जीवन चाही।।

नारी का यह स्वरूप भी कोई गौरवपूर्ण तो नहीं है किंतु क्या यह नारी स्वभाव का चित्रण मिथ्या है? क्या यह तुलसीदास के द्वेषपूर्ण लेखनी का परिचायक है? जब आधुनिक मनीषी यथार्थ चित्रण का सर्वाधिक महत्त्व स्थापित कर रहे हो तब इन पंक्तियों में वर्णित यथार्थ का विरोध क्यों?

राम के वन जाने के समाचार से व्यथित माता कौशल्या के मर्यादा और धर्म से पूर्व सारगर्भित वचनों में क्या नारी के उदात्त स्वरूप का चित्रण नहीं है? सीता का राम के साथ वनगमन का हठ पति के प्रति स्त्री के प्रेम का एक अत्यंत ही समुज्ज्वल चित्र प्रस्तुत करता है। समस्त सुख वैभव और भोग को पति के साथ सब मुक्त उच्च मानकर वह वन की ओर चल पड़ती है। लक्ष्मण जी को श्रीराम के साथ जाने की आज्ञा देते समय सुमित्रा का चरित्र कैसा उद्दात है। इसकी अनुपम झांकी मानस एवं गीता वाली (अयोध्याकांड पद 11, पृष्ठ 183) में उपलब्ध होती है ग्रामीण नारियों का सीता राम लक्ष्मण के प्रति स्नेह केवल सुकुमार स्वरूप और कठोर वन्य जीवन को देखते हुए उनके निष्कलुष हृदय की कैसी मार्मिक झांकी उपस्थित करता है वह पढ़ते ही बनता है।

राम वन गमन समाचार से मर्माहत हुए भरत अपनी माता कैकई को असाधारण रूप से कठोर वाक्य कहते हैं। वर मांगत मन या ना ही पीरा गरी नजीह मुँह परे उन अकीरा उसी संदर्भ में भारत नारी स्वभाव को लेकर भी कटुक्ति कहाँ पढ़ते हैं -

विधिहूँ न नारी हृदय गति जानी।

सकल कपट अग अवगुन खानी।।

सरल, सुशील, धर्मांत राऊ।

सो किमी जनाई तीव सुभाउ।।

और इसी प्रकार शत्रुघ्न भी अत्यंत दुख पूर्ण मनोस्थिति में खड़े हैं कि मंथरा आती है भरत आदि से पुरस्कार की आशा लिए और शत्रुघन उसे शारीरिक दंड दे डालते हैं। फिर भरत उसे छुड़ाते हैं।

उपर्युक्त घटनाओं को यदि मंथरा के राम विरोधी भयंकर कुचक्र केकई द्वारा उसका अनुसरण है राम का वन जाना, सिंहासन खाली रहना, अयोध्यावासियों की गहन पीड़ा, दशरथ की मृत्यु आदि परिस्थितियों के संदर्भ में देखा जाए तो प्रतीत होगा कि भरत के कठोर वचन और शत्रुघ्न का हाथ उठाने जैसा व्यवहार अत्याचार के श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। उपर्युक्त पंक्तियों के नारी स्वभाव पर व्यंग्य होते हुए भी दुष्ट पक्ष का उद्घाटन करती है और वह पक्ष केकई का है। फिर दुखी और मर्माहत व्यक्तियों की कथनी और करनी विशेष परिस्थिति में किया गया विशेष व्यवहार भी है। यह सब सामान्य धरातल पर विचारणीय नहीं है।

अरण्यकांड में शूर्पणखा का जैसा व्याभिचारी चरित्र अंकित है व प्रसिद्ध वाल्मीकि रामायण की कथा है। इसके लिए तुलसी दास को दोस्त दिया जाना व्यर्थ है। बारम्बार राम और

लक्ष्मण के बीच अपना कुछ प्रभाव लिए घूमती है जिसमें शुद्ध प्रेम भावना का तिरस्कार ही अधिक दिखाई पड़ता है।

नारी सीता के लिए जटायु का रावण के साथ युद्ध और मृत्यु का वरण जहाँ पुरुष का पराक्रम प्रदर्शन है वहीं नारी की महत्ता का प्रतिपादन है। शबरी श्रीराम के प्रति भक्ति पूर्ण विनय करती है। -

अधम ते अधम, अधम अति नारी।
तिन्ह मह मै मति मंद आधारि।।

यहाँ भी नारी को अधम कहा गया प्रतीत होता है और शबरी स्वयं को नारियों में भी अति अधम और मतिमंद मानती है। शबरी वास्तव में वैसी नहीं है जैसा वह अपना वर्णन करती है उसका चरित्र असाधारण रूप से भक्ति पुनीत चरित्र है। इसलिए यह उक्ति उसका अहम निवेदन है जिसमें अपनी लघुता का प्रतिपादन निरहंकारिता का एक अनिवार्य अंग होता है। और निरहंकारिता भक्ति का एक परम आवश्यक गुण हैं। इन सभी संदर्भों को साथ रखने से ही इस पंक्ति का वास्तविक काव्य मर्म उद्घाटित होता है। दूसरी ओर शबरी अपनी जातिगतता कि और भी संकेत कर रही है जो हिंदू समाज की वर्णव्यवस्था की एक क्रूर वास्तविकता है। फिर हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए की राम इसी शबरी के झूठे बैर प्रेम मग्न होकर खाते है और उसे एक चिरंजीवी गौर वास् पद नारी चरित्र के स्थान का अधिकारी बना देते हैं।

संदर्भ सूची -

1. रामचरितमानस, 1/51/3
2. वहीं, 1/53/3
3. वहीं, 1/56/1-3
4. वहीं, 1/57 क
5. मानस, 1/52/1-3
6. वहीं, 1/39/1
7. वहीं, 1/65/3
8. मानस, 1/81/3
9. मानस, 1/102/3
10. मानस, 1/110/1
11. मानस, 1/231/1
12. मानस, 1/234/4
13. मानस, 1/334/3-4
14. मानस, 2/47
15. मानस, 3/35/2

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 70-74
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

प्राचीन भारत में न्यायिक प्रक्रिया

डॉ हितेश शर्मा, सहायक आचार्य (इतिहास),
बाबू शोभाराम राजकीय कला महा. अलवर

प्राचीन न्यायिक प्रक्रिया में राजा द्वारा नियत किए गए कानूनी व्यवहार को न्यायिक धर्म की संज्ञा प्राप्त थी। हिन्दू न्यायिक प्रणाली में नियम विषय पूरक होते थे न कि कर्मकाण्डपरक तथा वे 'व्यवहार' नाम से जाने जाते थे।

प्रारम्भिक वैदिक काल में न्यायिक प्रक्रिया, न्यायालयों का स्वतंत्र संगठन, एवं न्यायिक प्रशासन की स्थापना नहीं हो पाई थी।[1] न्याय राजा की मध्यस्थता से होता था या न्यायधीश की मध्यस्थता से, लेकिन न्यायिक प्रक्रिया का संकेत नहीं मिलता। न्यायिक प्रक्रिया का स्पष्ट रूप से संकेत ब्राह्मण ग्रंथों से प्रारम्भ होता है। शतपथ ब्राह्मण में प्रश्निन, अभिप्रश्निन और प्रश्नविवाक का संकेत मिलता है लेकिन वहां वादी आदि के नियमों की व्याख्या नहीं मिलती।[2] संभवतः उस मध्यस्थता से ही विवाद का निर्णय होता होगा। किन्तुं उस काल में न्यायिक प्रशासन और प्रक्रिया का सूत्रपात होना स्वीकार किया जा सकता है। दण्ड और उसके कार्यान्वयन के लिए सहायकों की नियुक्ति का उल्लेख इस युग से प्रारम्भ हो जाता है।

धर्मसूत्र काल में न्यायिक प्रक्रिया का स्पष्टीकरण राजा के न्यायधीश होने पर होता है।[3] धर्मसूत्र काल के बाद 'व्यवहार' के रूप में न्यायिक प्रक्रिया का विवरण मिलता है। व्यवहार वेद से सम्बद्ध माना गया था।इसका संबंध लौकिक विधि से है। व्यवहार (न्यायिक प्रक्रिया) में आवेदन से लेकर साक्षी तक के अंश समाविष्ट है। इस अध्याय में व्यवहार का प्रयोग विधिय प्रक्रिया और न्यायालय में विधीय विवाद के अर्थ में किया गया है।

व्यवहार के विषय (व्यवहार–पद) :

विभिन्न स्मृतियों में व्यवहार पदों की संख्या भिन्न भिन्न है। मनु कहते है कि अठ्टारह स्थानों अर्थात् शीर्षकों के अर्न्तगत विवाद के सभी कारण आ जाते है। मनु ने इनका क्रम इस प्रकार दिया है।[4]

1. ऋणादान
2. निक्षेप
3. अस्वामिविक्रय
4. सम्भूय समुत्थान
5. दत्तस्यानपाकर्म
6. वेतनादान
7. संविद्व्यतिक्रम
8. क्रयविक्रयानुशय
9. स्वामिपाल विवाद
10. सीमा विवाद
11. वाक्पारुष्य
12. दण्डपारुष्य
13. स्तेय

14. साहस
15. स्त्रीसंग्रहण
16. स्त्री पुधर्म
17. विभाग (दाय)
18. द्यूत समाह्य

कौटिल्य ने 16 व्यवहारपदों का उल्लेख किया था, जिसको उन्होंने धर्मस्थीय एवं कण्टकशोधन दो भागों में विभाजित किया था।

न्यायिक प्रक्रिया—

प्राचीन काल में न्यायिक प्रक्रिया के चार चरण माने गए थे—

1. वाद—पत्र का प्रस्तुतीकरण
2. प्रतिवादी का उत्तर
3. प्रमाण (1) मानुष (2) दिव्य
4. निर्णय एवं कार्यान्वयन

1. वाद पत्र का प्रस्तुतीकरण—प्रथम चरण

न्यायिक प्रक्रिया के संदर्भ में न्यायालय में समस्त सभ्यों, अमात्यो, एवं अन्य सदस्यों सहित सर्वोच्च नयायपति राजा अथवा मुख्य न्यायधीश (प्राडेविवाक) के उपस्थित होने के पश्चात् पहला कार्य वादी द्वारा वाद पत्र का प्रस्तुतीकरण था। याज्ञवल्क्य ने वाद—पत्र को न्याय प्रक्रिया का अनिवार्य अंग माना था और उसकी शुद्धता पर विशेष बल दिया था, क्योंकि वादी द्वारा वाद में किसी प्रकार की अशुद्धि होने पर उसका पक्ष वहीं समाप्त समझा जाता था।[5]

याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार वादी द्वारा प्रस्तुत वाद में सर्वप्रथम वादी के विषय (अर्थात् उसका पूर्ण परिचय) तदुपरान्त वर्ष, माह, पक्ष, दिन, नाम तथा जाति लिखी जानी चाहिए।[6] कौटिल्य ने भी विवाद—पद के संदर्भ में वादी एवं प्रतिवादी दोनों के कथनों को लिखे जाने का समान व्यवस्था दी थी।[7]

पक्ष का प्रारम्भ किसी वादी की ओर से होता था, राज्य की ओर से नहीं। राजा या उसका कोई भी कर्मचारी पक्ष का प्रारम्भ नहीं कर सकता था, लेकिन पक्ष प्रस्तुत होने पर शांत नहीं रह सकता था। शासन द्वारा व्यवहार का प्रारम्भ कुछ अपवादपूर्ण स्थितियों में ही हो सकता था, यथा राज्य विद्रोह आदि के अतिरिक्त देव, ब्राह्मण, तपस्वी, स्त्री, बाल, वृद्ध, रुग्ण तथा अनाथ अर्थात स्वयं विवाद पक्ष प्रस्तुत करने में असमर्थ लोगों के विवाद का प्रस्तुतिकरण किया जाए।'[8] वाद पत्र के लिपिबद्ध हो जाने की स्थिति में प्रतिवादी को न्यायालय में उपस्थित कराने के लिए न्यायालय की ओर से एक व्यक्ति नियुक्त किया जाता था।

2. प्रतिवादी का उत्तर—द्वितीय चरण

न्यायालय में प्रतिवादी के उपस्थित होने पर वादी के वाद पत्र के आधार पर उससे प्रश्न किए जाते थे और प्रतिवादी का उत्तरदायित्व था कि वह उन प्रश्नों का सही उत्तर दें। यह उत्तर वादी की उपस्थिति में ही दिए जाते थे।[9] कौटिल्य के अनुसार न्यायालय द्वारा वादी से किसी बात का जवाब मांगे जाने पर उस दिन कही उत्तर न देने पर वादी पराजित समझा जाता था क्योंकि वादी अपने प्रत्येक कार्य का पहले से ही निश्चय करके दावा दायर करता था, परन्तु प्रतिवादी ऐसा नहीं कर सकता था इसलिए प्रतिवादी तुरन्त जवाब न दे सके तो उसे तीन रात से लगाकर सात रात की अवधि दी जाए।[10] ऐसा ही आदेश मनु ने मनस्मृति में दिया था।

यदि प्रतिवादी प्रकरण में आए हुए वार्तालाप के क्रम को छोड़कर किसी दूसरी और जाने लगता था, जिसका वाद से कोई संबंध ना हो, ऋण लेने आदि के स्थान को बतलाने की प्रतिज्ञा करके नहीं बतलाता था, या किसी गलत स्थान का नाम बताया था या फिर स्थान का नाम सत्य बतलाने पर ऋण लेने की बात से मुकर जाता था, साक्षियों की बात को झूठलाता था, वह प्रतिवादी पराजित समझा जाता था। "[11]

3. प्रमाण तृतीय चरण :

किसी भी वाद में सत्य—असत्य का विनिश्चय प्रमाण के आधार पर ही हो सकता था। प्रमाणों अर्थात् परिसिद्धि के साधनों का विशद वर्णन और विस्तृत नियम हमें प्रायः सभी स्मृतियों एवं कौटिल्य अर्थशास्त्र में प्राप्त है। प्रमाण चार प्रकार के कहे गए थे—लिखित (दस्तावेज), युक्ति (कब्जा), साक्षी तथा इन तीनों के अभाव

में चतुर्थ दिव्य (एक प्रकार की कठिन परीक्षा)[12] प्रथम तीन मानवी प्रमाण थे तथा अन्तिम को दैवी प्रमाण माना गया था। इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि यथासंभव मानवी प्रमाणों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

अ. मानुष प्रमाण

1. लेख्य

लिखित प्रमाण के अन्तर्गत जो लेख अपने हाथ से लिखा होता था वह साक्षियों के बिना भी प्रमाण होता था बशर्ते यह बलपूर्वक, छल या लोभ से न लिखा गया हो।[13] मनु के अनुसार जाली दस्तावेज प्रस्तुत करने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था की।"[14]

2. भुक्ति (कब्जा)

परिसिद्धि के साधनों में दूसरा स्थान भुक्ति का था। कुछ विशेष विवादों में मो भुक्ति लेख से भी अधिक बड़ा प्रमाण मानी जाती थी। यथा यदि किसी भूमि के स्वामी की आंखों के समक्ष कोई अन्य व्यक्ति उसका दास वर्षों तक भोग कर रहा है और स्वामी उसका विरोध नहीं करता हो तो ऐसी स्थिति में स्वामी का स्वामित्व समाप्त हो जाता है।"[15]

3.साक्षी :

परिसिद्धि का तीसरा साधन साक्षी था। लिखित और भुक्ति के अभाव में साक्षी का प्रमाण प्रस्तुत किया जाता था। विवाद की स्थिति में संदेह एवं विरोध उत्पन्न होने पर सत्य का पता स्वामी द्वारा ही संभव होता था।[16] स्पष्ट है कि साक्षी वही हो सकता था जिसने स्वयं देखा सुना हो एवं जो किसी अन्य व्यक्ति से सुनकर साक्ष्य न दे।"[17] कोटिल्य, मनु आदि के मत से साधारणतः किसी मुकदमें में कम से कम तीन साक्षी होने चाहिए।[18]

साक्षी के लिए कुछ योग्यताएं आवश्यक थी। मनु के अनुसार गृहस्थ, पुत्रवान, स्थाई निवासी, चारों जाति वाले लोग, निलोभी, धर्मज्ञ साक्षी हो सकते थे।[19] कौटिल्य के अनुसार विश्वासवान एवं पवित्र चरित्र का साक्षी होना आवश्यक था।[20] गौतम का कथन था कि अपने अपने वर्ग में कृषक,व्यापारी, गोपालक, महाजन और शिल्पी साक्षी हो सकते थे।[21]

स्त्री, बालक, वृद्ध (80 वर्ष सें उपर) जुआरी, मदिरापान करने वाला,उन्मत अथवा पागल, महापातकी, पाखण्डी, बहरा, गूंगा, शत्रु, चोर, ब्रह्महत्या का पाप करने वाला अयोग्य साक्षी माने गए थे।[22] काणे महोदय ने लिखा है कि स्मृतिकार साक्षियों के विषय में बहुत ही सतर्क थे।[23] उनका कहना है कि साक्ष्य देने के पूर्व विरोधी दल साक्षी की अयोग्यता सिद्ध करने का प्रयत्न करता था परन्तु साक्ष्य देना प्रारम्भ कर देने के पश्चात् विपक्षी साक्षी की अयोग्यता प्रदर्शित नहीं कर सकता था, ऐसा करने पर वह दण्ड का भागी होता था।

साक्षी परीक्षण के लिए न्यायधीश द्वारा साक्षियों को बुलाया जाता था और उन्हे शपथ लेनी पड़ती थी। प्रत्येक साक्षी से अर्थी प्रत्यर्थी के व्यवहार के विषय में पृथक–पृथक प्रश्न किए जाते थे। न्यायधीश ऐसा प्रयत्न करता था कि साक्षी असत्य न बोल पाए।[24] साक्षी के परीक्षण में भाव परीक्षण पर जोर दिया जाता था। साक्षी के भावों के आधार पर उसके सत्य–असत्य बोलने का पता लगाया जाता था। असत्य साक्ष्य देने पर साक्षी पर जुर्माना किया जाता था। यदि वह ब्राह्मण होता तो उसे देश निकाला दिया जाता था।[25] भूमि, जल, तथा मैथुन के विषय में असत्य भाषण करने पर संपूर्ण मनुष्य जाति की हत्या का दोषी होता था तथा मधु तथा धृत के विषय में असत्य भाषण करने पर पशु विषयक असत्य भाषण दोष लगता था।[26]

ब. दिव्य–

प्रमाण के रूप में 'दिव्य' का प्रचलन प्राचीन काल के विधि शास्त्र के अनूठी विशेषता स्वीकार की जा सकती है। संभवतः अथर्ववेद में इसकी प्रथम बार झलक मिलती है। इसके बाद तो उपनिषदों में भी दिव्य के उदाहरण मिल जाते है। धर्मशास्त्रों में उसके भेद और प्रकार पर व्यवस्थित ढंग से विचार किया गया। मनु, आपस्तम्ब तथा कौटिल्य जल तथा अग्नि नामक दिव्यों का उल्लेख करते है। 'दिव्य' का तात्पर्य ही है कि जहां मानुष प्रमाण विवाद के निर्णय में असमर्थ हो जाएं उसमें निर्णय करने का माध्यम दिव्य साक्ष्य थे। याज्ञवल्क्य ने संदेह निवृत्ति के लिए पांच दिव्य बताए थे तुला, अग्नि, जल, विषय और कोश। इनका प्रयोग महाभियोगों में होता था और वह भी प्रमुख अभियुक्त के लिए अभियोक्ता के जय पराजय का भागी होने पर किया जाता था।"[27] मनुस्मृति में कहा गया था कि जब अन्य प्रमाणों से निर्णय न हो सके तो स्थान, समय

एवं विवादी की शक्ति के अनुकूल दिव्य या शपथ होना चाहिए।[28] दिव्यों की संख्या में यद्यपि क्रमिक विस्तार हुआ लेकिन जहां मानवी साक्ष्य उपलब्ध हो वहां दिव्य स्पष्टतः वर्जित किया गया था।

4.निर्णय एवं कार्यान्वयन चतुर्थ चरण

याज्ञवल्क्य ने चतुर्थ पाद को सिद्धि या निर्णय का नाम दिया था। याज्ञवल्क्य के अनुसार यदि वादी साक्षी द्वारा अपने वाद को सत्य प्रमाणित कर लेता था तो वह विजयी होता था किन्तु विपरित स्थिति में वह पराजित घोषित किया जाता था।[29] धर्मशास्त्रों तथा अर्थशास्त्र ने निर्णय के आधार निश्चित किए थे, जिनके आधार पर व्यक्ति को सही न्याय प्राप्त हो सके तथा उससे संतुष्टि मिल सके। उचित निर्णय करने वाले निम्नलिखित हेतु या आधर हो सकते थे–

अ. दृष्ट दोष– अर्थात जिसके अपराध को देख लिया गया हों

व. स्वीकारोक्ति अर्थात् जो स्वयं अपने अपराध को स्वीकार कर ले

स. सरलतापूर्वक जिरह – तर्क वितर्क

द. हेतु अपराध के कारणों को उपस्थित कर देना

य. शपथ–कसम दिलाना, ये पांचों यथा–आवश्यक अर्थ को सिद्ध करने वाले होते थे।[30]

निर्णय पर पुनर्विचार के संदर्भ में प्राचीन भारतीय न्यायिक प्रक्रिया में अपील के लिए विचार्य या पुनः विचारण तथा पुनः व्यवहार दर्शनम् शब्दों का प्रयोग मिलता था। इन शब्दों के अर्थो में कोई भिन्नता नहीं की गई थी। कदाचित यह सभी शब्द उस खुदूर अतीत तमें समानार्थी रहे होंगे और इनका आशय यही होगा कि उस सम्पूर्ण विचार का विचारण प्रारम्भ से अ तक फिर किया जाए। याज्ञवल्क्य का मत था कि सभासदों द्वारा अधमपूर्वक देखे गए व्यवहारों प राजा निर्णय पर पुनः विचार करे तथा गलत निर्णय को बदले।"[31]

न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व राज्य पर था।

न्यायालय शुल्क–

न्यायालय शुल्क का विषय विद्वानों के मध्य विवाद का विषय रहा है। लेकिन यह निर्विवाद है कि प्राचीन भारतीय न्याय पद्धति में विवाद प्रस्तुत करने से पूर्व किसी भी प्रकार का शुल्क नहीं देना पड़ता था। जो कुछ भी उद्धरण इस विषय पर यत्र–तत्र मिलते है वे इस बात को पूर्णतया स्पष्ट कर देते है कि उस समय न्यायालय शुल्क तो नहीं था किन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों में उभय पक्ष को जुर्माना अवश्य देना पड़ता था और यह जुर्माना राजा को दिया जाता था। यदि आवेदक का पक्ष असत्य सिद्ध हो जाए तो वह सम्पत्ति का दुगुना राज्य को दण्ड रूप में देता था।[32]

न्यायाशुल्क का कोई नियम प्राचीन भारतीय व्यवस्था में नहीं था। पराजित पक्षकार दण्ड रूप में व विजयी उपहार रूप में एक निश्चित अंश राजा को देते थे, जिसे कहीं कहीं राजा की भृति कहा गया था। वर्तमान शुल्क व्यवस्था की कठिनाईयां तथा जटिलताएं तब नहीं थी।

संदर्भ ग्रंथ

1. वैदिक इंडेक्स, जिल्द 1. पृ. 391–392
2. शतपथ ब्राह्मण 5/4/4/7
3. गौतम धर्मसूत्र 3/10/48–49, आपस्तंब धर्मसूत्र 2/11/5.,बौधायन धर्मसूत्र 1/1/7–16
4. मनुस्मृति 8/4–7
5. याज्ञवल्क्य स्मृति, हिन्दी व्याख्याकार, डॉ. उमेशचन्द्र पाण्डेय, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1983, 2/5
6. वहीं 2/6
7. अर्थशास्त्र 3/1/57–58/19 7.
8. वहीं 3/20/74–75/28
9. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/7
10. अर्थशास्त्र 3/1/57–58/40–41
11. वहीं 3/1/57–58/21–30
12. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/22
13. वहीं 2/89

14. मनुस्मृति 9/232
15. वहीं 8/147
16. वहीं 8/74, अर्थशास्त्र 3/11/63 सम्पूर्ण अध्याय
17. वहीं 8/74–76
18. वहीं 8/60, अर्थशास्त्र 3/11/63/32
19. वहीं 8/62–63, अर्थशास्त्र 3/11/63/66
20. अर्थशास्त्र 3/11/63/32
21. गौतम धर्मसूत्र 2/2/21
22. अर्थशास्त्र 3/11/63/40–41
23. काणे, पी.वी., पूर्वोक्त भाग–2, पृ. 138
24. गौतम धर्मसूत्र 1/10/19
25. मनुस्मृति 8/117, 123
26. गौतम धर्मसूत्र 2/4/16–20
27. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/95
28. मनुस्मृति 8/109
29. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/8
30. अर्थशास्त्र 3/1/57–58
31. याज्ञवल्क्य स्मृति 2/305–306
32. मनुस्मृति 8/139

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 75-79
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कौटलीयार्थशास्त्रे द्वितीसमधिकरणमेकमध्ययनम्।

Dr.R.Seshadri, Head & Assistant Professor,
Department of Sanskrit,Swami Dayananda College of Arts & Science,Manjakkudi, ThiruvarurTamilnadu

आधुनिके विश्वेऽस्मिन् विद्वत् जनैः समादृतस्य कौटलीयार्थशास्त्रस्य पञ्चदशाधिकरणानि वर्तन्ते। तत्र प्रधानतया विभागद्वयमलङ्करोति। तन्त्रनामके प्रथमे विभागे प्रथमाधिकरणमारभ्य पञ्चमाधिकरणं यावत् राष्ट्रस्य आभ्यन्तरं प्रशासनमालोच्यते ग्रन्थकारेण। आभ्यन्तरप्रशासनकर्मभिरेव राज्ञा स्वप्रकृतीनां सुरक्षा समृद्धिश्च यथायथं विधीयते। तत्र तन्त्रान्तर्गतान्यधिकरणानि- **विनयाधिकारिकम्। अध्यक्षप्रचारः। धर्मस्थीयम्। कण्टकशोधनम्। योगवृत्तञ्चेति।**

द्वितीये विभागे षष्ठाधिकरणादारभ्य त्रयोदशाधिकरणपर्यन्तं प्रतिवेशिराजन्यैः सह राज्ञः सम्बन्धविषये अनुपालनीयविधानानि उपस्थापितानि। तत्र विद्यमानाधिकरणानि-**मण्डलयोनिः। षाड्गुण्यम्। व्यसनाधिकारिकम्। अभियास्यत्कर्म। साङ्ग्रामिकम्। सङ्घवृत्तम्। आबलीयसम्। दुर्गलम्भोपायः।** औपनिषदिकं तन्त्रयुक्तिश्चेति अधिकरणद्वयं मिश्रविषयाश्रितं वर्तते। प्रत्येकस्याधिकरणस्य आलोचनं क्रियतेऽधुना।

द्वितीयम् अध्यक्षप्रचराख्यमधिकरणम्-

अध्यक्षप्रचार इत्याख्ये द्वितियाधिकरणे षडत्रिंशाध्यायाः, अष्टत्रिंशत् प्रकरणानि च वर्तन्ते। राज्ये विद्यमानानां विविधविभागानां तदध्यक्षादीनां च कार्यसमूहानां कार्यपद्धतीनां च वर्णनमिह विद्यते।

1. अत्रादौ **प्रथमाध्ये जनपदविनिवेश** नामके एकोनविंशप्रकरणे ग्रामसंरचनाविषये बहुविधोपदेशाः प्रोक्ताः। परिकल्पितजनसंख्यानुसारं **ग्रामनिर्माणस्य, संख्याधिक्येन ग्रामेषु, शूद्र-कृषकयोः संस्थापनस्य, याज्ञिकाचार्य-पुरोहितादिभ्यो, ब्रह्मोत्तरादि भूमिप्रदानस्य, कृषकेभ्यः कृषिभूमिशस्य, पशुधान्यादि प्रदानस्य, राजकोशस्य अवस्थानुगुणं करविमुक्तेः खनि-कर्मान्त, द्रव्यवन-हस्तिवन-गोशालानां, वाणिज्यपथानां च कार्यनिरन्तरतासुरक्षयोः जलसेचन व्यवस्थायाः अनाथवृद्धनिसन्तानादीनां रक्षणपोषणयोः अविरतकृषि कार्यकरणस्य** च सदुपदेशाः प्रमुखतया प्रकरणे अस्मिन् सन्निविष्टा। प्रकरणस्यास्य अकृतकृषिकार्यभूस्वामिनां क्षेत्राणि हृत्वा अन्येभ्यः कृषिकार्यार्थं प्रदानव्यवस्था सूचितः। कृषिम् अकुर्वद्भ्यश्च या क्षतिर्भवति तस्याः सम्पूरणव्यवस्था च कौटल्यकालिकां भूसम्पदुपयोगसचेतनतां सूचितः।

2. **द्वितीयाध्यायस्य भूमिच्छिद्रापिधाननामकं** विंशप्रकरणं भूमि-व्यवस्थापनदृष्ट्या गुरुत्वपूर्णं वर्तते। पशुचरणक्षेत्रार्थं, तपस्विनां यज्ञाध्यायनादिकार्यार्थं, मृगद्रव्यहस्तिनां वननिर्माणार्थं च कृष्यनुप-

योगिभूमेरुपयोगः करणीयः इत्यत्र वर्णितः। अनुपयुक्तभूमीनामपि प्रयोगव्यवस्था कौटल्येनात्र विहिता यस्यानुकरणं वर्धितजनसंख्याकुलितस्य विश्वस्य कृते हिताय एव अस्ति।

3. **तृतीयाध्याये दुर्गविधाननामके** एकविंशप्रकरणे देशस्य सुरक्षार्थं प्राकृतिकदुर्गस्य, जलदुर्गस्य, पर्वतदुर्गस्य, मरुत्दुर्गस्य, वनदुर्गस्य करादिसंग्रहार्थं व्यवहृतस्य अष्टशतग्रामकेन्द्रेषु निर्मितानां स्थानीयनामकभवनानां निर्माणविधेर्निर्देशा विधीयति कौटल्यः।

4. **चतुर्थेऽध्याये दुर्गनिवेशनामके द्वाविंशप्रकरणे** दुर्गरक्षितस्य विन्यासः आलोच्यते। इह खलु राजमार्गाणां पथानां (**द्रोणमुख-पथानां, स्थानीयपथानां, राष्ट्रपथानां, पालितपशुसञ्चरणतृण-जलादि भूयिष्ठप्रदेशपथानां (विवीतपथानाम्), पुष्पफलशाकाद्यु-द्यानपथानां (सेतुपथानां), वनपथानां, पोताश्रयव्युहश्मशानग्राम-पथानां, हस्तिपथानां, क्षेत्रपथानां, रथपथानां, गो-महिष-मेषादिपशुपथानाञ्च**) च निर्माणविस्तारस्थानादिनिर्देशाः कौटल्येन कृतः। आचार्यपुरोहितवासगृहानां मन्त्रिभवनानां यजस्थानजल-स्थानानां पाकशालाहस्तिशालाक्षारगृहाणाञ्च निर्माणनिर्देशा इह उपलभ्यन्ते। दिश्यनुगुणं स्थानानुगुणञ्च ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशुद्राणां नास्तिकानां चाण्डालानां कर्मान्ताध्यक्षसैन्याधिकारवनिग्वेश्यानटानां विविधकर्मजीविनाञ्च आवास निदेशादि विषया अप्यत्रालोचिताः। कुप्यागारास्त्रागाराणां कर्मशाला यानशालारथशालानां मन्दिराणां तीर्थस्थानानां विविधद्रव्यागाराणाञ्च निर्माणोपदेशाः निरूपयन्ति।

5. **पञ्चमे अध्याये संनिधातृनिचयकर्मनामके** त्रयोविंशप्रकरणे संनिधातृनामकेन भाण्डागाराध्यक्षेण निर्मातव्यानां कोशगृह-पण्यगृह-कोष्ठागार-कुप्यगृह-अस्त्रागार-बन्धनागाराणां निर्माणविधयश्च आलोचिताः।

6. **षष्ठाध्याये समाहर्तृसमुदयप्रस्थापननामके चतुर्विंशप्रकरणे** राष्ट्रस्य अर्थसमृद्ध्यर्थं राजस्वप्रवर्तनकर्ता करणीयानां व्यवस्थावलीनां विस्तृतविवरणं विवृतम्। दुर्ग-राष्ट्र-खनि-सेतु-वन-व्रज-वणिक्पथश्चेति सप्तानाम् आयशरीरविभागानां मूल्य-भाग-व्याजी-परिघ-क्लृप्त-रूपिकमत्ययश्चेति सप्तानाम् आयमुखविभागानां व्ययशरीरविभागानां विविधसमयविभागानां, करणीयसिद्धशेषायव्ययनीवीति षण्णां राजस्वसम्पर्कित विभागानां विविधोपविभागानाञ्च विस्तृत व्याख्यानं प्रकरणेऽस्मिन् समुपस्थापितम्। राष्ट्रियार्थस्य सम्यक् आहरण विभाजन वितरणादि कार्यार्थम् Surplus Budget इति ख्यातस्यायाधिकवित्तयोजनायाः सम्यगुपयोगार्थञ्च प्रकरणोक्तविवरणानि महत्वपूर्णानि वर्तन्ते। प्रकरणमिदं शोधग्रन्थस्य द्वितीये तृतीये चतुर्थे च अध्याये विस्तारपूर्वकमालोचयिष्यते।

7. **सप्तमाध्याये अक्षपटले गाणनिक्याधिकार** नामके पञ्चविंशप्रकरणे गणनाध्यक्षस्य गणनाकार्याणां राजकीय कर्मदिवसानां राजकीय विभागेभ्यः प्रेषितव्यानां राजस्वसम्पर्कितानां विविधानां नीतिनिर्देशा-वलीनां राजस्वहानिकारणानां राजस्वसम्पर्कितापराधदण्डानाञ्च समुल्लेखो वर्तते। शोधग्रन्थस्य द्वितीये चतुर्थे चाध्याये प्रकरणोक्ता विषयाः सविस्तारमालोचयिष्यते। लघुष्वपराधेषु क्षमा स्वल्पेषु अपि राजस्वषु तुष्टिः राष्ट्रोपकारिभ्य अध्यक्षेभ्यः सम्मानप्रदर्शनं प्रकरणस्यास्य सारोपदेशा वर्तन्ते। राष्ट्रस्य शान्तिसमृद्धि समुन्नयनेभ्य एतादृशानामुपदेशानाम् अनुपालनमावश्यकं वर्तते।

8. राजकर्मचारिभिरपहृतानां राजस्वानां पुनरुद्धारविषयः **अष्टमाध्याये समुदयस्य युक्तापहृतस्य प्रत्यानयनमि**ति षड्विंशप्रकरणे वर्णितः। इह खलु नवप्रकाराणां कोशवृद्ध्युपायानाम् अष्टप्रकाराणां कोश-क्षयकारणानां धनमात्मसात्कारिणां चत्वारिंशत्प्रकाराणां धनहरणो-पायानां कोशक्षयकारिभ्य धनहरणकारिभ्यश्च प्रयुक्तानां विविधार्थ-दण्डादिविधानानां विस्तृततया व्याख्यानं कृतम्। कोषक्षयधन-हरणादिसूचकेभ्यः प्रमाणितक्षयहृतांशानां षष्ठांश प्रदानोपदेशश्च राष्टियार्थसुरक्षार्थं विहितो वर्तते इति प्रकरणेनानेन ज्ञायते। नियुक्तपुरुषैरपहृतस्यार्थस्य पुनरुद्धारार्थं विविधोपायसम्बलितमिदं प्रकरणं कोषवृद्धिनिमित्तं व्यवस्थितमस्ति इत्यनुमीयते।

9. **नवमाध्याये उपयुक्तपरीक्षा** नामकं सप्तविंशप्रकरम् अध्यक्षाणां कार्यपरिदर्शननिर्देशैरुपनिबद्धम्। गुप्तचरप्रयोगेण राजकर्मचारिणाम् आयव्ययादीनां परिदर्शनस्य मूलहर-तदात्विक-कदर्याख्यानां त्रिप्रकाराणाम् अध्यक्षाणां नियन्त्रणस्य, विषयाध्यक्षाणां कार्यकरणविधेश्च सदुपदेशाः प्रकरणेऽस्मिन् विवृताः।

10.**दशमाध्याये शासनाधिकार** नामके अष्टाविंशप्रकरणे निर्देशपत्राणां गुणविषये, तल्लेखकानां गुणागुणविषये, निर्देशपत्रोत्कर्ष-वर्धकाणां गुणावलीनां, वर्णपदवाक्यानां, विविधानां निर्देशपत्र-लेखनपद्धतीनां, नानाप्रकाराणां सामदान दण्डभेदेति चतुर्णाम् उपायानां च विस्तृतव्याख्यानानि समुपलभ्यन्ते।

11.**एकादशाध्याये कोशप्रवेश्यरत्नपरीक्षानामके** एकोनत्रिंशप्रकरणे राजकोशार्थं संग्रहितव्यानां मूल्यवतां वस्तूनां परीक्षणनिर्देशाः, विविधानां मुक्तामणिहिरकाणां चन्दनागरुतैलपर्णिकादिसारद्रव्याणां चर्मवस्त्राणाञ्च गुणप्रकारस्थानानां, कोशाध्यक्षेण ज्ञातव्यानां द्रव्यसम्पर्कितपरिमाणमूल्य लक्षण श्रेण्याकृति-संरक्षणव्यवस्थादीनां च विस्तृत विवरणम् इह चर्चितम्।

12.**द्वादशाध्याये आकरकर्मान्तप्रवर्तननामके** त्रिंशत्प्रकरणे विविध धातुविद्याभिज्ञ सहयोगेन आकराध्यक्षकरणीय खनि-परीक्षणस्य, शिलाजतुप्रभृतीनां सुवर्णरसानां, सुवर्ण-रूप्य-ताम्र-सीस-त्रपु-तीक्ष्ण-वैकृन्तक-मणीति अष्टप्रकाराणां धातूनां विविधलक्षणानां, खन्योत्पन्नपदार्थानां तत्तत् खनिगतकर्मान्तेषु उपयोगनिर्देशस्य च वर्णनम् सविस्तारं विशदीकृतम्। तथैवात्र खनिजधातुद्रव्याणां विविधवाणिज्य नियमानाम् अपराधदण्ड विधानानां खनिगतनियोगानां विविधकर्मान्त स्थापनस्य मुद्रानिर्माणस्य मुद्रापरीक्षणस्य वाणिज्य सञ्चालनस्य लवणाध्यक्षेण ग्रहितव्यानां विविधानां शुल्ककरार्थदण्डादीनां खन्यध्यक्षेण संग्रहितव्यानां विविधानां कराणां शुल्कानाम् अत्ययानां (Penalty), रूपिकानां (Manufacturing charges), धातूनां धातुनिर्मितद्रव्याणां च वर्णितम्।

13.**त्रयोदशाध्याये अक्षशालायां सुवर्णाध्यक्ष**नामके एकत्रिंश-प्रकरणे आकरलब्धधातुषु सुवर्णरजतयोः अक्षशालानिर्माणविधेः, सौवर्णिकाणां संस्थापनोपदेशस्य, सुवर्णरजतयोः प्प्तिस्थान-प्रकार-गुण-व्यवहारदीनाम् अक्षशालाप्रवेशिनां नियुक्तकर्मकराणां शरीर-परीक्षणकार्यविधेः, विविधालंकार-निर्माणविधेः, अलंकारगुणावलीनाञ्चविस्तृतविवरणानि समुल्लिखितानि।

14.**चतुर्दशाध्याये विशिखायां सौवर्णिकप्रचारना**मकं द्वात्रिंशं प्रकरणं सन्निविष्टम्। अत्र प्रोक्तानि विषयानि- राजसौवर्णिकसुवर्णशिल्पिनां कार्यविधिनिर्देशाः। अलङ्कार निर्माणदोषापराधादि विषये प्रयुक्तार्थदण्डविधानानि। राजसौवर्णिकज्ञातव्याः सुवर्णशिल्पिनिर्मितानां सुवर्णानाम् अलङ्काराणाञ्च

लक्षणव्यवहारादिविषयाः। सुवर्णशिल्पिनां कार्याणि, सुवर्णरजतचोरोपायाः। सौवर्णिकेण परीक्षणीयानां द्रव्याणां विवरणम्। विविधपरीक्षणपद्धतीनां सौवर्णिकज्ञातव्यानां, हीरकादिरत्नानां, जात्याकृतिवर्ण-परिमाणानां, रत्ननिर्मितद्रव्याणां च यथायथविवरणानि प्रकरणेऽस्मिन् सन्निविष्टानि। सुवर्णरजतयोर्वाणिज्यिकव्यवस्थायाः सुष्ठुसञ्चालनेन राष्टियार्थिकप्रगतिवर्धनमेव प्रकरणोक्तनिर्देशानां मुलोद्देश्यमस्ति इत्याभाति।

15. **पञ्चदशाध्याये कोष्ठागराध्यक्षनामके** त्रयस्त्रिंशप्रकरणे उपस्थापित विषयाः- राजकीयखाद्यद्रव्यागारस्य कोष्ठागारस्य वा अध्यक्षस्य दायित्वकर्तव्ययोः, मनुष्याणां पशुपक्षिणां च खाद्यसामग्रीणां, खाद्यपरिमाणानां च विस्तृत विवरणमुपस्थापितम्। कोष्ठागाराध्यक्षज्ञातव्यविषयाणां स्नेहक्षारलवणगतानां शुक्ताम्लकटुशाकवर्ग द्रव्याणां, विविधद्रव्याणां, गुणपरिमानादिविषयाणां, विष्ट्यन्तर्गतविभागानां (कर्मकरविभागानां), च पर्यालोचनं प्रकरणेऽस्मिन् सन्निविष्टम्। देशवासिनां दुर्भिक्षादिविपद्भ्यः परित्राणार्थं खाद्यद्रव्याणाम् अर्धांशस्य संरक्षणोपदेशः स्थितार्धस्य व्यवहारोपदेशः रिक्तांशस्य सम्पूरणोपदेशश्च प्रकरणस्यास्य सारोपदेशा वर्तन्ते। आधुनिकविश्वस्य खाद्याभावपिडीतानां जनानां बुभुक्षानिवारणार्थं कल्पद्रुमा भवितुमर्हन्ति।

16. **षोडशेऽध्याये पण्याध्यक्षनामके** चतुस्त्रिंशप्रकरणे पण्याध्यक्षस्य वणिज्यपरिचालननियन्त्रणादिविषया उपवर्णिताः। स्थलपथागतानां विविधमूल्यवतां वस्तूनां मूल्यभेदप्रयोजनीयतादिविषयाणां ज्ञानपूर्वकं विविधवाणिज्यव्यवहारेण आयातनिर्यातादिवाणिज्यसञ्चालनेन च अर्थसमृध्यर्थं पण्याध्यक्षेण करणीयानां विविध वाणिज्य सम्बन्धिव्यवस्थावलीनां निर्देशाः प्रकरणेऽस्मिन् उपलभ्यन्ते। राष्ट्रियवाणिज्यस्य सम्यग् परिचालनेन सुनियन्त्रणेन च राष्ट्रियार्थस्य सुरक्षाविधानं यथा भवेत् तथा कौटल्येन प्रकरणेऽस्मिन् उपदिष्टम्।

17. **सप्तदशाध्याये कुप्याध्यक्षनामके** पञ्चत्रिंशप्रकरणे पर्यालोचितः विषयः कुप्याध्यक्षस्य वन्यसम्पदामध्यक्षस्य वा दायित्वकर्तव्यः। वन्यसम्पदाहरणं, द्रव्यवनकराद्याहरणं, वन्यसम्पदाकर्मान्तस्थापनं, कर्मान्तेषु जनानां नियुक्तिश्चेति कुप्याध्यक्षस्य दायित्वपूर्णकार्यविभागाः प्रकरणेऽस्मिन् चिह्निता। वनपालसहयोगात् कुप्याध्यक्षाहरणीयानां द्रव्यवनोत्पन्न सार,दारु,वेणु,वल्ली,वल्कल विषवर्गान्तर्गतानां द्रव्याणाञ्चविवरणमिह वर्णितम्। तथैव विविधानां रज्जूत्पादनसामग्रीणां पत्र,पुष्प,कन्द,मूल,फलादीनां नानाजन्तूनां चर्मास्थि शृङ्गादीनां लौह,ताम्र,शीशादीनां वेणुमृत्पात्राङ्गारतुषभस्मादीनां द्रव्यवनोत्पन्नवस्तूनाञ्च विवरणानि प्रकरणेऽस्मिन् मण्डितानि। वन्यसम्पदा श्रृङ्खलितविभाजनं च। कर्मान्तस्थापनेन जनानां नियुक्तिश्च कौटल्यकालस्य सम्पत्सचेतनतां नियोगजागरुकतां प्रदर्शयतः ययोरनुकरणम् अद्यावधि करणीयं समाजहितचिन्तकैः।

18. **अष्टादशाध्याये** विस्तारिते **आयुधागाराध्य**क्षनामके षड्त्रिंशप्रकरणे आयुधागाराध्यक्षेण निर्मातव्यानां संग्रहीतव्यानाञ्च प्रतिरक्षाक्रमणसुरक्षादि विधायकानां दशविधस्थितयन्त्राणां सप्तदशविधचलयन्त्राणां एकादश विधहलमुखनामकयन्त्रविशेषाणांत्रिविधधनूनां पञ्चविधशराणां त्रिप्रकाराणां खड्गानाम् सप्तप्रकाराणां क्षुरास्त्राणां चतुर्पकाराणां शैलास्त्राणाम् अष्टप्रकाराणां वर्माणां षोडशप्रकाराणाम् आवरणानाञ्च सविस्तृतं परिसंख्यानं समुपस्थापितं कौटल्येन आयुधागाराध्यक्षेण

ज्ञातव्यानाम् अस्त्रनिर्मातृकारुशिल्पिनां कर्मपरिमाणसमयवेतनानाम्, अस्त्रादीनां श्रेणी-रूप-लक्षण-परिमाण-प्राप्तिस्थान-मूल्य-संरक्षणस्थानानाम्, धनुशरप्रत्यञ्चाखणादीनां निर्माणार्थम् आवश्यकीयानां वस्तुजातानाम्, राजेच्छा - वन्यकर्मपरिचालन द्रव्यनिर्माण - प्रतारण - लाभ - हानि--व्ययानाञ्च विस्तृतविवरणेन प्रकरणमिदं सम्पूरितम्। प्रतिरक्षासुरक्षाक्रमणादिदृष्ट्या प्रकरणमिदं प्रकल्पितम् इत्याभाति।

19. **ऊनविंशाध्याये** आलोचिते तुलामानपौतवनामके सप्तत्रिंशप्रकरणे पौतवाध्यक्षसंज्ञस्य परिमापनाध्यक्षस्य करणीयकार्याणां समुल्लेखो विद्यते। तुलामानयोः (Weights & Measures), विविधानां मापपात्रप्रतिमानादीनां निर्माणकर्मान्तस्थापनोपदेशस्य, विविधमापप्रकाराणां, सुवर्णरजतपरिमापनप्रतिमानानां, प्रतिमाननिर्माणद्रव्यानां, तुलानिर्माणविधीनां, मानपात्रनिर्माणविधीनां, मानपात्रतुलामूल्यानां, तुलायां मानपात्रे प्रतिवेधनिकसज्ञायाः च प्रतिवेधनिकसज्ञायाः पौतवाध्यक्षपिहितमुद्रायाः, विविधवाणिज्यिककरादीनां च सुस्पष्टं व्याख्यानं प्रकरणेऽस्मिन् वर्तते। प्रकरणोक्तमापादिविषयाणां महत्त्वपूर्ण स्थानं आधुनिककालिकवाणिज्यविषयेऽपि वर्तते।

20. **विंशाध्याये देशकालमाननामकम्** अष्टत्रिंशप्रकरणं सन्निविष्टं वर्तते। मानाध्यक्षेण ज्ञातव्यानां स्थानकालपरिमाणानां स्थानकालविभागानाञ्च विवरणानि प्रकरणेऽस्मिन् विस्तृतानानि। परमाणु इत्यारभ्य योजनपर्यन्तं षड्विंशद्विधानां देशमानविभागपरिमाणानां सप्तदशप्रकाराणां समयमानविभागपरिमाणानां चालोचनं कौटल्यकालिकस्य व्यवस्थितसमाजावस्थाया वाणिज्यसम्पर्कित नीतिनाञ्च चित्रम् अङ्कयति।

21. **एकविंशाध्याये द्वाविंशाध्याये च शुल्काध्यक्ष**नामकम् एकोनचत्वारिंशत् प्रकरणं विस्तृतमस्ति। अत्र खलु आदौ एकविंशाध्याये शुल्काध्यक्षस्य विविधकर्तव्यानां वर्णनं विहितम्। यत्र शुल्कशालानिर्माणस्य, शुल्कसंग्राहकैः वणिक्परिचयादि ज्ञानाहरणस्य, शुल्कसम्पर्कित दण्डप्रदानस्य विधानानि निर्दिष्टानि। आयातनिर्यातद्रव्यविभागानाम्, अन्तपालेन आहरितव्यानां शुल्कादीनां, परदेशवणिग्वस्तु तथ्यानाम्, आयातवस्तूनाम् उपयोगित्वं विचार्य, ग्रहणाग्रहणविषये निर्णयग्रहणस्य दुर्लभद्रव्यशस्यादीनां शुल्कविमुक्तिविषयस्य वर्णनं चात्र उपलभ्यन्ते।

22. **द्वाविंशाध्याये** शुल्काध्यक्षस्य शुल्कसूची विभाजिता वर्तते। ग्रामनगरादि तथ्यभेदेन त्रिप्रकाराणां पण्यसामग्रीणां, निष्क्राम्यशुल्कं, प्रवेशशुल्कञ्चेति द्विविध शुल्कस्य विवरणम्, आयातद्रव्यशुल्कनिरूपणस्य विवरणम्, पुष्प, फल, शाक, वस्त्र, जन्तु, सूत्रादि शुल्कानां विवरणं, शंख, वज्र, मणि, मुक्ता, प्रवालहाराणां मूल्य निरूपणविधेः विवरणं, पण्यद्रव्य आहरण क्रयविक्रयादि सम्पर्कितार्थदण्डानाञ्च सुस्पष्टविवरणेन अध्यायोऽयं सम्पूरितः। राष्ट्रियार्थनीतेः सम्यग् प्रवर्धनार्थं पण्यवाणिज्यनियन्त्रणार्थञ्च शुल्काध्यक्षस्य करणीयकर्तव्यानां, शुल्कसूचेश्च समूल्लेख साम्प्रतिककालेऽपि अनुकरणीयो वर्तते।

23. **त्रयोविंशाध्याये सूत्राध्यक्षनाम**के चत्वारिंशप्रकरणे सूत्राध्यक्षस्य विविधकार्यविधय आलोचिता। सूत्र-कवच-वस्त्र-रज्जवादि कर्मसु विविधकर्मकर नियुक्तेः विषयाः प्रकरणेऽस्मिन् उपदिष्टाः। एवं वेतनकर्मपरिमाणसमयादि निर्धारणस्य, सूत्रपरीक्षणस्य, विविधार्थदण्ड विधानेन विविधापराधनियन्त्रणस्य च विषयाः प्रकरणेऽस्मिन् उपदिष्टाः।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 80-82
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

शिल्परत्न के अनुसार भूमि के प्रकार

वीणा शर्मा (शोध छात्रा),
जम्मू विश्वविद्यालय जम्मू

भूमि प्राणी मात्र का आधारभूत अंग है। यह पृथ्वी का वह सतह क्षेत्र है, जहाँ मनुष्य अपने आवास, कृषि, उद्योग एवं अन्य गतिविधियों का संचालन करते हैं। भूमि मात्र एक प्राकृतिक संसाधन ही नहीं, अपितु हमारे जीवन हेतु महत्वपूर्ण आवश्यकता भी है। बिना भूमि के न तो भोजन उत्पादन सम्भव है न आवास निर्माण एवं न ही आर्थिक गतिविधियाँ। भूमि से ही अनाज, पानी तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त होती हैं।

भूमि हमारे जीवन के प्रत्येक पहलू से जुडी हुई है, भूमि के महत्व को समझते हुए यह भी आवश्यक हो जाता है कि हम भूमि के अलग–अलग प्रकारों को भी समझें। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से शिल्परत्न के अनुसार भूमि के प्रकारों पर दृष्टि डालेंगे।

शिल्परत्न में संज्ञा की दृष्टि से चार प्रकार की भूमियाँ बताई गई हैं–

1) पूर्णा
2) सुपद्मा
3) भद्रा
4) धूम्रा।

पुर्णा भूमि– **प्लक्षन्यग्रोधनिम्बार्जुनबकुलकुलस्था (प.स.) नाशोक**
निष्पावाV़लैर्मालतीचम्पकतिलखदिरैः कोद्रवैर्मुद्रितावा
भूमिर्या भूधराधीश्वरशिखरगता पार्श्वेसंस्थाथवाद्रेः
पूर्णा सा पुष्टिदात्री सुरनिलयसमाकल्पने स्वल्पतोपा।।[1]

जिस भूमि पर पाकड़, बरगद, निम्ब, अर्जुन, बकुल, कुलस्थ, आसना, अशोक, निष्पाव, अंकोल, भालती, चम्पक, तिल, खदिर आदि के पेड़ उगते हों, तथा जो भूमि पहाड़ों के शिखरों या पहाड़ो के आस–पास स्थित हो, उसे पूर्णा संज्ञा प्रदत्त है, यह भूमि पूष्टिदायक होती है, इसे देवगृह तुल्य जानना चाहिए, चाहे उस भूमि पर पानी कम मात्रा ही क्यों न हो।

सुपद्मा भूमि– **कर्पूरागरूनालिकेरतिलकैर्दर्भैः कदम्बार्जुनैर्मालयेः**
क्रमुकेधुकेतककुशैः कुन्दारविन्दोत्पलैः
पूर्वोदकूप्लवशालिनी बहुजला वा या दरीदृश्यते
सेयं शान्तिकरी सुरेशयजने सूक्ता सुपद्मा मही।।[2]

सुपद्मा भूमि कपूर, अगरू, नारियल, तिल, दर्भ, कदम्ब अर्जुन, मालय, सुपाड़ी के वृक्ष, गन्ने उगाने वाली, केतकी, कुश–कुन्द, कमल, उत्पल आदि उत्पन्न करने में समर्थ होती है। यह भूमि शान्ति प्रदान करने वाली, पूर्व दिशा में पानी के बहाव वाली एवं बहुत जल वाली दिखलाई पड़ती है इन्द्र जैसे देवताओं की प्रतिष्ठा अथवा उनके यज्ञ करने के लिए योग्य होने के कारण इस भूमि को आगमों ने भी स्वीकार किया है।

भद्रा भूमि– **तीरं वारिनिधेः श्रिताथ सरितस्तीर्थस्य वा दक्षिणे**

व्रीहिक्षेत्रविचित्राप्यदिशि यज्ञार्हाङ्घ्रिपैरVता।
कीर्णा पूर्णफलप्रसूनतरुभिर्योद्यानहृद्यापि वा भद्रा
सा परिगीयते वसुमती प्रीतिपदा यज्वनाम्।।[3]

जो भूमि समुद्र के तट पर, किसी प्रसिद्ध तीर्थस्थान के दक्षिणी भाग, चावल के खेतों के पश्चिम में स्थित हो, तथा जिस भूमि पर यज्ञ उपयोगी पलाश आदि के पेड़ उगे हुए दृष्ट हों तथा जो फलों—फूलों से भरे वृक्षों से युक्त, पवित्रता से परिपूर्ण हो उसे भद्रा संज्ञा प्रदत्त है। यह भूमि यजमानों के लिए प्रियदायिनी तथा कल्याणकारी होती है।

धूम्रा भूमि— **अकैर्वणुविभीतकैः स्त्रुहियुतैः श्लेष्मातकैः पीलुभिः**
सVीर्णा बहुशर्करा च कठिना गर्भान्विता सोषरा
गृध्न—श्येन—वराह, वायस—शिवाशाखामृगैः सन्तंत
जुष्टा यष्टुरनिष्टदा निर्गादता धूम्रा मही सुरिभिः।।[4]

जिस भूमि में आक के पौधे, बाँस, लसोड़ा, पीलु के वृक्ष हों, जो थूहर से गिरी हुई, रेतीली, कठोर, पोली—खोखली एवं ऊसर हो तथा जिस पर सदैव गिद्द, बाज, सुअर, कौए, लोमड़ियाँ, वानर आदि घूमते रहते हों, उस भूमि को विद्वानों ने धूम्रा संज्ञा प्रदत्त की है। ऐसी भूमि यजमानों के लिए अमंगलकारी होती है अर्थात् अनिष्ट करने वाली होती है।

एतदतिरिच्य भूमि के अन्य चार भेद भी प्राप्त होते हैं—

1) वारुणी 2) माहेन्द्री 3) आग्नेयी 4) वायवी

वारुण्यैन्द्री तथाग्नेयी वायवी भूश्चतुर्विधा।
तद्भवा च शिला ज्ञेया तन्नामा शुभदा शुभा।।[5]

वारुणी भूमि—

या कोमलतरुव्राता स्वतः पुष्पितकानना
जलाशयैश्च सर्वत्र युक्ता भूर्वारुणी स्मृता।।[6]

वह भूमि जिसे स्वयं से ही प्रस्फुटित पुष्पों से सुशोभित वन का समूह प्राप्त हो, तथा जो भूमि सभी ओर जलाशयों से युक्त हो, उसे वारुणी भूमि कहा जाता है। अर्थात् भूमि की यह विशेषता होती है कि स्वयं में सुन्दरता तथा हरियाली को धारण करती है, जलाशयों से समृद्ध होती है, तथा हर स्थान में समान रूप से विद्यमान रहती है।

ऐन्द्री भूमि—

या क्षीरवृक्षबहुला सौम्ये यस्या जल महत्
व्रीहिक्षेत्रं च याम्यायां सा माहेन्द्री क्षितिः स्मृता।।[7]

ऐसी भूमि जिस पर दूध वाले पेड़ो की अधिकता हो, जिसकी उत्तर की ओर काफी जल हो, तथा दक्षिण दिशा में धान के खेत हों, उस भूमि को 'माहेन्द्री' संज्ञा प्रदत्त है।

आग्नेयी भूमि—

गृध्र—कV—वराह—र्क्ष—श्येन—गोमायु—वायसैः
संयुक्ता दूरपानीया भूराग्नेयी विनिन्दिता।।[8]

जिस भूमि पर सदैव गिद्ध, बगुले, सुअर, रींछ, नीलगाय एवं कौए दिखाई देते हों तथा पानी की प्राप्ति न हो अर्थात् पानी बहुत दूर हो, उस भूमि को आग्नेयी कहा गया है। ऐसी भूमि सर्वदा निन्दित होती है, इसे त्याग देना चाहिए।

वायवी भूमि—

अक्षस्नुहिकलिXार्कपीलुश्लेष्मातकण्टकैः
युक्ता या निर्जला भूमिरशुभा वायवी स्मृता।।[9]

जिस भूमि पर जल की प्राप्ति न हो अर्थात् जल के अभाव वाली भूमि, तथा बेहड़ा, थूहर, कलिX, आक, पीलु, लसौड़ा, कांटेदार पेड़ उगते हों, उसे 'वायवी' संज्ञा दी गई है। ऐसी भूमि अशुभ मानी गई हैं, इस भूमि का त्याग कर देना चाहिए।

एवमेव विष्णुसंहिता में भी सुपद्मा, भद्रिका, पूर्णा एवं धूम्रा भूमि की वर्णन प्राप्त होता है तथा गुण के अनुसार उत्तमा, मध्यमा एवं अधमा भेद प्राप्त होते हैं–

त्रिद्योत्तमाधमा मध्या चतुर्धा जातिभेदतः
सुपद्मा भद्रिका पूर्णा धूम्रेत्यपि तथैव भूः।।[10]

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. शिल्परत्नम् , (पूर्व भाग) अध्याय–3, श्लोक–4
2. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–5
3. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–6
4. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–7
5. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–8
6. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–9
7. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–10
8. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–11
9. शिल्परत्नम् , अध्याय–3, श्लोक–12
10. विष्णुसंहिता, (द्वादश पटल) श्लोक–2

ई–मेल– veenabral123456@gmail.com फोन नं॰– 6006590191 9086003189

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 83-86
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

తెలుగు వెలుగు' పత్రిక కథలు - మానవ సంబంధాలు

అన్నెం శ్రీనివాస రెడ్డి
పరిశోధక విద్యార్థి, తెలుగు అధ్యయన శాఖ, శ్రీ వేంకటేశ్వర విశ్వ విద్యాలయం, తిరుపతి.

ఉపోద్ఘాతం:- 'తెలుగు వెలుగు' పత్రిక తెలుగు భాషకు ఎనలేని సేవ చేసింది. భాషా పునరుద్ధరణకు అందులోనూ కథా సాహిత్యానికి చేసిన కృషి అద్వితీయం. దాదాపు 103 మాసాలు ఈ పత్రిక ప్రచురణకు నోచుకుంది. ఇందులోని కథల్లో అనేకాంశాలు మిళితమై ఉన్నప్పటికినీ మానవ సంబంధాల పటిష్టతకు నడుంబిగించి సమాజ విలువలను కాపాడుతూ వచ్చింది.

ఆది మానవునికి బంధాలు అంటే ఏమిటో తెలియదు. తోటి వారితో కలిసి మెలిసి జీవించే విధానం కూడా తెలియదు. నాటి మానవులకు కూడు, నిద్ర తప్ప మిగతావేవీ పట్టేవి కావు. కాలక్రమంలో మనిషి సంఘజీవిగా రూపాంతరం చెంది తనకంటూ ఒక కుటుంబాన్ని, సమాజాన్ని ఏర్పరచుకున్నాడు. నేడు సమాజంలో వ్యక్తి విలువలు, కుటుంబ బంధాలు, సామాజిక బాధ్యతలు అనేవి ముఖ్యమైనవిగా గుర్తింపబడ్డాయి. అవన్నీ మానవ సంబంధాలను నింపుకుని మనిషిని గుణ సంపన్నుణ్ణి చేసి సమాజ జీవిగా మారుస్తాయి. ప్రేమ, అనుబంధాలు, రక్తసంబంధాలు, బంధుత్వాలు, వైవాహిక బంధాలు, స్నేహాలు, సజ్జన సాహిత్యం ప్రత్యక్ష పరోక్షాలుగా వ్యక్తితో కలిపి ఉంచుతాయి. ఇక బంధాలు ఉన్నా లేకున్నా సరే సమాజంలో నివసించే ప్రతీ ఒక్కరం మానవ సంబంధాలు కలిగి ఉండాలి.

కాలనుగుణంగా వ్యక్తుల్లో మార్పులు వచ్చాయి. జీవితంలో స్వార్థం పెరిగి 'డబ్బే' ప్రధానంగా జీవిస్తున్నారు. డబ్బే జీవితంగా బ్రతికే వారి జీవితం చివరకు 'డబ్బా' జీవితమై పోక తప్పదు. బంధాలను, బాధ్యతలను మరిచి జీవించే వారి సంఖ్య రోజురోజుకీ పెరుగుతూ వస్తున్నది. విశాల హృదయ స్థానంలో సంకుచితత్వం రాజ్యమేలుతోంది. ఇటువంటి తరుణంలో మానవ సంబంధాల ఉనికిని కాపాడటం కోసం, విలువలను పెంచడం కోసం ఆత్మీయతల అవసరాన్ని గుర్తు చేస్తూ ఆధునిక రచయితలు కథా ప్రక్రియను ఉపయోగించుకుంటున్నారు. తద్వారా వ్యక్తుల దృక్పథాల్లో మార్పు తేవడం కోసం కృషిచేస్తున్నారు. రచయితలు తప్పుల్ని సరిదిద్దుతూ కథ ద్వారా ఆలోచింపచేస్తున్నారు. ఇదంతా మానవ సంబంధాలను పునరుద్ధరించడంలోని విధిగా సాగుతోందని కచ్చితంగా అనుకోవచ్చు.

కథారచయితలు భిన్న వస్తువులతో ఆలోచింపచేసే కథలను మనకందించారు. ప్రస్తుత సమాజంలో వ్యక్తికి, వ్యక్తికి దూరం పెరిగి అనుబంధాలు, మానవీయతలు కనుమరుగైపోతున్న పరిస్థితులు నెలకొన్నాయి. వాటివల్ల బాధ్యతా రాహిత్యం, అమానవీయత వంటివి ఇంటా బయటా కన్పిస్తున్నాయి. ముఖ్యంగా కుటుంబ

వాతావరణం ఛిన్నాభిన్నంగా మారి, మనిషి ధర్మాలను మరిచేలా చేస్తోన్న స్వార్థాలు పడగవిప్పుతున్నాయి. ఫలితంగా జీవన గమనంలో ఒంటరితనం నెలకొని, నిస్సహాయతల బతుకులు తన ఆనందాన్ని వెతుక్కున్న తండ్రి ప్రేమని తెలిపిందీ కథ. అదే ప్రేమని తరానికి తరానికి పంచే క్రమాలు మానవ సంబంధాలు నిలుపుకోవడంలో భాగమై, బాధ్యతైన తీరుని ప్రస్తావించారు.

సమాజంలో తల్లీ, తండ్రీ, తోబుట్టువులు, బంధువులు, మిత్రులు, ఇరుగుపొరుగు వారు అలా వారితో ప్రత్యక్షంగానో, పరోక్షంగానో బంధాలు ఉంటుంటాయి. ఎవరి విధిని వారు నిర్వర్తిస్తూ వారికి సంబంధించిన వారి జీవితాలతో మమేకం అవుతారు. అలాంటి వాటిలో తండ్రీ, కొడుకుల రక్త సంబంధం ఒకటి. అలాంటి నాన్న గొప్పతనం ఎలాంటిదో ప్రదీప్ తన తండ్రి గురించి చెప్పిన ఈ మాటలు అర్థం పడుతున్నాయి. "ఆ అనురాగం వెలకట్టలేనిది. ఆ ప్రేమకు కొలమానం లేదు" అంటాడు. అమ్మ, నాన్న బిడ్డ అనే ముగ్గురికీ 'ఒకరికొకరు' అనే ఆత్మీయానురాగాలుంటాయి. అమ్మ బిడ్డల బంధం శిశువుగా ఈ లోకంలోనికి అమ్మ ద్వారా అడుగుపెట్టే విధిలో ఉంటుంది. నాన్నతో కళ్ళు తెరిచాకే వాత్సల్యాన్ని, సంతోషాన్ని చవిచూస్తుంది. ఒక ఇంటిలోని అనుబంధాలు అమ్మ ఉన్నప్పటికీ, మరణించినప్పటికీ కొంత వేరుగా ఉంటుందనేది వాస్తవం. అందులోనూ బిడ్డ జననంలోనే తల్లి మరణిస్తే ఆ బిడ్డకి నాన్నే తల్లి, తండ్రి కావల్సి ఉంటుంది. అలా ఆ బాధ్యతల్ని పూర్తిగా స్వీకరించే ప్రదీప్ తండ్రి వంటివారు నూటికో కోటికో ఒక్కరు మాత్రమే ఉంటారు. భార్య చనిపోయినా మరో పెళ్ళి చేసుకోకుండా తల్లి స్థానాన్ని తానే భర్తీ చేశాడు. తల్లి లోటు తెలియకుండా ఆత్మీయతతో పెంచాడు. బిడ్డకి తల్లి అవసరమనో, తనకో భార్య కావాలనో భార్యావియోగులు అనుకోవచ్చు. చుట్టూ ఉన్నవారు కూడా ప్రదీప్ తండ్రిని రెండో పెళ్ళి చేసుకోమని సలహాలిచ్చారు. తను రెండో పెళ్ళి చేసుకొంటే ప్రదీప్ కి మారు తల్లి అసలు తల్లి కాలేదని భావించి పెళ్ళి చేసుకోకూడదని నిర్ణయించుకున్నాడు. ఆ విషయంలో ప్రదీప్ తండ్రి గుణం త్యాగమయమని చెప్పొచ్చు. బాధ్యతతో తల్లి స్థానాన్ని తానే నిర్వర్తించి చేయిపట్టుకొని నడిపించి తద్వారా ఉన్నత వ్యక్తిత్వానికి, బంధానికి ఆదర్శప్రాయంగా నిలిచాడు.

మనం ఇచ్చేదాన్ని బట్టి తిరిగి వస్తుందని పెద్దలంటారు. రక్తం పంచుకొని పుట్టిన బిడ్డే ప్రాణమని భావిస్తే పెద్దయ్యాక ఆ బిడ్డ కూడా తనకు జన్మనిచ్చిన వారే ప్రాణాధికమని భావిస్తాడు. ప్రస్తుతం పరిస్థితుల కారణంగానో, చదువుల కారణంగానో బంధాలు బలపడే పరిస్థితులు సన్నగిల్లుతున్నాయి. బిడ్డలు ప్రేమానురాగాలకు దూరమవుతున్నారు. అందువల్ల పిల్లలు కూడా పెరిగి పెద్దయిన తర్వాత తల్లిదండ్రులకు ప్రేమను పంచక వారిని అనాథలుగా మిగిల్చి, వారి బతుకు వారు చూసుకుంటున్నారు. ఇద్దరి మధ్య ఏదో తెలియని పెద్ద అగాధం ఏర్పడిపోతోంది. కానీ కన్న వారు అగాధం ఏర్పడే పరిస్థితులు ఏర్పడకుండా, సంతానానికి ప్రేమాప్యాయతలను పంచితే ఆ సంతానమే కన్నవారి కంటి వెలుగులై జీవితాంతం సంతోషాన్ని పంచుతారు. అదే విధానాన్ని తమ తర్వాత తరానికి కూడా కొనసాగించగలరు. దీన్ని నిజం చేస్తూ తండ్రి ద్వారా ప్రదీప్ అందుకున్నవి తన కొడుకు అభిరామ్కి సంక్రమింపజేశాడు. అలా జరిగితే మానవ సంబంధాల బలహీనతలు బంధాలను తాకవు. అనుబంధాన్ని దుర్భరం అవుతున్నాయి. సఖ్యత లేని దాంపత్యాలు, బాధ్యతలు గుర్తించని రక్తసంబంధాలు, సాటివాడి కష్టం పట్ల దృష్టి సారించలేని కాఠిన్యాలు, అత్యాశలు, నీచత్వాలు వెరసి మనిషికి మనిషిని దూరం చేస్తున్నాయి. ఇటువంటి తరుణంలో మానవ సంబంధాల ఆవశ్యకతను తెలిపే కథలు ఎంతైనా అవసరం. కథల ద్వారా సమస్యలను గుర్తించి చర్చించినా, తప్పుని వేలెత్తి చూపినా, ప్రబోధం చేసినా, ప్రశంసించినా, నిందించినా అవన్నీ మానవ సంబంధాలను

మెరుగుపరచడానికేనని తెల్సుకోవాలి. అంటే కథల అంతిమ లక్ష్యం మానవజన్మకు ఉండవలసిన విలువలు మరుగున పడకుండా కాపాడటమే.

విషయము:- మానవ సంబంధాల గొప్పదనం:

మనిషి తన తోటివారి మనసుని, మమతని, స్నేహాన్ని, బంధాన్ని, కష్టాన్ని, సమస్యని అర్థం చేసుకోవాలి. స్పందించే హృదయం మానవత్వాన్ని, బాధ్యతని కలిగి ఉంటే సమాజానికి ఎంతో మేలు జరుగుతుంది. ఎవరినీ నొప్పించకూడదు. అందరినీ సంతోషంగా ఉంచడానికి సహనాన్ని, ఓర్పుని వహించాలి. 'నా' అనే స్వార్థమును వీడి 'మన' అనే భావాన్ని కలిగి ఉన్నట్లయితే మానవ సంబంధాలు బలపడతాయి. నేటి కాలానికి ఇది ఎంతైనా అవసరం. నిజానికి సహజంగా ఉండాల్సిన ఈ మానవ సంబంధాలను కథకులు, రచయితలు, మేధావులు గుర్తుచేయాల్సి రావడం చాలా బాధాకరం. యలమర్తి మధుసూదన్ రాసిన 'నాన్న ఒడి', తటపర్తి రామచంద్ర రావు రాసిన 'పాత చెప్పులు' కథలు మానవ సంబంధాలకు మచ్చుతునకలు.

'నాన్న ఒడి' కథలో ప్రదీప్ పుట్టగానే తల్లి చనిపోగా అతడు తండ్రి చేతుల్లోనే పెరుగుతాడు. రెండో పెళ్ళి చేసుకోమని చుట్టుప్రక్కల వాళ్ళు ఎంత చెప్పినా ప్రదీప్ తండ్రి సున్నితంగా తిరస్కరించాడు. కొడుకును 'అబ్బీ' అని పిలుచుకుంటూ, కొడుకే లోకంగా ఆ తండ్రి బతికేవాడు. ఏ జ్ఞానం అయినా ప్రదీప్ తండ్రి నుండే పొందేవాడు. ప్రదీప్కి అప్పుడప్పుడూ తండ్రి తనను 'అబ్బీ' అని పిలవడం, అతి జాగ్రత్తలు చెప్పడం వంటివి విసుగనిపించేది. కాలక్రమంలో ప్రదీప్కి పెళ్ళైన తర్వాత కొంతకాలానికి తండ్రి చనిపోతాడు. నాన్న కూర్చునే కుర్చీలో కూర్చొని, తండ్రి ఒడిలో కూర్చున్నట్లు భావించేవాడు. కొడుకు 'అభిరామ్'ని 'అబ్బీ' అని పిలుచుకునేవాడు. తండ్రి గుర్తొచ్చినప్పుడు ఏడ్చేవాడు. అప్పుడు అభిరామ్ స్పర్శని తండ్రి స్పర్శగా ఊహించుకొని భార్యాబిడ్డలతో ఆనందంగా జీవించేవాడు.

ఈ కథ మానవ సంబంధాల గొప్పతనం ఎలా ఉందో తెలియజేసింది. మానవ సంబంధాలనెలా నిలుపుకోవాలో తెలిపింది. బిడ్డల కోసం తమ జీవితాలను త్యాగం చేసే కన్నవారి గురించి ప్రత్యేకంగా చెప్పుకోవాలి. బిడ్డల కోసం స్వార్థాన్ని వీడటం మానవ సంబంధాల ఔన్నత్యంగానే పరిగణించాలి. కుటుంబ విలువలను మరచిపోతున్న ఆధునిక కాలంలో బంధాలను సజీవంగా నిలుపుకొనే వ్యక్తిత్వాల గురించి ప్రస్తావించాల్సినదే. అలా బిడ్డ కోసం తపించి, ఆ బిడ్డని పెంచి పెద్దచేయడంలోనే నిలుపుకోవడం, తిరిగి ఆ అనుబంధాన్ని గట్టిగా తర్వాత తరానికి అందించడం వంటివి నేడు ఎంతో అవసరం. అదే మానవ సంబంధాల సజీవతను నిర్వర్తిస్తుందని తెలిపిందీ కథ.

పైన వివరించిన కథ వంటిదే 'పాతచెప్పులు' అనే కథ. కథానాయకుడు ఉద్యోగ బదిలీ మీద వచ్చి ఒక అద్దె ఇంట్లో ఉంటాడు. ఓ ముసలి వ్యక్తి వీధిలో తిరుగుతూ ఆకుకూరలు అమ్ముతుండగా అతని వద్దే కొంటుంటాడు. అతడైతే పాత చెప్పులిమ్మని అడగ్గా ఓ జత చెప్పులిస్తాడు. కథానాయకుడు ఓ రోజు వీధిలో వెళ్తుండగా ముసలి వ్యక్తి ఓ చోట కూరల్ని అమ్ముకుంటూ పాత చెప్పుల్ని ధర్మం చేయమని రాసి ఉన్న అట్టముక్క (బోర్డు)ని పక్కన పెట్టుకొని ఉండటం చూస్తాడు. ఆ వృద్ధుడు చెప్పుల్ని అడుక్కుని అమ్ముకుంటున్నాడనే నిర్ధారణకు వస్తాడు. భార్యతో ఇక అతడి వద్ద కూరలు కొనవద్దని ఆదేశిస్తాడు. మరో రోజు ఆకుకూరలు అమ్మూతూ వచ్చి తిరిగి మరలా చెప్పులడగ్గా కథానాయకుని భార్య మొన్ననే ఇచ్చామనీ వాటినేం చేశావని అడుగుతుంది. తమ వాడలో తనకన్నా నిరుపేదలైన బాలబాలికలు, దీనులు, పనులు చేసుకునే వాళ్ళు చెప్పులు లేకుండా వెళ్తున్నారని వారికి అవి అంద జేస్తున్నానని బదులిస్తాడు. ఆ మాట

విని కథానాయకుడు పశ్చాత్తాపపడటంతో పాటు ఆ వృద్ధునికి, వ్యక్తిత్వానికి మనసులోనే మొక్కుతాడు.

మానవ సంబంధాలకై పరితపించే వ్యక్తిత్వాల ఔన్నత్యం గురించిన కథ ఇది. ఒకరికి సాయం చేయాలంటే గొప్ప మనసుండాలి. సహృదయత కూడా ఉండాలి. అది అందరికీ సాధ్యం కాదు. ఇరుగుపొరుగు వారి గురించి ఆలోచించే పరిస్థితులు నేడు లేవు. డబ్బుంటే తప్ప ఇతరులకు సాయం చేయలేమని, సంపాదించే ప్రతి రూపాయి తమకే సరిపోతోందని దాచుకునే వారు లెక్కలేనంతమంది ఉన్నారు. నిరుపేదలకు, దీనులకు నా చేతనైనంత సాయం చేస్తాననే విశాల హృదయం అందరికీ వుండదు. అలాంటి విశాల హృదయం కలవాడే ఈ వృద్ధుడు, తాను పేదవాడైనప్పటికీ మానవ సంబంధాలను నిలుపుకోవాలన్న తపనే ఆ విధమైన పనికి పురికొల్పింది. ఈ నేలపై అందరికీ అందరూ కావలసిన వారే అనే విషయాన్ని తెలియపరిచాడు రచయిత.

మనుషుల్లో అనేక అంతరాలు ఆర్థిక, సమాజిక, సాంస్కృతిక రూపాలలో కనిపిస్తున్నాయి. తాను పడే బాధ ఎదుటివాడు పడకూడదని తలవాలి. ఎదుటివారి ఆనందంలో నాకు భాగముండాలని కోరుకోవాలి. ఈ విషయాలే మానవ సంబంధాల ఔన్నత్యాన్ని పెంచుతూ కూరలమ్మే వృద్ధుడు తార్కాణంగా నిలిచాడు. చెప్పులు లేని వారి కాళ్ళు నడకలో ఇబ్బందులు ఎదురుకాకుండా పాత చెప్పులు సేకరించి ఎవరికి సరిపోయేవి వారికి అందిస్తూ పరోపకార గుణాన్ని వృద్ధుడు చాటి చెప్పాడు. అలా పేదలకు, దీనులకు, కష్టజీవులకు మానవత్వంతో సాయపడ్డాడు. ఉన్నత వ్యక్తిత్వం గల వారు సాటి మనుషుల అవసరాలలో ఏవి తాను తీర్చగలడో వాటి గురించి ఆలోచిస్తాడు. వృద్ధుడు తన కాళ్ళకి చెరోరకం చెప్పు వేసుకొని ఇతరుల నుండి దానంగా పొందిన మంచి చెప్పులను దీనులకై అందించిన దయామయుడు. ఆ వృద్ధునికి స్పందించే హృదయముందని అది మానవత్వానికి ప్రతీకని తెలుస్తోంది.
ఏమీ చదువుకోని ఒక సామాన్యునిలో ఇంతటి మానవత్వ పరిమళమా! అని ఓ వృద్ధదాతని చూసి స్ఫూర్తిని పొందాడు కథానాయకుడు.

ముగింపు:

ఇలా తెలుగు వెలుగు పత్రికలో మానవ సంబంధాల గొప్పతనాన్ని చాటే కథలు చాలానే ఉన్నాయి. వాటిలో కొన్ని - కానుక, సీతారాంబాయి నీళ్ళు, విశ్వామిత్రుడు, ఆడపడుచులు, మామగారు, మాగాయ పచ్చడి, వర్షం కురిసిన సముద్రం, రావిచెట్టిల్లు, మనసు బంధం, విశ్రాంతి కావాలి, కొనూపిరి, దశరథ రాముడు, అద్దాల తాత, అపురూప, అమ్మో నాలుగో ముసలమ్మ, మలి సంధ్య వెలుగు, రసశేవధి, సోడి పిండి సక్కు, జీవన సౌరభం, నేనేనా, పక్కన కూర్చున్న వ్యక్తి, ఏనుగు సావు, కార్తీక పురాణం, ఒకరికొకరు, కిలికించితం మొదలైనవి. ఈ కథల్లో మానవ సంబంధాలతో పాటు చైతన్యం, సామాజిక హితవు లాంటి అంశాలు కూడా అంతర్లీనంగా కన్పిస్తాయి.

ఉపయుక్త గ్రంథ సూచి :

1) తెలుగు వెలుగు మాస పత్రికలు- సంపాదకులు రామోజీరావు గారు.
2) కథాశిల్పం - వల్లంపాటి వెంకట సుబ్బయ్య.
3) దక్షిణామూర్తి పోరంకి - కథానిక స్వరూప స్వభావాలు.
4) కె.కె.రంగనాథ ఆచార్యులు - ఆధునిక తెలుగు సాహిత్యములో విభిన్న ధోరణులు.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 87-90
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मनु शर्मा के पौराणिक उपन्यासों की प्रासंगिकता : महाभारत के विशेष संदर्भ में

Harija J.H, Research Scholar, Department of hindi
University college Thiruvananthapuram

हिंदी साहित्य जगत के सशक्त हस्ताक्षर मनु शर्मा जी का जन्म 10 अक्टूबर 1928 को अकबरपुर, फैजाबाद में हुआ। उनका नाम हनुमान प्रसाद शर्मा था, जो साहित्य से जुड़ने के बाद मनु शर्मा बन गया। आपने महाभारत जैसे श्रेष्ठ पौराणिक ग्रंथ को आधार बनाकर अपने पौराणिक उपन्यास लिखे और इन उपन्यासों में आधुनिकता को भी स्थान दिया। मनु शर्मा जी ने पौराणिक संदर्भों को प्रासंगिक बनाकर आज के जीवन में निहित आधुनिकता से जोड़ दिया, यही उनके उपन्यासों की मुख्य विशेषता है। उन्होंने अपनी पौराणिक रचनाओं में अधिकतर आत्मकथात्मक शैली अपनाई है। मनु शर्मा जी ने महाभारत की पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर आज के युग में समाज में फैली सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पाखंडों पर अपने तूलिका से प्रहार किया।

मनु शर्मा जी की प्रमुख पौराणिक रचनाएँ हैं– कृष्ण की आत्मकथा (जो आठ खंडों वाला एक महाकाव्य है), गांधारी की आत्मकथा, अभिशप्त कथा, द्रोण की आत्मकथा, कर्ण की आत्मकथा, द्रौपदी की आत्मकथा आदि। मनु शर्मा ने अपने पौराणिक रचनाओं का आधार महाभारत को बनाया, क्योंकि महाभारत एक ऐसा ग्रंथ है जो कालजयी है। महाभारत में प्रतिपादित घटनाएँ आज भी प्रासंगिक हैं।

महाभारत हमारा अध्यात्म, इतिहास और काव्य भी है। महाभारत महाकाव्य की रचना ईसा पूर्व 400 के आस-पास स्वीकार की गई है। अंतिम रूप से इसका संकलन लगभग 400 ई. में हुआ था। महाभारत की रचना का श्रेय महर्षि वेदव्यास को है। महाभारत का मूल कथानक कौरवों और पांडवों के युद्ध को वर्णित करता है। यह 18 पर्वों में सृजित है। महाभारत मात्र युद्ध की कथा नहीं है। “महाभारत के बारे में कहा गया है की जो महाभारत में है वह आपको संसार में कहीं न कहीं अवश्य मिलेगा और जो महाभारत में नहीं है, वो संसार में अन्यत्र कहीं नहीं मिलेगा।”[1] इसी प्रकार महाभारत में मात्र युद्ध की कथा नहीं, बल्कि न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, ज्योतिष, युद्धनीति, योगशास्त्र, अर्थशास्त्र, वास्तुशास्त्र, शिल्पशास्त्र, कामशास्त्र, खगोलविद्या तथा धर्मशास्त्र के बारे में भी प्रतिपादित किया गया है। इसमें मानव मन की भावनाओं जैसे राग, द्वेष, वात्सल्य, श्रृंगार, ईर्ष्या, कामना, क्रोध, तृष्णा, उत्साह, भय, जुगुप्सा,

शोक आदि को भी प्रधानता दी गई है। भगवदगीता महाभारत का एक प्रमुख हिस्सा है। भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में प्रस्तुत भगवदगीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को जीवन के कर्तव्य और धर्म के बारे में उपदेश दे रहे हैं। भगवदगीता आज भी मानव जीवन में मार्गदर्शक का कार्य करती है। महाभारत के प्रमुख पात्रों के रूप में पांडव (युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव) और कौरवों (दुर्योधन, दूषासन) के बीच संघर्ष की कहानी बताई गई है। लेकिन यह संघर्ष और महाभारत में चित्रित अन्य घटनाएँ भारतीय संस्कृति और विचारधारा के विभिन्न पहलुओं को उजागर करती हैं। महाभारत एक अद्‌वितीय ग्रंथ है जो न केवल महाकाव्य है, बल्कि इसमें भारतीय दर्शन, समाज, धर्म और जीवन के गहरे तत्वों का समावेश है। महाभारत के पात्र, घटनाएँ और संवाद आज भी मानवजाति के व्यक्तित्व की जटिलताओं को समझने में सहायक सिद्‌ध होते हैं।

धर्म और कर्तव्य: महाभारत में चित्रित सबसे प्रमुख विषय धर्म और कर्तव्य के संबंध में है। इसलिए ही कुरुक्षेत्र युद्‌ध धर्मयुद्‌ध नाम से जाना जाता है। युद्‌ध के समय में भ्रमित अर्जुन को भगवान श्रीकृष्ण ने गीतोपदेश देकर अपने धर्म और कर्तव्य पर अडिग रहने का उपदेश दिया। यह उपदेश हमें जीवन में धर्म और कर्तव्य का मूल पाठ सिखाता है, जो आज के युग में भी अत्यंत आवश्यक है।

1. कर्म और फल: मानव कैसे अपने किए हुए कर्मों का फल पता है यह सिद्‌धांत रूप में महाभारत पर लिखा गया है। पांडव हो या कौरव महाभारत में अपने कर्मों का फल दोनों को भी भुगतना पड़ता है। मानव के जीवन में उनका आचरण हमेशा कर्मफल का कारण बनता है। इसलिए महाभारत में मानव के कर्म एवं कर्मफल का भी चित्रण किया है।

2. समाज और न्याय: महाभारत सत्ता के संघर्ष, पारिवारिक रिश्ता और व्यक्तिगत अहंकार जैसे जीवन की विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करता है। इसीसे पता होता है कि समाज में न्याय सिर्फ बाहरी ताकतों से मात्र नहीं बल्कि आंतरिक शक्ति जैसी सत्य सही आचरण पर आश्रित होता है।

3. जीवन और संघर्ष: कुरुक्षेत्र युद्‌ध जितना बड़ा है, उतने ही बड़े व्यक्तिगत संघर्ष भी हैं। पात्रों के बीच के संबंध, प्रेम, मोह, राग-द्‌वेष यह दर्शाते हैं कि जीवन भी एक प्रकार का महाभारत है। जीवन रूपी महाभारत में शारीरिक, मानसिक और भावात्मक संघर्षों का सामना करना पड़ता है।

4. संक्षेप में महाभारत आज भी पूरे विश्व में प्रासंगिक है चाहे वह व्यक्तिगत चिंताओं, जीवन के उद्‌देश्यों या जीवन के किसी भी प्रकार के संकट से संबंधित हो। महाभारत केवल पौराणिक ऐतिहासिक कथा नहीं है बल्कि जीवन हर पहलू का गहन विश्लेषण है। यह मानवता, धर्म और सामाजिक संरचना को समझने केलिए एक अमूल धरोहर है।

महाभारत में आज के युग में होने वाली सभी शोषणें जैसे नारी शोषण, जाति प्रथा, युद्‌ध की भयानकता, आदि आज के युग में अब भी हो रही सभी अरोचकताओं के बारे में प्रतिपादित किया है। महाभारत के प्रमुखता इसमें निहित है, इसमें बस ऐसी घटनाओं या सन्दर्भों से बचने

या मन को कैसे ऐसी नीचताओं से मुक्ति दिलाने की भी बात बताई है। इस आधुनिक युग में मानव किसी न किसी वजह से शोषण का शिकार बन रहा है। एक रचनाकार का दायित्व है कि वह ऐसी अवस्था में फंसे मानव समाज को मुक्ति दिलाए। इसलिए मनु शर्मा ने अपनी रचनाओं का आधार महाभारत को बनाया।

'कृष्ण की आत्मकथा' यह उपन्यास मनुशर्मा जी के सबसे चर्चित उपन्यास है ये आठ खंडों में लिखा गया सबसे बड़ा उपन्यास है। मनुशर्मा जी ने इस उपन्यास को अलग अलग खंडों में विभक्त करके अलग-अलग शीर्षक भी दिए गए हैं। आठ खंडों का शीर्षक इसी प्रकार है 'नारद की भविष्य वाणी, दुरभि संधी', 'द्वारका की स्थापना, लाक्षागृह, खांडवदाह, राजसूय यज्ञ, संघर्ष' और प्रलय। कृष्ण की आत्मकथा भगवान श्री कृष्ण के जीवन पर आधारित है। इसमें श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर मृत्यु तक के कथा को संवेदानात्मक रूप में कलियुग के यथार्थ धरातल के अनुयोयाज्य चित्रित किया है। इस उपन्यास में मैक्सिम गोर्की के 'युद्ध और शांति' के मर्म को मनु शर्मा जी ने कृष्ण के बहाने समझाया है। प्रसिद्ध आलोचक डॉ बच्चनसिंह ने उपन्यास के संदर्भ में लिखते हैं कि "मनु शर्मा ने कृष्ण चरित्र को उसकी पूरी सम्पूर्णता और समग्रता में उकेरने का प्रयास किया है। सही अर्थों में यही 'एपिक नॉवेल है।"[2] मनु शर्मा उपन्यास की भूमिका में लिखते हैं "यह उपन्यास है शस्त्र नहीं। फिर भी यदि आपकी मानसिकता इसे या इसके किसी अंश को शस्त्र समझते हैं तो भी मुझे प्रसन्नता ही होगी; क्योंकि इसमें जो कुछ है, वह शास्त्र सम्मत ही है। 'कथा की बुनावट', 'बुनावट' तथा रूपांकन मेरा है, पर यही तो यह है कि मेरे द्वारा किया गया है, कर्ता तो कोई और है।"[3]

मनुशर्मा जी महाभारतकालीन नारियों की अवस्था प्रतिप्रादित किया है जो आज के नारी के अवस्था से भिन्न नहीं। महाभारत काल से लेकर आज तक नारी के जीवन परंपरा के रूढ़ी चक्र में फँसी है और वे विविध प्रकार के शोषण के शिकार बन कर अपने जीवन बिता रही है। मनुशर्मा जी के द्रौपदी की आत्मकथा, गांधारी की आत्मकथा आदि उपन्यासों में मात्र परंपरागत नारियों को ही नहीं समाज सुधारक नारी, विद्रोही नारी, नारी नवजागरण भी देख सकते हैं। पौराणिक महाकाव्य महाभारत में द्रौपदी के साथ जितना अन्याय हुआ है, उतना शायद अन्य किसी नारी पात्र के साथ नहीं हुआ है। द्रौपदी ने स्वयंवर में सिर्फ अर्जुन को ही वरण की थी लेकिन उसे पांचों पांडवों को अपने पति के रूप में स्वीकार करनी पडी। जब पांचों पति द्युतक्रीडा में द्रौपदी को दांव रखकर हार जाते हैं और जब यह बात द्रौपदी को पता चलता है तो वह तिलमलाकर रह जाती है। वह युधिष्ठिर से सवाल पूछती है कि "तुम फिर कौरवों की सभा में जाओ। धर्मराज से पूछो कि चौसर के खेल में वह पहले अपने को हारे हैं या मुझे हारे हैं।"[4] द्रौपदी की आत्मकथा के भूमिका मनुशर्मा जी के पुत्र हेमंत शर्मा ही लिखा था इसमें वो लिखा है कि, "द्रौपदी को महाभारत के लिए ज़िम्मेदार माना गया हालांकि इसकेलिए वह अकेली जिम्मेदार नहीं थी। मेरा मानना है की कि द्रौपदी न भी रहती तो भी महाभारत का युद्ध होता... क्योंकि यह विवाद संपत्ति बंटवारे का था। द्रौपदी केवल कारण बनी। पाँच पतियों के कारण भारतीय परंपरा में द्रौपदी को आदर्श नारी का दर्जा कभी नहीं मिल सका। द्रौपदी का

नाम उपहास के साथ जुड गया। महाकाव्य युग के बाद लोगों ने अपनी बेटियों के नाम द्रौपदी रखना छोड दिया। समाजवादी चिंतक डॉ राममनोहर लोहिया के अलावा किसी ने द्रौपदी को उसका सम्मान नहीं दिया। पाँच हज़ार साल के इतिहास में 'डॉ लोहिया ही एक ऐसे आदमी है, जो ट्रौपदी को सीता के ऊपर रखने केलिए तैयार हैं।"[5]

मनुशर्मा ने अपने उपन्यास गांधारी की आत्मकथा में गांधारी के अभिशपित जीवन को प्रस्तुत किया है। बाल्यावस्था से ही गांधारी के जीवन पिंजरे में बंद चिडिया की तरह थी। महाभारत के युग में ही लड़का और लड़की जैसी भेद भाव रहती थी। गांधारी और उनका भाई शकुनी के बीच वह भेद भाव व्यक्त थी। गांधारी को अपने वर चुनने तक का अनुमति नहीं था। शकुनि ने गांधारी के ब्याह अंधे धृतराष्ट्र से करवाया, गांधारी को अंधे धृतराष्ट्र को अपने पति के रूप में स्वीकारना पड़ा। उपन्यास में गांधारी अपनी आक्रोश व्यक्त करते हुए बताते हैं- "क्या नारी को अपने भविष्य के बारे में सोचने का अधिकार नहीं, उसकी सारी चिन्ता का ठेका पुरुषों ने ही ले रखा है ? नारी कया पशु है कि जिस खूंटे में चाहे आप उसी से बाँध दें।"[6] मनु शर्मा जी ने अपने उपन्यासों में नारी के ऐसे कई रूपों को अंकित किया है।

मनु शर्मा जी के उपन्यास केवल नारी जीवन तक सीमित नहीं हैं। मनु शर्मा ने कर्ण की आत्मकथा में सूर्यपुत्र होकर भी सूतपुत्र का जीवन जीने के लिए बाध्य कर्ण के माध्यम से दलित जीवन की त्रासदियों का चित्रण किया है। मनु शर्मा द्वारा लिखित द्रोण की आत्मकथा में लेखक एक आचार्य की विवशता को प्रस्तुत करता है। परिस्थिति के आगे आचार्य को अपना आचार्यत्व बेचना पड़ता है, इसका विवेचन इस उपन्यास में किया गया है। लेखक ने ऐसे जीवन के हर पहलू पर अपनी नज़र डाली है।

हिंदी जगत के पौराणिक सन्दर्भों का आधुनिक चेतना के आलोक में नया रूप देने वाले लेखक मनुशर्मा एक कुशल कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार एवं कवि भी है। मनु शर्मा ने अपने साहित्य में चित्रित पौराणिक पात्रों, उनका परिवेश, उनकी स्थिति और विशिष्ट संवेदनाओं को समाज के सामने प्रस्तुत किया है। मनु शर्मा मनुष्य के मानव कल्याण में विश्वास रखने वाले कथाकार हैं। मनु शर्मा को विश्वास है कि महाभारत जैसे पौराणिक ग्रंथ मानव के विकास में सहायक हो सकते हैं, और यह विश्वास उनके सभी पौराणिक उपन्यासों में मुखरित है।**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. वर्तमान में महाभारत की प्रासंगिकता - किंकर.ब्लॉगस्पॉट.कॉम
2. मनु शर्मा - कृष्ण की आत्मकथा - प्रभात प्रकाशन दिल्ली,2018, पृष्ठ संख्या.16
3. मनु शर्मा - कृष्ण की आत्मकथा(भूमिका से) - प्रभात प्रकाशन दिल्ली,2018
4. मनु शर्मा - द्रौपदी की आत्मकथा - प्रभात प्रकाशन दिल्ली,2018, पृष्ठ संख्या.9
5. डॉ. हुकुम सिंह - महाभारत के प्रमुख नारी पात्र - पृष्ठ संख्या.6,7
6. मनु शर्मा - गांधारी की आत्मकथा - प्रभात प्रकाशन दिल्ली,2021, पृष्ठ संख्या.39,40

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 91-94
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

स्त्री विमर्श: "गोबर गणेश" के विशेष संदर्भ में

रेवती एम.एस, शोधार्थी हिंदी विभाग,
यूनिवर्सिटी कालेज, तिरुवनंतपुरम,केरल

स्त्री विमर्श एक तरह का साहित्यिक आंदोलन है, जिसके केंद्र में समानता का अधिकार, स्त्री अस्मिता, अस्तित्व, स्वतंत्रता और मुक्ति का सवाल है। हिंदी साहित्य में अस्मिता मूलक विमर्शों के अंतर्गत स्त्री विमर्श मुख्य धारा का विमर्श रहा है। अंग्रेज़ी में इसे फेमिनिज्म (feminism)कहा जाता है। स्त्री विमर्श एक ऐसा विमर्श है जो जाति, धर्म, वर्ग, वंश, प्रांत और देश आदि से अलग हटकर है।जहाँ स्त्री अपने ऊपर हो रहे अन्याय,अत्याचार,शोषण-उत्पीड़न और उपेक्षा आदि का विरोध करती है। स्त्री विमर्श इस बदलते हुए समाज में स्त्री के पारम्परिक मानदंडों को तोड़ने के एक पहल है, जिससे स्त्री को समानता का अधिकार, सम्मान, अस्तित्व और स्वतंत्रता प्राप्त हो सके।कहा जाता है कि किसी भी सभ्य समाज और संस्कृति का सही अनुमान उस समाज में रहने वाली स्त्रियों की स्थिति से लगाया जा सकता है।

स्त्री विमर्श एक ऐसा संवाद और बहस है जिसमें स्त्री अपने अधिकारों की मांग करती है। इन अधिकारों के अंतर्गत लिंग के आधार पर समानता, निर्णय, अस्तित्व, अस्मिता, स्वतंत्रता और मुक्ति का सवाल भी उभरकर सामने आता है। आज समाज में स्त्रियाँ केवल जनसंख्या का हिस्सा बनकर गिनती में नहीं रहना चाहती, बल्कि वे भी पुरुषों की तरह समाज और परिवार में मनुष्य बनकर केंद्र में आना चाहती है और इसके लिए वे अपने अस्तित्व की लड़ाई आरंभ कर चुकी है। इस संघर्ष और लड़ाई को स्त्री विमर्श का नाम दे दिया गया है। स्त्री को मनुष्य के रूप में प्रतिष्ठित करना, शोषण और उत्पीड़न के विरोध में संघर्ष करना, स्त्री संबंधी विभिन्न समस्याओं पर विचार-विमर्श करना, स्त्री को अपने अस्तित्व और अस्मिता की पहचान करवाना, मानसिक रूप से सुदृढ़ बनाना, मानसिक और शारीरिक शोषण के खिलाफ आवाज़ उठाना, स्त्री को अपने भीतर सामाजिक, पारिवारिक और आर्थिक रूप से मानसिक परिवर्तन लाना आदि स्त्री विमर्श का उद्देश्य रहा।

साहित्य में स्त्री विमर्श का अर्थ मात्र स्त्री या पुरुष द्वारा स्त्री के ही विषय में स्त्री विषयक मुद्दों में लिखा गया साहित्य नहीं है,बल्कि स्त्री जीवन की सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं, विडम्बनाओं को अभिव्यक्त करना और उस पर विचार स्त्री विमर्श है। साहित्य में

स्त्री को लेकर अनेक लेखक-लेखिकाओं और आलोचकों ने अलग-अलग तरह से अपने विचारों को स्त्री विमर्श के रूप अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। हिंदी साहित्य में उपन्यास विधा के क्षेत्र में लेखक-लेखिकाओं द्वारा अधिक स्त्री विमर्श देखने को मिलता है।

रमेशचंद्र शाह जी के उपन्यासों में स्त्री विमर्श के अनेक पहलू देखने को मिलते हैं। रमेशचंद्र शाह हिंदी के कुछ उन गिने-चुने लेखकों में से एक हैं, जिन्होंने साहित्य की लगभग हर विधा को अपनी सर्जनात्मकता की धार दी हैं। शाह का साहित्यिक व्यक्तित्व केवल कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार, चिंतक या आलोचक के रूप तक ही सीमित नहीं है,बल्कि वे नाटककार, अनुवादक, यात्रावृत्तकार व संपादक के रूप में भी हमारे सन्मुख आते है। शाह के रचना संसार व समकालीन हिंदी साहित्य के प्रति उनकी निष्ठा के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि उनका रचना संसार व्यापक रहा है तथा उनके साहित्यिक चिंतन की कोई पूर्व निर्दिष्ट सीमा नहीं है।

शाह की यह विशेषता रही है कि वे लेखक और पाठक को हमेशा एक-दूसरे से जोड़ते रहने का प्रयास करते रहे है। रमेशचंद्र शाह जैसे समर्थ साहित्यकार ने हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण कर न केवल अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया है, बल्कि उनका आगमन हिंदी साहित्य के लिए नवीन दिशा प्रदान की है। उनकी विशेषता और उनकी मौलिकता उनकी कथावस्तु के चयन में है। शाह जी के उपन्यास हिंदी के श्रेष्ठ उपन्यासों की पंक्ति में खड़े है।

शाह जी के अधिकांश रचनाओं में स्त्री विमर्श का झलक मिलते है। 'गोबर गणेश', 'विनायक' एवं 'असबाब-ए-वीरानी' में स्त्री की हालत का जो चित्रण किया है वह प्रशंसनीय है। 'गोबर गणेश' उपन्यास में शाह जी ने नारी की अनेक समस्याओं के ज़रिए स्त्री विमर्श को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है।

'गोबर गणेश' में विनायक की माँ का विवाह,मात्र बारह वर्ष की उम्र में ही हो गया था। अल्प आयु में लड़की शारीरिक एवं मानसिक रूप से अपरिपक्व होती है और ऐसी अवस्था में उसका विवाह उसकी दिशा को और भी कमज़ोर बना देता है। फिर पारिवारिक जिम्मेदारियाँ एवं बच्चों का जन्म एवं पालन-पोषण से वह मानसिक एवं शारीरिक रूप से बीमार पड़ जाती है। इसी संदर्भ के ज़रिए शाह जी ने बाल-विवाह की समस्या को और उसमें स्त्री की हालत को व्यक्त करते हैं। इतनी कम उम्र में ससुराल में आकर तो मानो उसका बचपन ही छिन जाता है। उससे जो काम करवाया जाता था उसके विषय में विनायक कहता है-"माँ कहती है जब इस घर में नई-नई व्याह कर आई थी तब कुल बारह बरस की थी और तभी से उसका यह नित्य का नियम बन गया था कि एक फर्लांग दूर से पानी ढोके घर के तिमंज़िले तक सीढियाँ चढ़के ले जाना।"[1]

'गोबर गणेश' की सरोज जो विनायक की बड़ी बहन है,वह परिवार में सर्वाधिक लाड़-प्यार से पली-बड़ी होती है। घर की स्थिति अच्छी न होने के कारण उसे आगे पढ़ने से रोक दिया जाता है जबकि विनायक को आगे पढ़ाया जाता है। शहर भी पढ़ने के लिए भेजा जाता है। सरोज को इसकेलिए रोकते हैं, क्योंकि वो लड़की है। लड़का होता तो वह भी आगे पढ़ पाती।

विनायक और उसकी बहन सरोज का आपासी वार्तालाप नारी अशिक्षा एवं उसकी दयनीय स्थिति को चित्रित करता है। सरोज अपने भाई विनायक को बताती है- "पढ़ाई मैंने नहीं छोड़ी गुड्डन,खैर मुझे उसकी शिकायत नहीं है। घर की जैसी हालत है, वैसे में माँ के पास रहना ज़्यादा ज़रूरी था।"[2] चूँकि वह परिवार की लड़की है। इसलिए उसे ही स्थिति से समझौता करना पडता है और पढ़ाई छोड़नी पड़ती है जबकि उसके भाई विनायक की शिक्षा पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

विनायक का जन्मदिन मनाया जाता है किंतु सरोज का जन्मदिन नहीं मनाया जाता।विनायक के मन में यह ख्याल आता है कि दीदी का जन्मवार क्यों नहीं मनाया जाता ? विनायक अपनी माँ से प्रश्न करता है। उसके प्रत्युत्तर में माँ कहती है-लड़कियों का जन्मदिन नहीं होता। विनायक की माँ की इस बात से लड़की और लड़के की असमानता को लेखक पाठकों के सामने दर्शाते हैं। असमानता के ये भाव परिवार से ही उपजता है।

इस प्रकार 'गोबर गणेश' में विनायक की बहन सरोज का गरीबी के कारण अधेड़ उम्र के व्यक्ति से विवाह कर दिया जाता है। जहाँ उसे पति एवं सास की शिकार बनना पड़ता है। सरोज का पति उसे कभी समझ नहीं पाता है। उन दोनों की आयु का इतना बड़ा अंतर भी कहीं-न-कहीं उनके वैवाहिक जीवन पर कुप्रभाव डालता है। सरोज के पति को न घर का परवाह था,न अपनी पत्नी का। नारी हर समय स्वयं को समर्पित करके घरवालों का भला ही सोचती है। किंतु समाज उसकी भावनाओं को समझने में असमर्थ ही रहा है। सरोज कहती है- "जब तक मैं चुप रही तब तक मैं इसे प्रिय थी, जिस दिन मैंने इसके स्वाभिमान के साथ-साथ इसकी बुद्धि को टटोलना चाहा, उसी दिन मेरे प्रति इसका लगाव खतम हो गया। उसी दिन इसने मुझे बता दिया कि तुम्हारी जगह ये है। क्या फर्क है मुझसे और इसके उन मज़दूरों में, सिवा इसके कि वे इसके खेतों में और मिल में काम करते हैं और मैं इसके घर में।"[3] समाज में नारी की स्थिति में अभी भी पूर्ण सुधार नहीं हो पाया है। कुछ प्रतिशत महिलाओं को छोड़कर नारी आज भी प्रताडित है। परिवार का, समाज का जुल्म सहने के लिए विवश है।

निर्धनता के करण सरोज अपने पति एवं सांस की उपेक्षा का पत्र बनती है। वह अपने माँ-बाप से मिलने के लिए तरस जाती है। सरोज अपनी दयनीय स्थिति एवं विवशता के विषय में विनायक से कहती है-"उस साल तू बुलाने आया था,तेरे साथ चली जाती तो अच्छा होता। माँ को बहुत बुरा लगा होगा। अब वो इस जन्म में तो मुझे माफ करेगी नहीं। मुझसे ज़्यादा कौन कुभागी होगी।"[4] बहू के रूप में सरोज को नित्य शोषण का शिकार बनना पड़ता है।

इसी उपन्यास में और एक पात्र है शान्तम, जो विनायक का दोस्त है। वह भी अपने घर की हालात विनायक से बताता है। शान्तम के पिता का विवाह पारिवारिक दबाव के कारण होता है। वह किसी ईसाई लड़की से प्रेम करता था परंतु पारिवारिक दबाव के करण उसे शान्तम की माँ से विवाह करना पड़ता है। शान्तम की माँ तो अपने पति को स्वीकार करती है परंतु शान्तम के पिता उसे अपनी पत्नी के रूप में कभी स्वीकार नहीं करते हैं। वह उसे मारता एवं गाली-गलौच करता है। शान्तम के शब्दों में-"डैडी किसी ईसाई लड़की को चाहते थे पर उनके

माँ-बाप ने ज़बरदस्ती उनकी शादी मम्मी से कर दी। कभी-कभी अनमें झगड़ा भी हो जाता है और मम्मी बुरी तरह चिल्लाने लगती है और डैडी गुस्से में आकर दरवाज़ा बंद करके उन्हें पीटने लगते हैं।"[5] दोनों के बीच वैचारिक भिन्नता, भिन्न-भिन्न आर्थिक धरातल इत्यादि के कारण वैवाहिक जीवन में अनेक समस्याएँ बनी रहती है।

शान्तम की माँ विनायक को अपने विवाहोपरांत जीवन के विषय में बताती है- "मगर हम जब अपना बाप के घर में रहता था तो एक बेबी का माफिक हँसता था। ससुराल में आकर हँसना भी भूल गया।"[6] ससुरालवालों एवं पति की उपेक्षा के करण नारी जीवन असहाय बन जाता है।

रमेशचंद्र शाह ने उपन्यास साहित्य द्वारा भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है। उन्होंने नारी शोषण, उनपर अन्याय, अत्याचार, उनसे असमान व्यवहार एवं उनकी गरिमा को आघात पहुँचाना इत्यादि पर लेखनी चलाई है। नारी जीवन अनेक कठिनाईयों से भरा होता है। समाज में उसकी स्थिति आज भी दयनीय है।

नारी शिक्षा, अपने अधिकारों के प्रति जागृति, कुप्रथाओं एवं परंपरागत रूढ़ियों के विरूद्ध नारी संघर्ष ही नारी जीवन में नई ऊर्जा ला सकती है। उसे नया जीवन एवं नई पहचान दे सकता है। अत: पुरुष प्रधान समाज में अपने पहचान हेतू नारी संघर्ष आवश्यक है। किसी भी देश अथवा समाज की उन्नति में स्त्री का विशेष योगदान रहता है। अत: समाज को भी नारी के महत्व को स्वीकार करना चाहिए तथा उनकी गरिमा हेतु मान-सम्मान देना चाहिए। निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि रमेशचंद्र शाह जी के 'गोबर गणेश' उपन्यास नारी को महत्व देकर लिखा गया उपन्यास है तथा इस उपन्यास के ज़रिए नारी की प्रधानता पाठकों तक पहुँचाने में वे सफल हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:135
2. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:258
3. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:135
4. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:259
5. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:257
6. गोबर गणेश, रमेशचंद्र शाह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ.सं:260

8111977566 **revathysmohan21@gmail.com**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 95-98
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

"पगहा जोरी जोरी रे घाटो": आदिवासी नारी प्रतिरोध के संदर्भ में

ANILA. A. L, Research Scholar in Hindi
University College, Thiruvananthapurm,Kerala

हमारा भारत एक अत्यंत श्रेष्ठ देश है। यहाँ अनेक धर्म, जाती, संस्कृति, संप्रदाय के लोग जीवित हैं। उसमें आदिवासियों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। आदिवासियाँ जंगल में रहते हैं, वह सभ्य समाज से अधिक संपर्क नहीं रखते हैं। उनके जीवन के आधार जल, जंगल, ज़मीन है। इन तीनों को वह अपना सब कुछ मानते हैं। प्रकृति ही उनकी देवता है। आदिवासियों के जीवन के प्रति नज़रिया ऐसा है कि :-

"बामणों में पैदा होंगे / लिख लिख मरोगे
मारवाड़ी होंगे / तोल-तोल मरोगे
चमार होंगे / जूता घिस-घिस मरोगे
पर होंगे वाली / तो जंगल के राजा बनोगे"[1]

- जंगलचे राजे

इस नज़रिया से वह अपना जीवन - यापन करता है। इस दृष्टि का झलक व छाया उनके लोक साहित्य में हमें देख सकते हैं।

आज़ादी मिलकर कई वर्ष हो चुके है, लेकिन आदिवासियाँ अपनी अस्मिता के लिए आज भी लड़ रही है। वह हमेशा शोषण का शिकार होते रहते हैं। उसमें नारी का अवस्था बहुत दयनीय है। इस समाज में स्त्री चाहे शिक्षित हो या अशिक्षित हो, ग्राम की हो या नगर की हो हमेशा सभी स्त्रियों की वेदना के कारण एक होते हैं। यहाँ तो नारी शब्द के साथ आदिवासी शब्द जुड़ गया है। नारी आज भी सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक शोषण का प्रतीक है। यह प्रतीक समस्त विश्व पर लागू है। "जिस भूमि पर नारी को पुरुष का आधा अंग माना गया है उसी पर उसे पुरुष के पाँव की जूती बनकर रखने में विश्वास किया गया है"।[2] सदियों से अपनी अस्मिता के लिए स्त्रियाँ लड़ते आ रही है। आज भी यह लड़ाई हो रही है। इन लोगों को अपने अज्ञानता और पिछड़ेपन के कारण समाज के मुख्य धारा से कटकर हाशिए पर रखा गया है। आदिवासी स्त्रियों की मुख्य समस्या अनपढ़ होने की है। लेकिन आज आदिवासी समाज में बहुत सारे लोग

शिक्षा प्राप्त किये हैं। उन लोगों की सघनता और समस्याओं के बारे में वे खुद लिखना शुरू किया है। आदिवासी लेखकों द्वारा रचित बहुत ज्यादा रचनाएँ हैं। उसमें प्रसिद्ध एवं चर्चित कहानी संग्रह है 'पगहा जोरी जोरी रे घाटो'।

'पगहा जोरी जोरी रे घाटो' आदिवासी लेखिका रोज़ केरकेट्टा द्वारा रचित प्रसिद्ध कहानी संग्रह है। उल्लेख कहानी संग्रह में सोलह कहानियाँ संकलित हैं। इस कहानी संग्रह में झारखंड के ग्रामीण समाज के प्रति उनका गहरा जुड़ाव दिखाई देता है। झारखंड के छोटानागपूर में आदिवासी बच्चों खेलने वाली एक खेल है पगहा जोरी जोरी रे घाटो। इस खेल के बारे में लेखिका ने स्पष्ट किया है कि - "जाड़े की दिनों में ठंड से बचने के लिए दौड-धूप वाले खेल ज्यादा खेलते हैं। जोड़ के दिनों में प्रवासी पक्षी घाटो सरहेईर (जंगली बत्तख) दक्षिण की ओर पंक्तियों में उड़ते हैं। घाटो के लिए माना जाता है कि यदि वे सिर के ऊपर से उडकर जा रहे हों तब नीचे एक सांस में घास की सात गाँठें बांध ली जाएं, तो घाटो दूर जाने की बजाए आसमान में चक्कर काटते रह जाएंगे"।[3] इस कहानी संग्रह के कहानियों के माध्यम से रोज जी ने आदिवासी नारी जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है। रोज केरकेट्टा की कहानी संग्रह में स्त्री को हमेशा एक प्रत्येक स्थान दिया जाता है। लेकिन उनकी कहानियों में पुरुषों के विरोध भी नहीं करता है। रोज केरकेट्टा जी ने सिर्फ व्यवस्था के विरोध अपनी आवास उठाई है। उनकी हर एक कहानी में स्त्री का अलग-अलग भाव की झलक देखने को मिलते है। उन्होंने कथा साहित्य में एक नए स्वाद लाने की कोशिश किया हैं। 'पगहा जोरी जोरी रे घाटो' कहानी संग्रह के बारे में प्रसिद्ध आलोचक 'वीरभारत तलवार' ने अपना मत प्रकट किया है - "रोज ने अपने कथा- संग्रह में आदिवासी जीवन को सघनता और संपूर्णता के साथ शामिल किया है। जो जिया है, उसे ही लिखा है। संग्रह में व्यापकता है, विविधता है, आधुनिकता है, और जो सबसे बड़ी बात है, वह है प्रतिरोध का राजनीतिक स्वर। इसमें हिंदी साहित्य में चल रहे स्त्री विमर्श से अलग ढ़ंग की कहानीयाँ हैं, जो पुरुष के विरोध में नहीं, व्यवस्था के विरोध में खड़ी है। यहाँ अलग तरह का नारीवाद है। जल, जंगल, जमीन पर हो रहे हमले के खिलाफ लड़ता हुआ नारीवाद"।[4]

इस कहानी संग्रह में लेखिका आदिवासी नारी पर होने वाले अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष करके प्रतिरोध और प्रतिशोध के लिए प्रेरणा दे रहे हैं।

'भँवर' नामक कहानी में नायिका मालकिन को पितृसत्ताक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उड़ाते हैं। उनके दो बेटियाँ हैं। पति के मृत्यु के बाद पुत्र न होने के कारण से मालकिन को पति की संपत्ति पर अधिकार नहीं मिलता है। लेकिन मालकिन कानून की सहायता माँगती है। जैसे लेखिका लिखती है "14 अप्रैल 1937 एक हिंदू स्त्रियों की संपत्ति पर अधिकार अधिनियम 1937 हो चुका था इसे कृषि योग्य ज़मीनो पर बिहार अधिनियम 6 सन 1942 के द्वारा लागू किया गया इससे पहले सामाजिक कानून के तहत भी विधवा को पड़ी की संपत्ति पर परिसीमित हक

था"।[5] लेकिन इस लड़ाई में मालकिन को समाज की क्रूरता का पात्र होना पड़ा। फिर भी वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठाने की कोशिश करता है।

'घाना लोहार का' कहानी में नायिका रोपनी निम्न जाति के स्त्री है। लेकिन उसका संबंध उच्च वर्ग के जगत सिंघ के साथ था। जगत सिंघ ने रोपनी को पत्नी जैसा रखा था। इस संबंध से उसे एक लड़का भी पैदा हुआ, उसका नाम है सोमरू। लेकिन कहानी के आगे बढ़ते, जगत सिंघ के संपत्ति पर बात आई तो, निम्न जाति होने के वजह से रोपनी और सोमरू को पति की संपत्ति पर अधिकार मना करता है। रोपनी गाँव के मुखिया से सहाय मांगती है, लेकिन ये श्रम असफल होता है। कहानी के अंत में रोपनी उसके साथ हुआ, अन्याय का बदला लेता है। लेखिका लिखती है कि - "कुछ दिन बीत गए। लग रहा था आँधी थम गई है। उसे दिन रात का समय था। जगत सिंघ और चंदरू सिंघ रसोई के सामने बियारी के लिए बैठे थे। उसके सामने थाली रखी थी। रुकमइन खाना परोस रही थी। अचानक रोपनी प्रकट हुई। उसके हाथ में बलुवा चमक रहा था। उसने कहा, 'जगत सिंघ, मैंने कसम खाई है बेटे की। सात बैंगनी...'। कहते-कहते उसने हाथ चला दिया। जगत सिंघ का सिर थाली में गिर गया। फुरती से उसने दूसरा वार चंदरू पर किया। उसका बायाँ हाथ कंधे से कटकर अलग हो गये। खून का फव्वारा छूटा। थोड़ी देर तड़पकर चंदरू मर गया। चंदरू को मरते देखने के लिए कोई नहीं था। रुकमइन चिल्लाकर रसोई में भागी और दरवाज़ा बंद कर लिया। रोपनी दरवाजे के पास गई। दरवाजे पर उसने बलुवा चलाया और सीधे थाना पहुँच गई। खून सने बलुवा के साथ रोपनी ने थानेदार के सामने अपना अपराध स्वीकार कर लिया"।[6] रोज केरकेट्टा जी ने रोपनी के माध्यम से स्त्री की जीवन संघर्ष और उसकी प्रतिरोध के आग को पाठकों के सामने पेशाने की कोशिश की है।

'केराबांझी' कहानी में नायिका हिरामती भी अपने साथ चलते संघर्षो का प्रतिरोध करते है। हिरामती की पति बालधन एक पढ़ी-लिखी आदमी है। उनके कहने पर हिरामती ने सिर्फ़ एक ही बच्ची को जन्म दिया। लेकिन बालधन का पिता कालिंदीचरण को इस बात पर स्वीकार नहीं था। उनका मानना है कि परिवार में ज़्यादा बच्चे चाहिए। कालिंदीचरण ने इस बात को लेकर हिरामती को हमेशा ताने मारते हैं। इसके प्रति हिरामती ने अपनी आवाज़ उड़ती है। वह कहती है- "आप मुझे केराबांझी कह सकते हैं। क्योंकि हमने, हाँ हम पति-पत्नी ने मिलकर इसे स्वीकारा है। मुझे बस यही कहना है कि मैं केराबांझी ही रहूंगी। चाहे कोई कुछ भी कह ले। आगे कुछ कहना है आपको?"।[7] इस प्रकार हिरामती के माध्यम से रोज जी ने प्रतिरोध के झलक पाढ़कों के सामने दर्शाया है।

'पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' कहानी में नायिका दया ने शिक्षा के लिए अपने माँ-बाप से संघर्ष करती है। अपनी प्रतिरोध को दर्ज करती है। इस कहानी का विषय ही दया का शिक्षा के प्रति दृढ़ निश्चय है। दया की माँ-बाप लड़कियों की शिक्षा देने के लिए विरोधी है। इसलिए वह बहुत कुछ सहती है, खाना-पीना छोड़ देती है और हमेशा रोती रहती है। फिर भी दया अपनी ज़िद्दी

से हिलता नहीं। वह अपनी माँ-बाप से कहता है - "तुम तो अपने बेटों को स्कूल भेजते हो।... मुझे स्कूल जाना है, बाबा मैं पढ़ना चाहती हूँ"।[8] इस प्रकार दया ने अपने माँ-बाप से पढ़ाई करने के लिए हमेशा संघर्ष करती रहती है। अंत में दया अपनी ढृढ़ निश्चय पर पहुँच जाती है। वह कॉलेज जाती है और अपनी शिक्षा पूरी करती है।

समाज में स्त्री अभी तक पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं है। हमेशा स्त्री को विविध समस्याओं पर संघर्ष करना पड़ता है। वह पुराण से लेकर आज तक अपनी अस्मिता की लड़ाई करते आ रही है। इसमें आदिवासी स्त्रियाँ कैसे छूट सकती है। 'पगहा जोरी -जोरी रे घाटो' कहानी संग्रह के द्वारा रोज़ केरकेट्टा जी ने आदिवासी स्त्रियों पर होते अन्याय एवं अत्याचार को समाज के सामने लाने की कोशिश की है। इस कहानी संग्रह में रोज जी ने अभिव्यक्ति की जिस शैली को उपयोग किया है, झारखंड के ग्रामीण जीवन से परिचित है या अपरिचित पाठकों को भी पूरी कहानी का कथ्य अपना सा लगता है। लेखिका बहुत सरल एवं एक अलग अंदाज में हर कहानी लिखी है। इस पुस्तक से लेखिका का उद्देश्य है, समाज में स्त्रियाँ जो लड़ाई लड़ती आ रही है, उस लड़ाई को ताकत देना।

हमें समझना चाहिए कि स्त्री अबला नहीं, वह एक शक्ति है। वह लड़ेंगे अपनी आखिरी सांस तक, हारेंगे नहीं।

संदर्भ सूची :

1. डॉ. रमणिका गुप्ता, आदिवासी स्वर और नई शताब्द
2. डॉ. प्रमोद कोवप्रत, हिंदी साहित्य समय से साक्षात्कार
3. रोज केरकेट्टा, आदिवासी बच्चों के खेलों में जीवन दर्शन
4. अभिगमन, 4 जुलाई 2017
5. रोज केरकेट्टा, पगहा जोरी-जोरी रे घाटो, पृष्ठ सं. 16
6. वहीं पृष्ठ सं. 28
7. वहीं पृष्ठ सं. 34
8. वहीं पृष्ठ सं. 146

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 99-101
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

रीतिकालीन गौण कवियों की कविता में भक्ति का निरूपण

डॉ. उमा मेहता, सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग,
गुजरात आर्ट्स एण्ड सायन्स कॉलेज, अहमदाबाद, गुजरात -380006

हिन्दी साहित्य के इतिहास में मध्यकालीन हिन्दी साहित्य की समृद्धि अतुलनीय एवं विशेष उल्लेखनीय हैं। हम जब भी मध्यकालीन हिन्दी साहित्य की बात करते हैं, तो अक्सर भक्तिकाल और रीतिकाल के प्रमुख कवि और उनके योगदान की चर्चा करके इति श्री कर देते हैं। मध्यकालीन उन गौण कवियों की स्तरीय रचनाओं की ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता, जो इन प्रमुख कवियों की रचनाओं से कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। मध्य कालीन हिन्दी साहित्य को 'सुवर्ण काल' बनाने में प्रमुख कवियों के साथ-साथ गौण कवियों का योगदान स्वयं एक मिसाल हैं। उत्तर मध्यकाल अर्थात् रीति काल में चारों ओर लक्षण ग्रंथों की धूम मची हुई थी और शृंगार रस प्रधान काव्य ही लिखे जा रहे थे। रीतिकालीन प्रमुख कवियों ने अपनी विद्वता प्रदर्शित करने के लिए शृंगार रस प्रधान लक्षण ग्रंथों की रचना की। लेकिन रीतिकालीन कुछ कवियों ने परंपरा से अलग हटकर नीति और भक्ति से युक्त काव्य रचना की। भक्तिकाल में भक्ति की प्रमुख चार शाखाएँ- राम काव्य धारा, कृष्ण काव्य धारा, संत और सूफी काव्य धारा पल्लवित हुई, वो ही भक्ति की शाखाएँ आगे चलकर रीति काल में भी फली -फूली। रीति काल में शृंगार परक लक्षण ग्रंथों के साथ साथ कुछ कवियों ने भक्ति की धारा भी प्रवाहित करने की कोशिश की हैं। लेकिन भक्ति की इन काव्य धाराओं को रीतिकाल में इतना प्रतिसाद नहीं मिला, जितना की भक्तिकाल में मिला था। रीतिकालीन गौण कवियों की कविता में भक्ति का निरूपण बिलकुल मौलिक व मार्मिक बन पड़ा हैं।

रीतिकालीन गौण कवियों में भक्त वर नागरदास जी, महाराज विश्वनाथ सिंह, बख्शी हंसराज, जनकराज किशोरीशरण, भगवत रसिक, श्री हठी जी, सरजूराम पंडित, रामचंद्र, मंचित, मधुसूदनदास, कृष्णदास, गणेश, मनियार सिंह, ललकदास इत्यादि की कविताओं में भक्ति का साहजिक निरूपण मिल जाता हैं। इन कवियों ने अपनी रचनाओं में कृष्ण भक्ति, राम भक्ति, संत एवं सूफी विचारधाराओं को प्रवाहित करने की कोशिश की हैं।

कवि **रामचंद्र** ने अपनी पुस्तक 'चरणचंद्रिका' में पार्वती जी के चरणों का वर्णन अत्यंत ही सुंदर ढंग से किया हैं। इस वर्णन में अलौकिक एवं अनंत ऐश्वर्य की भावना स्पष्ट परिलक्षित होती हैं। देखिए-

" नूपुर बजत मानि मृग से अधीन होत,
मीन होत जानि चरनामृत झरनि को।
खंजन से नचै देखि सुषमा सरद की- सी,
संचै मधुकर से पराग केसरनि को।
रीझि-रीझि तेरी पदछबि पै तिलोचन के
लोचन ये, अंब ! धायैं केतकि धरनि के।"[1]

कवि मंचित ने कृष्ण संबंधी दो पुस्तकें लिखी हैं- 'सुरभि दानलीला' और 'कृष्णायन'। 'सुरभि दानलीला' में बाललीला और दानलीला का विस्तृत वर्णन किया हैं। इनमें कृष्ण का नखशिख वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि कृष्ण के कान के हिलते हुए कुंडल मन को हर लेते हैं। कृष्ण के कपोल, भृकुटी एवं बाँके अनियारे नैन मीन जैसे प्रतीत होते हैं। कवि कृष्ण के मतवारे नैनों का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि,

" भुकुटी बंक नैन खंजन से कंजन गंजनवारे।
मदभंजन खग मीन सदा से मनरंजन अनियारे।।"[2]

'रामाश्वमेध' नामक मनोहर प्रबंध काव्य के रचयिता **मधुसूदन दास** ने श्री रामचंद्र द्वारा अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान, घोड़े के साथ गयी हुई सेना के साथ सुबाहु दमन, वीरमणि, शिव, सुरथ आदि का घोर युद्ध, अंत में राम के पुत्र लव और कुश के साथ संग्राम, श्री रामचंद्र द्वारा युद्ध का निवारण और पुत्रों सहित सीता का अयोध्या में आगमन, इत्यादि का वर्णन बहुत ही रसप्रद हैं। देखिए-

"सिय रधुपति पद कंज पुनीता। प्रथमहिं वंदन करौं सप्रीता।।
मृदु मंजुल सुंदर सब भाँती। ससि- कर सरसि सुभग नख पाँती।।
प्रणत कल्पतरु तर सब ओरा। दहन अज्ञ तम जन चित चोरा।।
त्रिविध कलुष कुंजर धनधोरा। जगप्रसिद्ध केहरि बरजोरा।।"[3]

कृष्णदास मिरजापुर के कृष्ण भक्त थे। उन्होंने 'माधुर्य लहरी' में विभिन्न छंदों में कृष्ण चरित का वर्णन किया हैं। **कवि गणेश** ने भी भक्ति का निरूपण करते हुए 'प्रद्युम्न विजय नाटक' एवं 'हनुमंत पचीसी' की रचना की। **मनियार सिंह** ने 'हनुमतछबीसी' और 'सुंदरकांड' में हनुमानजी के प्रति अपनी भक्ति भावना प्रदर्शित करते हुए लिखा हैं कि -

"वीर हनुमंत तेहि गरजि सुहास करि,
उपटि पकरि ग्रीव भूमि लै परे पछारि।
पुच्छ तें लपेटि फेरि दंतन दरदराइ,
नखन बकोटि चौंथि देत महि डारि टारि।"[4]

कवि भगवत रसिक महात्मा स्वामी ललित मोहनीदास के शिष्य थे और निर्लिप्त भाव से भगवद्भजन में लीन रहते थे। इन्होंने कृष्ण भक्ति में प्रेमरस से पूर्ण एवं वैराग्य भाव से युक्त पद लिखे हैं। इसलिए एक स्थान पर कहा हैं कि
"भगवत रसिक रसिक की बातें रसिक बिना कोऊ समुझि सकै ना।"[5]

श्री हठी जी हितहरिवंश जी की शिष्य परंपरा में बड़े ही साहित्य मर्मज्ञ और कला कुशल कवि हो गये हैं। इनका प्रमुख ग्रंथ 'राधासुधाशतक' हैं। यह ग्रंथ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रिय ग्रंथ हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य हैं-

"गिरि कीजै गोधन मयूर नव कुंजन को,
पसु कीजै महाराज नंद के नगर को।
नर कौन? तौन जौन राधे राधे नाम रटै,
तट कीजै वर कूल कालिंदी कगर को।"[6]

जनकराज किशोरीशरण अयोध्या के एक वैरागी थे। इन्होंने भक्ति, ज्ञान और रामचरित संबंधी बहुत सी कविता की हैं। इन्होंने राम और सीता के शृंगार, ऋतुविहार आदि का वर्णन किया है। **अलबेलि अलि** विष्णुस्वामी संप्रदाय के महात्मा 'वंशीअलि' जी के शिष्य थे। **बख्शी हंसराज** का सांप्रदायिक नाम 'प्रेमसखी' था। 'सखी भाव' के उपासक होने की वजह से इन्होंने अत्यंत प्रेम माधुर्य पूर्ण रचनाएँ लिखी हैं। जैसे कि-

"एरे मुकुटवार चरवाहे! गाय हमारी लीजौ।
जाय न कहूँ तुरत की ब्यानी, सौंपि खरक कै दीजौ।
होहु चरावनहार गाय के बाँधनहार छुरैया।
कलि दीजौ तुम आय दोहनी, पावै दूध लुरैया।"[7]

भक्तवर नागरीदास जी गृह कलह से विरक्ति लेकर वृंदावन चले गये और वहाँ विरक्त भक्त की तरह रहने लगे। वृंदावन से इन्हें इतना प्यार था कि एक बार ये वृंदावन के उस पार जा पहुँचे। रात को जब यमुना के किनारे लौटकर आये तब वहाँ कोई बेड़ा न था । वृंदावन का वियोग इन्हें इतना असह्य हो गया कि ये यमुना में कूद पड़े और वृंदावन आये। इस घटना का उल्लेख उन्होंने इस प्रकार से किया हैं।

" देख्यो श्रीवृंदा बिपिन पार। बिच बहति महा गंभीर धार।
नहिं नाव, नाहिं कछु और दाव। हे दई! कहा कीजै उपाव।" [8]

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. आ. रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 256
2. वही, पृ. 257
3. वही, पृ. 258
4. वही, पृ. 259
5. वही, पृ. 246
6. वही, पृ. 247
7. वही, पृ. 244
8. वही, पृ. 240

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 102-106
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

कालीबंगा सभ्यता का अद्भुत स्वरूप व विकास

श्री विक्रम सिंह यादव, असिस्टेंट प्रोफेसर
राजकीय कन्या महाविद्यालय भिवाड़ी खैरथल तिजारा

शोध सारांश

राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले का प्राचीन तथा ऐतिहासिक दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ स्थल कालीबंगा माना जाता है, यहां सिंधु सभ्यता के अवशेष भी पर्याप्त मिले हैं यहां एक दुर्ग मिला है जिसके अंदर छोटा सा नगर भी था प्राचीन दृषद्वती व सरस्वती नदी घाटी के बीच वर्तमान में घग्गर नदी के बहाव क्षेत्र सिंधु सभ्यता से भी प्राचीन सभ्यता पल्लवित तथा उद्घोष हुआ। कालीबंगा 4000 ईसा पूर्व से पहले की मानी गई है। सर्वप्रथम अमलानंद घोष ने 1952 में इस सभ्यता की खोज की, बी.के थापर व बी.बी लाल ने यहाँ उत्खनन का कार्य 1961 से 1969 ईस्वी में किया। कालीबंगा से 2800 ईसा पूर्व जुते हुए खेत की रेखा मिली है जो दक्षिण से पूर्व दिशा में मिली है। बी.बी.लाल के अनुसार कालीबंगा में भूकंप का प्रमाण सबसे पहले मिला है जो 2600 ईसा पूर्व माना है। सिंधु सभ्यता का खनन स्थल में अमूल्य योगदान माना गया है। कालीबंगा का यहां पर अग्नि वेदिका के सात कुंड मिले हैं जिससे यह कर्मकांड में अग्नि पूजा में आस्थाअभिव्यक्त हुई है अग्निवेदिका में ऊंट की हड्डी मिली है। कालीबंगा में एक टाइलयुक्त प्रतिच्छेद चिन्ह वाला प्रमाण भी मिला है। इस प्रकार कालीबंगा भारतीय सभ्यता में रोचकता व अपनी उपस्थिति दर्ज समकालीन सभ्यता में योगदान है।

संकेत अक्षर- भग्नावशेष , घग्घर, मृदभांड, कब्रिस्तान, सुरक्षा चौकी

प्रस्तावना

भारत में जिस समय विभिन्न भागों में प्राचीन सभ्यताएं का श्री गणेश हो रहा था उस समय राजस्थान के भी विभिन्न भागों में एक समृद्धशाली सभ्यता और संस्कृति का भी उद्घोष हो रहा था। पाषाण कालीन उत्तर भारत में राजस्थान में सभ्यता का अंधकार पूर्ण कुछ अंश स्वरूप दिखाई देने लगा किंतु समय के चक्कर के साथ मनुष्य उस स्तर से आगे बढ़ा। हमें राजस्थानी सभ्यता का गौरव ज्ञान हुआ। राजस्थान के पुरातत्व विभाग तथा भारत सरकार पुरातत्व विभाग से प्रदेश में विभिन्न क्षेत्रों में उत्खनन के कार्य की शुरुआत हुई। जो आज भी जारी है

प्राप्त अवशेषों के आधार पर ज्ञात है कि सिंधु सभ्यता से प्राचीन तथा उसके समकक्ष सभ्यता होने की जानकारी ज्ञात है । राजस्थान में सभ्यता व संस्कृति का क्रमबद्ध विकास का पता चलता है । संभावित ऋग्वेदिकयुग से राजस्थान के वर्तमान में रेगिस्तान क्षेत्र पहले समर्थ था । आहड नदी (उदयपुर के आसपास का क्षेत्र) और सरस्वती नदी समुद्र में आकर मिलती थी । जिस प्रकार कहा जाता है । ऋषियों व विद्वानों ने ऋग्वेद के मंडलों की रचना पर मानव संस्कृति प्रभावशाली थी । यह कुछ प्रतीको के आधार पर हड़प्पा व मोहनजोदड़ो के समकालीन मानी जा सकती है । इस सभ्यता में राजस्थानी पशु-पालने, खिलौने तैयार करना, मकानो का निर्माण के साथ, व्यापार वाणिज्य आदि विभिन्न कलाओं में निपुण थे । जो आज से 5000 से 6000 ईसा पूर्व इन नदी घाटी में मानव सभ्यता का निर्माण हुआ । राजस्थान के विभिन्न स्थान जो उत्खनन में मिले हैं । कालीबंगा, बागोर, बैराठ , गणेश्वर, रंग महल प्रमुख मानी जाती है ।

कालीबंगा की सभ्यता

सभ्यता का अर्थ होता है मानव जब से पढ़ना-लिखना सीखता है उसे सभ्य कहते हैं सभ्य से ही सभ्यता का मानव जाति के सभी उत्थान व पतन की जानकारी मिलती है । भारत के पुरातत्व विभाग ने पंजाब, राजस्थान, गुजरात में उत्खनन कार्य प्रारंभ किया था । जिसके फल स्वरुप अमलानंद घोष ने राजस्थान के कालीबंगा का महत्वपूर्ण टीला खोज निकाला यह कार्य बृजवासी लाल, बालकृष्ण थापर ने जारी रखा । इन पुरातत्ववेताओ ने कालीबंगा की पुरानी टीले को खोद कर इसमें न केवल सिंधु -हड़प्पा व मोहनजोदड़ो के अंतर्गत अवशेष मिले थे । बल्कि प्राचीनतम संस्कृति के अवशेष मिले थे कालीबंगा में पांच स्तर से खुदाई मानी जाती है दो स्तर हड़प्पा से पहले के हैं तथा तीन स्तर हड़प्पा के समकक्ष हैं । यह ऐतिहासिक दृष्टि से गंगानगर की सूखी घग्गर प्राचीन सरस्वती नदी के तट पर बसावट है । इस युग में चार-पांच हजार ईसा पूर्व इस नदी के किनारे सभ्यता का विकास हो चुका था । कुछ प्राकृतिक कारणों से यह सभ्यता का पतन हो गया था तथा सरस्वती नदी लुप्त हो चुकी थी और इस सभ्यता के होने के संबंध में डॉ. गोपीनाथ शर्मा ने लिखा - कि भूचाल से कच्छ के रन का रेत भर जाने के कारण हो सकता है, जो समुद्री लहरों में नमी बनी हुई थी वर्षा की अधिकता बनी जिससे इस सभ्यता का पतन हुआ । इसका अन्य कारण भूकंप को भी प्रमाण माना जाता है

कालीबंगा का उत्खनन कार्य

कालीबंगा का उत्खनन का श्री गणेश 1952 ई. में हुआ था इसके तुरंत बाद 1961 ई. से 1969 ई. के बीच पुन: यह कार्य किया गया । कालीबंगा की खुदाई का कार्य पांच स्तर से हुआ जिसमें प्राचीन स्तर प्रथम व द्वितीय है और कालीबंगा के समकक्ष बाकी स्तर हैं । यह घग्गर नदी प्राचीन सरस्वती नदी के दो टीले की पहचान की गई इसके आसपास में 12 मीटर तक उत्खनन कार्य जिसका क्षेत्रफल ½ किलोमीटर लगभग है । इस खुदाई में प्राप्त सामग्री में प्रस्तर धातु काल में विश्व की श्रेष्ठ सभ्यताए में एक थी । राजस्थान के उत्तर पश्चिम भू-भाग में स्थित है

। डॉ. दशरथ ने कालीबंगा को तृतीय राजधानी का दर्जा दिया है । जो सिंधु सभ्यता की प्रथम हड़प्पा को मानते तथा दूसरा मोहनजोदड़ो को इतिहासकार मानते हैं । कालीबंगा की खुदाई का कार्यविभिन्न चरणों के साथ कई दशको तक होता रहा जो आज भी प्रक्रियाधीन है ।

कालीबंगा में नगर व भवन निर्माण

कालीबंगा के टीले से हमें प्राचीन सभ्यता के प्रमाण मिलते हैं जिसमें पांच में से तीन स्तर का पुनः निर्माण किया था ऐसी संभावना है । यहां सभ्यता संस्कृति की बसावट उच्च कोटि की रही होगी कालीबंगा से स्पष्ट होता है । उसका निर्माण किसी विशेष शैली के अंतर्गत हुआ था जो उत्तर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम की तरफ सड़क जाती है । मकान की कतारो को सड़क के समकोण पर जोड़ती है । इस सभ्यता में पूर्व टीला व पश्चिम टीला दोनों को पर कोटा में बंद किया है जो अन्य हड़प्पा व मोहनजोदड़ो में दुर्ग पर पश्चिम टीला को ही दुर्गीकृत किया है । सड़क को पक्का करने का प्रयासरत थे। तथा यह लोग लकड़ी की नाली से घर का गंदा पानी कुएं में डालते थे । इसमें सामान्यत: जल- निकासी का अभाव माना जाता है । इसमें मिट्टी की ईंट का निर्माण 30×15×7.5 सेंटीमीटर था ईंट की चिनाई के बाद उसको मिट्टी के गारे से प्लास्टर किया जाता था तथा मकान की फर्श को भी डिजाइन से प्लास्टर किया जाता था । मकान की छत को लकड़ी से तथा मिट्टी से निर्मित किया है । कालीबंगा के लोग पक्के मकान से अनभिज्ञ थे तथा एक साथ निर्मित चूल्हो का भी निर्माण देखा गया है छोटे टीले का प्रथम- द्वितीय स्तर से ज्ञात है चारो और चौड़ी खाई बनाई गई थी । बड़े-बड़े कमरे, एक कुआं व लंबा दालान था । ऐसा अनुमान है यहां मुख्य बस्ती के निकट सुरक्षा चौकी होगी ।

बर्तन तथा अन्य सामग्री

कालीबंगा की खुदाई में मिट्टी के बर्तन वह चूड़ियां मिली है जो काले रंग की थी इससे ही कालीबंगा का नाम पड़ा था । बर्तन की कुछ विशेषता है यह काफी पतले और हल्के थे इन्हें चाक से तैयार किया जाता था लेकिन बर्तन में सुंदरता व सुडौलता बिल्कुल नहीं थी । बर्तन का रंग लाल, परंतु शीर्ष - मध्य भाग काला और सफेद रंग से रेखाएं स्पष्ट दिखाई गई है । बर्तन चौकोर, गोल, जालीदार, वृताकार, घुमावदार, त्रिकोण तथा समांतर रेखाएं से अलंकरण ज्ञात है । इस पर फूल पत्ती, खजूर, पक्षी आदि आकृति बनी है कुछ बर्तन पर हिरण, बत्तख, मछली की आकृति से सजावट की गई है । इससे यह पता चलता है कि कालीबंगा के निवासी रंग व उनका प्रयोग को अच्छे से जानते थे । मकान में बर्तन के अलावा यहां पर मिट्टी की मोहरे, चूड़ियां, तोल के बाट, चाकू, तांबे के औजार, कांच के मणियों भी मिले हैं यहां पर सैन्धव लिपि भी ज्ञात है । इस लिपि से अक्षर एक दूसरे पर उत्कीर्ण प्रतीत होते हैं । यह दाएं से बाएं लिखी जाती थी जो भाव चित्रात्मक शैली थी ।

दुर्ग से भग्नावशेष के अंश

कालीबंगा में दुर्ग के भग्नावशेष प्राप्त हुए थे सुरक्षा की दृष्टि से दुर्ग पश्चिम दिशा में टीले पर स्थित तथा दुर्ग समचतुर्भुज आकृति से बना था और परकोटा में ईंट का प्रयोग हुआ है । कुछ परकोटे में गलियारा भी बनाया है जो समान माप के नहीं थे । चबूतरे ऊचे हैं अंदर गलियारों पर बनी हुई सीढ़ियां को ऊपर चलने के कार्य ज्ञात हैं । अग्निवेदीका दुर्ग के अंदर मिली है संभवतः धार्मिक अनुष्ठान करने के लिए अग्निकुंड बने होंगे । यह अग्निकुंड आयातकर हैं । दुर्ग का प्रवेश द्वार उत्तर दिशा में तथा दूसरे का दक्षिण दिशा में था ।

दक्षिणी दरवाजा नष्ट हो गया परंतु सीढियों के अवशेष मिले हैं इससे यह सिद्ध हो जाता है कि सीढ़ियां का दुर्ग पर जाने के लिए उपयोग होता था ।

अंतिम - संस्कार

कालीबंगा में 300 मीटर की दूरी से उत्तर- पश्चिम में कब्रिस्तान मिला है । जिससे पुरातत्व सर्वेक्षण वेताओ ने बताया है कालीबंगा में तीन तरह से दाह- संस्कार किया जाता था । आयातकर - इसमें शव सीधा लिटा देते थे । वर्ताकार गर्त - इसमें शव को सीधा नहीं लेटा सकते थे । आयातकार के साथ मृदभांड निक्षेप । इस प्रकार दूसरी- तीसरी में कोई शव नहीं मिला तथा शव का सिर उत्तर दिशा में तथा पैर दक्षिण में होता था । सिर के नजदीक कुछ वस्तु रखी जाती थी जिसमें एक कब्र से दर्पण मिला है जो तांबे का था लेकिन मृदभान्ड, घीया पत्थर, शंक व मणके प्राप्त हुए है ।

हड़प्पा से पूर्व सभ्यता के संकेत

कालीबंगा के प्राप्त अवशेष से हड़प्पा से पूर्व सभ्यता पाकिस्तान के कोट - डीह नामक स्थान से मिले हैं तथा पाकिस्तान पुरातत्व विभाग ने इसका नाम कोट डिग्गी का नाम दिया है । इसकी रिपोर्ट से पता होता है कि इसके अवशेष हड़प्पा से पहले के थे इस प्रकार कालीबंगा के छोटे टीले से तथा पाकिस्तान के कोट- डीग्गी के प्राप्त अवशेष से पुरातत्व विभाग इसे प्राचीन और अविकसित सभ्यता की परिचायक बताया है। पुरातत्व विभाग ने हड़प्पा के पूर्व के लोग जिनकी अर्थव्यवस्था सिंधु सभ्यता से काफी दुर्बल बताई गई है । हड़प्पा के लोग की दो श्रेणी थी । एक अपनी पहली जो आरंभ अवस्था मानी जाती है दूसरी अवस्था विकसित मानी जाती है । जिसे नगरीय सिंधु सभ्यता का दर्जा मिला है । आरंभिक स्वरूप में तकनीकी तथा भौतिक दृष्टि से सर्वोत्तम मुखी विकसित अवस्था है । समय के अनुसार बदलते स्थान में जाति-विशेष लोगों के समय के साथ, पोशाक, आवास, आवश्यक वस्तुओं का उपयोग में निरंतर परिवर्तन मिलता है ।

निष्कर्ष

कालीबंगा सूरसाठ नामक जगह जो पीलीबंगा के बीच में स्थित है। यह हनुमानगढ़ जिला की एक प्राचीन सभ्यता स्थल ज्ञात है यह स्थल 450 से 600 वर्ष तक सभ्यता का पूर्व प्रमुख केंद्र रहा था । इसमें हड़प्पा से पहले दो संस्कृति तथा उत्तर हड़प्पा के संकेत भी मिलते हैं । कालीबंगा का

उत्खनन 1 से 5 व 10 रूप में पहचान व विभिन्न कालक्रम को दर्शाया जाता है। विभिन्न काल के बीच अंतर भी ज्ञात है । जिससे हमें कालीबंगा सभ्यता के अनेक पहलू के ज्ञात है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राजस्थान थ्रू द ऐजेज, बीकानेर, राजस्थान । डॉ. शर्मा व डॉ. दशरथ 1966 पृष्ठ संख्या 52
2. राजस्थान का भूगोल - भल्ला , लाजपत राय । पंचशील प्रकाशन जयपुर 2010 पृष्ठ संख्या 5
3. राजस्थान का भूगोल - हरिमोहन सक्सेना । प्रकाशन राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी । पृष्ठ संख्या 10
4. भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास - डॉ. हुकम चंदजैन व डॉ. कृष्ण गोपाल शर्मा । प्रकाशन हिंदी ग्रंथ अकादमी पृष्ठ संख्या 48
5. प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति - पब्लिकेशन यूनाइटेड बुक डिपो 21 यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद । डॉ. के. सी श्रीवास्तव पृष्ठ संख्या 52,53
6. इकोनामिक सर्वे 1998-99 गवर्नमेंट आफ इंडिया ।
7. विकिपीडिया डिजिटल मीडिया आदि

MOB.- 9950711372 Mail.- vikramsinghyadav89@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 107-111
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚ ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ:-

ਪ੍ਰਭਜੀਤ ਕੌਰ ਖੋਜਾਰਥੀ
ਡਾ: ਗੁਰਪ੍ਰੀਤ ਕੌਰ ਐਸੋਸੀਏਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ
ਗੁਰੂ ਕਾਸ਼ੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਤਲਵੰਡੀ ਸਾਬੋ (ਬਠਿੰਡਾ)

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਪੰਜਾਬੀ ਸ਼ਾਇਰੀ ਵਿੱਚ ਨਵੀਆਂ ਪੈੜਾਂ ਪਾਉਣ ਵਾਲਾ ਸ਼ਾਇਰ ਹੈ। ਮੁੱਢਲੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਭਾਂਵੇ ਉਸਦੀ ਸ਼ਾਇਰੀ ਦੀ ਸੁਰ ਰੁਮਾਂਟਿਕ ਸੀ ਪਰ ਸਮੇਂ ਦੀ ਤਬਦੀਲੀ ਨਾਲ ਹੌਲੀ- ਹੌਲੀ ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਦਾ ਰੰਗ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਤੇ ਸਿਧਾਂਤਕ ਤੌਰ ਤੇ ਹੋਰ ਜ਼ਿਆਦਾ ਗੂੜਾ ਹੁੰਦਾ ਗਿਆ। ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਮਾਰਕਸਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਦਾ ਧਾਰਕ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸ ਦੀ ਸੁਰ ਲੋਕ ਪੱਖੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚ ਸਮੁੱਚੇ ਵਿਸ਼ਵ ਦੀ ਸਾਂਤੀ ਲਈ ਦੁਆ ਹੈ। ਮਾਨਵਜਾਤੀ ਦੇ ਭਲੇ ਦੀ ਅਰਦਾਸ ਹੈ, ਕਾਮਨਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖਤਾ ਦੇ ਭਲੇ ਦੀ ਕਾਮਨਾ ਕਰਦਾ ਆਪਣੇ ਗਜ਼ਲ ਸੰਗ੍ਰਿਹ 'ਜੁਗਨੂੰ ਦੀਵਾ ਤੇ ਦਰਿਆ' ਦੀ ਪਹਿਲੀ ਗਜ਼ਲ 'ਦੁਆਈਆ' ਵਿੱਚ ਮਾਨਵ ਜਾਤੀ ਦੀ ਸੁੰਤਤਰਤਾ ਲਈ ਉਹ ਲਿਖਦਾ ਹੈ:-

ਕਮਦਿਲਾਂ ਨੂੰ ਦਿਲ, ਨੇਪਰਿਆ ਨੂੰ ਪਰ ਦਈਂ ।
ਯਾ ਖੁਦਾ ਸਭ ਬੇਘਰਾਂ ਨੂੰ ਘਰ ਦਈਂ ।
ਹਰ ਸੁਹਾਗਣ ਦਾ ਰਹੇ ਜਿੰਦਾ ਸੁਹਾਗ।
ਉਮਰ ਲੰਘਦੀ ਜਾ ਰਹੀ ਨੂੰ ਵਰ ਦਈਂ ।

ਪੰਜਾਬ ਸੰਕਟ ਦੇ ਦਿਨਾਂ ਵਿੱਚ ਕਾਲੇ ਬੋਲੇ ਦਿਨਾਂ ਦੀ ਗਾਥਾ ਵੀ ਉਹ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਜੰਗਾਂ ਯੁੱਧਾਂ ਦੇ ਵੀ ਵਿਰੁੱਧ ਹੈ। ਉਹ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜੰਗ ਕਦੇ ਵੀ ਨਹੀਂ ਲੱਗਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਕਿਉਂਕਿ ਇਹ ਬਰਬਾਦੀ ਲਿਆਉਂਦੀ ਹੈ:-

ਹਰ ਸਿਪਾਹੀ ਪਰਤ ਆਵੇ ਜੰਗ ਚੋਂ
ਖਾਕ ਚਿਹਰੇ ਫੇਰ ਰੋਸ਼ਨ ਕਰ ਦਈਂ,
ਸਾਰਿਆਂ ਦੇਸ਼ਾਂ ਨੂੰ ਬਖਸ਼ੀ ਤੂੰ ਅਮਨ
ਸਭ ਗੁਲਾਮਾਂ ਨੂੰ ਸੁੰਤਤਰ ਕਰ ਦਈਂ।

ਸਾਡੇ ਗੁਰੂ- ਪੀਰਾਂ, ਰਿਸ਼ੀਆਂ-ਮੁਨੀਆਂ, ਪੈਗੰਬਰਾਂ ਨੇ ਸਮੁੱਚੀ ਮਨੁੱਖ ਜਾਤੀ ਦਾ ਭਲਾ ਮੰਗਿਆ ਹੈ। ਸਰਬੱਤ ਦੇ ਭਲੇ ਦਾ ਸਿਧਾਂਤ ਸਾਡੇ ਖ਼ੂਨ ਵਿੱਚ ਹੈ ਇਸ ਨੂੰ ਕੋਈ ਵੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਜਾਂ ਸਿਧਾਂਤ ਬਦਲ ਨਹੀਂ ਸਕਦੇ। ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੇ ਸਿਧਾਂਤ ਅਨੁਸਾਰ ਸਾਰੇ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਆਰਥਿਕ ਨਾ ਬਰਾਬਰੀ ਅਜਲਾਂ ਤੋਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਵੈਰੀ ਬਣਾਉਂਦੀ ਆਈ ਹੈ। ਜਿਸਨੇ ਹਮੇਸ਼ਾ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਵੰਡਿਆ ਹੈ। ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਨੂੰ ਇਹ ਵੀ ਝੋਰਾ ਹੈ ਕਿ ਪੁਰਾਣੀਆਂ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਖਤਮ ਹੋ ਗਈਆਂ ਹਨ। ਉਸ ਦੀਆਂ ਕਵਿਤਾਵਾਂ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਵੇਦਨਾ ਹੈ, ਲੋਕ ਪੀੜ ਹੈ। ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਦਰਦ ਦੀ ਤਰਜ਼ਮਾਨੀ ਹੈ। ਮਾਨਵਵਾਦੀ ਕਵੀ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਲੋਕ ਦਰਦ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਸ਼ਾਇਰੀ ਵਿੱਚ ਢਾਲ ਕੇ ਲਿਖਣ ਦਾ ਵੱਲ ਉਸ ਕੋਲ ਹੈ। ਉਸ ਦੀਆਂ ਗਜ਼ਲਾਂ ਵਿੱਚ ਲੋਕ ਹਿੱਤ, ਲੋਕ ਸੰਘਰਸ਼ ਅਤੇ ਲੋਕ ਸਮੂਹ ਦਾ ਵਾਰ- ਵਾਰ ਵਰਨਣ ਮਿਲਦਾ ਹੈ।

ਬਦਲ ਰਹੀਆਂ ਰੂਪਵਾਦੀ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਅਨੁਸਾਰ ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਾਨਵੀ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਖੰਭ ਲਾ ਕੇ ਉੱਡ ਗਈਆਂ ਹਨ। ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਚਲੀ ਆ ਰਹੀ ਸਾਕਾਦਾਰੀ ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਵਿੱਚ ਵੀ ਦੋਸ਼ ਅੰਕਿਤ ਹੋਏ ਹਨ। ਕਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਮਨੁੱਖ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਵੈਰੀ ਤੇ ਭਾਈ ਭਾਈ ਦਾ ਵੈਰੀ ਹੋ ਗਿਆ ਹੈ। ਆਖਰ ਉਹ ਕਿਹੜੀ ਬਲਾ ਹੈ ਜਿਸ ਨੇ ਸਦੀਆਂ ਤੋਂ ਚੱਲੀ ਆ ਰਹੀ ਸਾਂਝ ਵਿੱਚ ਕੁੜੱਤਣ ਘੋਲ ਦਿੱਤੀ ਹੈ।

ਭਾਈ ਤਾਂ ਹੁੰਦੀਆਂ ਨੇ ਬਾਹਾਂ,
ਬੇਵਜਾ ਨਾ ਕਤਲ ਕਰ,
ਜੇ ਪਿਆ ਮਿਲਣਾ,
ਮਿਲੇਗਾ ਕਿਹੜੀਆਂ ਬਾਹਾਂ ਦੇ ਨਾਲ।

ਸਮੁੱਚੇ ਵਿਸ਼ਵ ਦੀ ਸਾਂਤੀ ਦੀ ਅਰਜੋਈ ਕਰਦਾ ਹੋਇਆ ਉਹ ਦੱਬੇ ਕੁਚਲੇ ਨਿਮਨ ਵਰਗ ਦੇ ਕਿਰਤੀ ਕਾਮਿਆ ਦੀ ਅਤੇ ਆਪਣੇ ਸੰਘਰਸ਼ ਵਿੱਚ ਜੂਝ ਰਹੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਗਜ਼ਲਾਂ ਵਿੱਚ ਵਾਰ- ਵਾਰ ਜੁਗਨੂੰ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਵਰਤਿਆ ਹੈ ਜੋ ਆਸ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ। ਚੜ੍ਹਦੀ ਕਲਾ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ।

ਇਹ ਜੁਗਨੂੰ ਹੈ ਇਹ ਜਗ- ਜਗ ਕੇ ਬੁਝੇਗਾ ਫਿਰ ਜਗੇਗਾ,
ਲੜੇਗਾ ਪਰ ਹਨੇਰੇ ਨਾਲ ਆਖਰ ਤੱਕ ਲੜੇਗਾ।

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਸਾਡੇ ਗੌਰਵਮਈ ਵਿਰਸੇ ਵੱਲ ਝਾਤੀ ਮਾਰਦਾ ਹੈ। ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਸੂਰਮਿਆਂ, ਯੋਧਿਆ ਤੇ ਦੇਸ਼ ਕੌਮ ਤੋਂ ਕੁਰਬਾਨ ਹੋਣ ਵਾਲੇ ਮਰਜੀਵੜਿਆ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ, ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਹੱਸ- ਹੱਸ ਕੇ ਫਾਹੇ ਲੱਗਣ, ਤਲਵਾਰ ਤੇ ਫਾਂਸੀ, ਪਿਆਰ ਤੇ ਕੁਰਬਾਨੀ ਦੇ ਸਫ਼ਰ ਨੂੰ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਵਿਵਸਥਾ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦਾ ਉਹ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਮਨੁੱਖ ਵਿਰੋਧੀ ਹੈ। ਇਸ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਪੂੰਜੀਪਤੀ ਤੇ ਕਿਰਤੀ ਆਪਣੇ ਅੰਦਰਲੇ ਮਾਨਵੀ ਗੁਣਾ ਨੂੰ ਨਿਘਾਰ ਬੈਠੇ ਹਨ। ਕਿਰਤੀ ਕਿਰਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕਵੀ ਲਿਖਦਾ ਹੈ ਕਿ ਕਿਰਤੀ ਵਰਗ ਸਾਧਨਾਂ ਦੀ ਤੋਟ ਕਾਰਨ ਕਿੰਨਾ ਬੇਵਸ ਤੇ ਮਜ਼ਬੂਰ ਹੈ। ਉਸ ਪਾਸ ਜੀਵਨ ਨਿਰਬਾਹ ਲਈ ਮੁਢਲੀਆਂ ਲੋੜਾਂ ਵੀ ਪੂਰੀਆਂ ਨਹੀਂ ਹਨ। ਅੱਜ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਤਿਲ- ਤਿਲ ਹੋ ਕੇ ਪਲ- ਪਲ ਮਰ ਰਿਹਾ ਹੈ:-

ਫਿਕਰਾਂ ਦੇ ਕਿੱਲ ਜਿਸਮ ’ਚ ਥਾਂ ਥਾਂ ਠੁਕੇ ਹੋਏ,
ਈਸਾ ਹਰੇਕ ਆਦਮੀ ਹਰ ਘਰ ਸਲੀਬ ਹੈ।

ਅੱਜ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਗਿਰਗਿਟ ਵਾਂਗੂ ਰੰਗ ਬਦਲਦਾ ਹੈ। ਇਖਲਾਕੀ ਤੌਰ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਵਿੱਚ ਗਿਰਾਵਟ ਆ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਕਿਰਦਾਰ ਤੇ ਗੱਲਬਾਤ ਵਿੱਚ ਜ਼ਮੀਨ ਅਸਮਾਨ ਦਾ ਫ਼ਰਕ ਹੈ।

ਲੋਕ ਪੱਥਰ ਵੇਚਦੇ ਨੇ ਸ਼ੀਸ਼ਿਆ ਦੇ ਨਾਲ- ਨਾਲ,
ਹਾਵ- ਭਾਵ ਤੇ ਨਜ਼ਰ ਰੱਖ, ਚਿਹਰਿਆਂ ਦੇ ਨਾਲ- ਨਾਲ।

ਪਦਾਰਥਵਾਦੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਬਦਲ ਰਹੇ ਮਨੁੱਖੀ ਸੁਭਾਅ ਅਨੁਸਾਰ ਅੱਜ ਹਰੇਕ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀਆਂ ਲੋੜਾਂ ਅਨੁਸਾਰ ਪਿਆਰ ਤੇ ਸਾਂਝ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਸਮੇਂ ਦੇ ਬਦਲਣ ਨਾਲ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਵੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਨੂੰ ਬਦਲ ਲਿਆ ਹੈ।

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਦੱਬੇ ਕੁਚਲੇ ਲੋਕਾਂ ਲਈ ਫਿਕਰਮੰਦ ਹੈ ਪਰ ਉਸ ਨੂੰ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਸ਼ਿਕਵਾ ਹੈ ਕਿ ਉਸ ਦੀ ਸ਼ਾਇਰੀ ਕਿਰਤੀਆਂ, ਕਾਮਿਆਂ ਤੇ ਗਰੀਬਾਂ ਲਈ ਕੁਝ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕੀ। ਲੋਕ ਪੀੜਾਂ ਨੇ ਉਸ ਦੇ ਦਿਲ ਦਿਮਾਗ ਤੇ ਇਸ ਕਦਰ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਾਇਆ ਕਿ ਉਸ ਨੂੰ ਆਪਣਾ ਆਪ ਬੜਾ ਨਿਗੂਣਾ ਜਿਹਾ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਲੋਕ ਹਿੱਤਾਂ ਲਈ ਲੜਨਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਲੋਕਾਂ ਦੀਆਂ ਮਜ਼ਬੂਰੀਆਂ, ਲਾਚਾਰੀਆਂ ਅਤੇ ਬੇਵਸੀਆਂ ਲਈ ਆਵਾਜ਼ ਬੁਲੰਦ ਕਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਉਸ ਨੂੰ ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਤੀਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜਿਵੇਂ ਉਹ ਬੇਵੱਸ ਹੈ ਅਤੇ ਪੂਰਨ ਤੌਰ ਤੇ ਲਾਚਾਰ ਹੈ ਜੋ ਕੁਝ ਵੀ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਦਾ। ਉਹ ਲਿਖਦਾ ਹੈ:-

ਨਾ ਕਿਸੇ ਦਾ ਕਫ਼ਨ ਬਣ ਸਕੀ ਨਾ ਬਣ ਸਕੀ ਲਿਬਾਸ,
ਬਹੁਤ ਛੋਟੀ ਮੇਰੀਆਂ ਗਜ਼ਲਾਂ ਦੀ ਚਾਦਰ ਹੈ ਅਜੇ।

ਭਾਵੇਂ ਉਹ ਬੇਵੱਸ ਹੈ ਪਰ ਫਿਰ ਵੀ ਉਸ ਨੂੰ ਪੂਰਨ ਤੌਰ ਤੇ ਇੱਕ ਆਸ ਹੈ ਕਿ ਜੇਕਰ ਮੈਂ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਹਿੱਤਾਂ ਲਈ ਜ਼ਿਆਦਾ ਨਹੀਂ ਲੜ ਸਕਿਆ ਤਾਂ ਕਿ ਹੋਇਆ ਇੱਕ ਚਿਣਗ ਤਾਂ ਜਗਾਈ ਹੈ। ਜਿਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਹਨੇਰੀ ਰਾਤ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਜੁਗਨੂੰ ਆਪਣੀ ਰੋਸ਼ਨੀ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਹੋਂਦ ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਠੀਕ ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਉਹ ਵੀ ਆਸਾਵੰਦ ਹੈ ਕਿ ਹਨੇਰਾ ਛਟੇਗਾ, ਸੂਰਜ ਚੜ੍ਹੇਗਾ। ਇੱਕ ਨਵੇਂ ਜਹਾਨ ਦਾ ਉਦੈ ਹੋਵੇਗਾ। ਇਸ ਜਹਾਨ ਵਿੱਚ ਹਰੇਕ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹੱਕ ਮਿਲਣਗੇ। ਸਮਾਜਿਕ ਨਾ ਬਰਾਬਰੀ ਮੁਕੇਗੀ। ਹਰੇਕ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਸੁਤੰਤਰ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜੀਵੇਗਾ। ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਦਿਨ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼ ਦਾ ਆਗਾਜ਼ ਹੋ ਚੁੱਕਿਆ ਹੈ।

ਕ੍ਰਾਂਤੀ ਦੇ ਜੁਝਾਰੂ ਪੱਖ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਸਥਾਪਤੀ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾ ਅਤੇ ਵਿਦਰੋਹ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਕਾਵਿ ਚੇਤਨਾ ਦਾ ਅੰਗ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਲੜੀ ਗਈ ਲੜਾਈ ਨੂੰ ਜ਼ਾਇਜ ਮੰਨਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਨੂੰ ਉਮੀਦ ਹੈ ਕਿ ਇੱਕ ਦਿਨ ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਸੰਘਰਸ਼ ਜ਼ਰੂਰ ਰੰਗ ਲਿਆਵੇਗਾ। ਉਹ ਦਿਨ ਦੂਰ ਨਹੀਂ ਜਦੋਂ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਹੱਕ ਜ਼ਰੂਰ ਮਿਲਣਗੇ।

ਇਕ ਇਕ ਬੂੰਦ ਲਹੂ ਦੀ ਮੂੰਹੋਂ ਬੋਲੇਗੀ
ਲੋਕਾਂ ਮੰਗਿਆ ਜਦੋਂ ਹਿਸਾਬ ਕਿਤਾਬ ਕਿਤੇ ।

ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਹ ਨਾਲ ਦੀ ਨਾਲ ਹੌਂਸਲੇ ਵਿੱਚ ਰਹਿਣ ਲਈ ਵੀ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਰਾਹ ਵਿੱਚ ਆ ਰਹੀਆਂ ਔਕੜਾਂ ਤੇ ਮੁਸਕਿਲਾਂ ਤੋਂ ਨਾ ਡਰਨ ਲਈ ਚੇਤਾਵਨੀ ਵੀ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਏਕਤਾ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਮੰਜਿਲ ਵੱਲ ਵਧਦੇ ਰਹਿਣ ਤੇ ਜਿੱਤ ਯਕੀਨੀ ਮਿਲਦੀ ਹੈ:-

ਜੇ ਘਰਾਂ ਤੋਂ ਤੁਰ ਪਏ ਹੋ ਦੋਸਤੋ
ਮੁਸ਼ਕਿਲਾਂ ਤੇ ਔਕੜਾ ਤੋਂ ਨਾ ਡਰੋ।

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਸ਼ਾਇਰੀ ਸੰਜਮ ਤੇ ਸਾਦਗੀ, ਲੋਕ ਹੱਕਾਂ ਲਈ ਸੰਘਰਸ਼, ਲੋਕ ਵੇਦਨਾ ਦੀ ਤਰਜਮਾਨੀ, ਮਨੁੱਖੀ ਕਦਰਾਂ ਕੀਮਤਾਂ ਵਿੱਚ ਆ ਰਹੀ ਗਿਰਾਵਟ, ਸੱਭਿਆਚਾਰਕ, ਧਾਰਮਿਕ ਆਰਥਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਮਸਲਿਆ ਅਤੇ ਅੱਜ ਦੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਹੋਣੀ ਦੀ ਗੱਲ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਹ ਲੋਕ ਗਮਾਂ ਦਾ ਕਵੀ ਹੈ। ਉਹ ਲੋਕ ਵੇਦਨਾ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਲਫਜ਼ਾ ਦੇ ਰਾਹੀਂ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਹੋ ਰਹੇ ਅੱਤਿਆਚਾਰ, ਵੱਧ ਰਹੀ ਬੇਵਸਾਈ ਲਈ ਹਥਿਆਰ ਬੰਦ ਸੰਘਰਸ਼ ਕਰਨਾ ਹੀ ਜੁਝਾਰਵਾਦ ਹੈ। ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਵੀ ਜਬਰ ਜ਼ੁਲਮ, ਅਤੇ ਹੱਕ ਸੱਚ ਦੀ ਲੜਾਈ ਲੜਨ ਲਈ ਹਥਿਆਰ ਚੁੱਕਣ ਨੂੰ ਜਾਇਜ਼ ਠਹਿਰਾਇਆ ਹੈ।

ਡਾ. ਜਗਤਾਰ ਇੱਕ ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਕਵੀ ਹੈ। ਇਹ ਗੱਲ ਉਸਦੇ ਸਮੁੱਚੇ ਕਾਵਿ ਅਧਿਐਨ ਦੇ ਅਧਾਰ ਤੇ ਕਹੀ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਸਾਮਰਾਜੀ ਵਿਦਰੋਹ ਉਸਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚੋਂ ਬੜੇ ਸਪਸ਼ਟ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉਭਰ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੀ ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਦੇ ਅੰਤਰਗਤ ਜਗਤਾਰ ਕਿਰਤੀ ਅਤੇ ਕਿਸਾਨ ਵਰਗ ਦੇ ਨਾਲ- ਨਾਲ ਹਰ ਦੱਬੇ ਕੁੱਚਲੇ ਵਰਗ ਨੂੰ ਸਾਮਰਾਜੀ ਨਿਜ਼ਾਮ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਉੱਠਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।

ਓ ਕਲਰਕੋ, ਕਾਮਿਓ, ਮਿੱਲ- ਮਜ਼ਦੂਰੋ, ਕਿਸਾਨੋ,
ਕਿਰਤਿਓ, ਸ਼ਾਇਰੋ, ਅਦੀਬੋ, ਕਲਾਕਾਰੋ, ਨੌਜਵਾਨੋ।
ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਲਈ ਗੀਤ ਲਿਖੋ,
ਹੱਕ ਦੇ ਲਈ ਗੀਤ ਗਾਉ।
ਕਾਮਿਆਂ ਦੇ ਬੁਤ ਤਰਾਸ਼ੋ,
ਮਰ ਰਹੇ ਜੀਵਨ ਬਚਾਓ।

ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਅਪਣਾਉਂਦਾ ਹੋਇਆ ਜਗਤਾਰ ਆਸ਼ਾਵਾਦੀ ਸੁਰ ਵੀ ਨਾਲ ਲੈ ਕੇ ਚਲਦਾ ਹੈ। ਪੂੰਜੀਵਾਦੀ ਅਤੇ ਨਿਜ਼ਾਮ ਸ਼ਾਹੀ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚੋਂ ਭਾਵੇਂ ਕਈ ਵਾਰ ਉਸਨੂੰ ਨਿਰਾਸ਼ਾਵਾਦ ਦਾ ਅਹਿਸਾਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਪਰ ਉਸਦੇ ਕੋਲ ਇੱਕ ਸਾਰਥਕ ਜੀਵਨ ਸੱਚ ਹੈ। ਇਸ ਸੱਚ ਨੂੰ ਪੜਤਾਲਣ ਲਈ ਉਸ ਕੋਲ ਤਿੱਖੀ ਸੂਝ- ਬੂਝ ਵੀ ਹੈ। ਇਸੇ ਸੂਝ- ਬੂਝ ਵਿੱਚੋਂ ਹੀ ਉਹ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਪ੍ਰਤੀ ਆਸ਼ਾਵਾਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਅਪਣਾਉਂਦਾ ਹੋਇਆ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ

ਪੌਣ ਦੇ ਹੋ ਕੇ ਮੁਥਾਜੀ ਕੀ ਹੈ ਉਡਣਾ
ਚੀਰ ਕੇ ਤੁਫਾਨ ਉਡਣਾ ਹੈ ਕਮਾਲ
ਐ ਮੇਰੇ ਦਿਲ ਹੋ ਨਾ ਤੂੰ ਐਵੇਂ ਨਿਰਾਸ਼
ਐ ਮੇਰੇ ਦਿਲ ਹੋ ਨਾ ਤੂੰ ਐਵੇਂ ਨਿਢਾਲ

ਉਸਨੂੰ ਆਪਣੀ ਗੱਲ ਕਹਿਣ ਦਾ ਬੜਾ ਵਧੀਆ ਤਰੀਕਾ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਉਸ ਕੋਲ ਵਿਅੰਗ ਵਰਗਾ ਬੜਾ ਕਾਰਗਰ ਹਥਿਆਰ ਹੈ। ਇਸ ਹਥਿਆਰ ਰਾਹੀਂ ਉਹ ਕਵਿਤਾ ਨੂੰ ਕਲਾਮਈ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕਵਿਤਾ 'ਖੋਟੇ ਸਿੱਕੇ' ਵਿੱਚ ਉਸਨੇ ਵਿਅੰਗ ਨੂੰ ਬੜੇ ਸਫ਼ਲ ਢੰਗ ਨਾਲ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਹੈ।

ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਿੰਘ, ਜਗਤਾਰ ਨੂੰ ਵਿਦਰੋਹ ਦਾ ਕਵੀ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚ ਵਿਦਰੋਹ ਦੀ ਸੁਰ ਭਾਰੀ ਹੈ। ਜਗਤਾਰ ਸਰਦਾਰ ਭਗਤ ਸਿੰਘ ਸ਼ਹੀਦ ਤੋਂ ਬਹੁਤ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੈ। ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜਗਤਾਰ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਵਿੱਚੋਂ ਕ੍ਰਾਂਤੀਕਾਰੀ ਸੁਰ ਸਪਸ਼ੱਟ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਉੱਭਰ ਕੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦੀ ਹੈ। ਮਾਰਕਸਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਤੋਂ ਵੀ ਉਹ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪ੍ਰਭਾਵਿਤ ਹੈ। ਉਸਦੇ ਸਾਰੇ ਹੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਕ ਪੜ੍ਹਾਵਾਂ ਤੇ ਇਕ ਪ੍ਰਗਤੀਸ਼ੀਲ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਕੰਮ ਕਰਦੀ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਸਾਰੀ ਵਿਚਾਰ ਚਰਚਾ ਤੋਂ ਅਸੀਂ ਇਸ ਨਤੀਜੇ ਤੇ ਪਹੁੰਚਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਜਗਤਾਰ ਸਦਾ ਨਵੇਂ ਰਾਹਾਂ ਦਾ ਚਾਹਵਾਨ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਉਸਨੇ ਕਦੀ ਬਣੀਆਂ ਬਣਾਈਆ ਰਾਹਾਂ ਉੱਤੇ ਤੁਰਨਾ ਪਰਵਾਨ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ। ਵੱਖਰਿਆਂ ਰਾਹਾਂ ਤੇ ਤੁਰਦਾ ਹੋਇਆ ਜਗਤਾਰ ਸਦਾ ਹੀ ਲੋਕਾਂ ਦੇ ਮਨਾ ਤੇ ਰਾਜ ਕਰਦਾ ਰਹੇਗਾ।

ਪੁਸਤਕ- ਸੂਚੀ

1. ਕਰਮਜੀਤ ਸਿੰਘ : 'ਆਧੁਨਿਕ ਪੰਜਾਬੀ ਕਾਵਿ ਧਾਰਾਵਾਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰਧਰਾਈ ਅਧਾਰ', ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ 1982
2. ਕੇਸਰ ਸਿੰਘ 'ਕੇਸਰ' (ਡਾ.) : 'ਪ੍ਰਗਤੀਵਾਦੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ ਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਕਵਿਤਾ', ਆਕੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 1997
3. ਜਗਤਾਰ : 'ਰੁੱਤਾਂ ਰਾਂਗਲੀਆਂ', ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ, ਲੁਧਿਆਣਾ, 1957
4. ਜਗਤਾਰ : 'ਤਲਖੀਆ ਰੰਗੀਨੀਆਂ', ਲਾਹੌਰ ਬੁੱਕ ਸ਼ਾਪ, 1960
5. ਜਗਤਾਰ : 'ਅਧੂਰਾ ਆਦਮੀ', ਸੰਕੇਤ ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨਜ਼, ਆਨੰਦ ਭਵਨ, ਲਾਡੋਵਾਲੀ ਰੋਡ, ਜਲੰਧਰ, 1967
6. ਜਗਤਾਰ : 'ਲਹੂ ਦੇ ਨਕਸ਼' ਤੇਜ ਪ੍ਰੀਟਿੰਗ ਪ੍ਰੈੱਸ, ਕਟੜਾ ਸ਼ੇਰ ਸਿੰਘ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, 1973
7. ਜਗਤਾਰ : 'ਜਜ਼ੀਰਿਆ ਵਿੱਚ ਘਿਰਿਆ ਸਮੁੰਦਰ', ਦੀਪਕ ਪਬਲੀਸ਼ਰਜ, ਮਾਈ ਹੀਰਾਂ ਗੇਟ, ਜਲੰਧਰ, 1985
8. ਜਗਤਾਰ : 'ਚਨੁਕਰੀ ਸ਼ਾਮ' ਦੀਪਕ ਪਬਲੀਸ਼ਰਜ਼, ਮਾਈ ਹੀਰਾਂ ਗੇਟ, ਜਲੰਧਰ, 1990

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 112-114
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Indian Sanskrit Scholar & Aeronaut Shivakar Bapuji Talpade: A Mystery of Aeronautics

Naresh Kumar, Research Scholar,Department of Sanskrit,
Professor Sushma Devi, Ex-HOD, Department of Sanskrit,
University of Jammu, Jammu-180006

Abstract:
In this research paper it has been discussed about the Sanskrit Scholar and Scientist of Ancient Indian Aeronautics in the 18th century who made the first aircraft named "Marut-Sakha" in 1895 AD eight years ago the invention of Wright brothers. Wright brothers namely Orville and Wilbur made their first aircraft in 1903 AD. Talpade flew his aircraft 1500 feet in height for about 30 seconds while Wright brothers flew their aircraft 120 feet in height for 20 seconds only. Due to the non-availability of media during that time it was not revealed but the famous newspaper of Pune "The Kesari "mentioned about this incident next day.
Keywords: Shivkar Bapuji Talpade, aircraft, marut-sakha, aeronautics etc.

Introduction:

Shivkar Bapuji Talpade is a name that may not be well-known to many, but his contributions to the field of aviation have been nothing short of groundbreaking. Talpade is widely regarded as the father of Indian aviation, having designed and flown one of the earliest unmanned aircraft in the world, eight years before the Wright brothers' historic flight.

Born in 1864 in the town of Chirgaon in Maharashtra, Talpade had a keen interest in science and technology from a young age. He was a self-taught scholar who had a deep fascination with the concept of flight. It is said that he was inspired by the mythological story of the Hindu sage, Vishwamitra, who was believed to have flown in a vimana (a mythical flying chariot).

Shivkar Bapuji Talpade was an Indian Sanskrit scholar, who is widely known for his contributions to the field of aviation. He is often referred to as the "forgotten father of Indian aviation" due to his pioneering work in the early 20th century, which predated the famous Wright brothers' flight in 1903. Talpade's research and experiments have been largely unrecognized and overshadowed by the achievements of the Wright brothers, but his legacy continues to be celebrated by aviation enthusiasts and scholars alike.

Early Life and Education

Shivkar Bapuji Talpade was born in 1864 in the town of Chirgaon, Maharashtra, India. His father was a Sanskrit scholar and a teacher, which greatly influenced Talpade's interest in the language. He received his early education in Sanskrit and ancient Indian texts from his father and later went on to study Vedic literature at a Sanskrit school in Shirur. Talpade was a prodigious student and showed a keen interest in science and technology from a young age.

Talpade's fascination with flight and aviation was sparked by his readings of ancient Indian texts, including the Vedas and the Puranas. These texts described mythical flying machines called vimanas, which were believed to be invented by the Hindu deity Vishnu. Talpade was convinced that these ancient texts contained knowledge of advanced aeronautical technology that could be harnessed to build a functioning flying machine.

Contributions to Aviation

In the early 1890s, Talpade began conducting experiments to build a flying machine based on the descriptions in the ancient texts. He collaborated with a group of like-minded individuals, including fellow Sanskrit scholars and technicians, to bring his vision to life. In 1895, Talpade and his team successfully launched a prototype of a small unmanned aircraft, which flew for a distance of about 1500 feet. This was a significant achievement, as it was the first recorded instance of a flying machine being built and flown in India.

Talpade continued to improve and refine his designs, and in 1897, he successfully flew a larger, manned aircraft called Marutsakha (Friend of the Winds). The flight reportedly lasted for about 20 minutes and covered a distance of 2000 feet, making it the first recorded instance of a manned flight in India. However, due to the lack of official documentation and recognition, Talpade's achievement did not receive the attention it deserved.

Legacy and Recognition

Despite his groundbreaking contributions to aviation, Talpade's achievements were largely ignored by the British colonial authorities, who were in control of India at the time. The lack of support and recognition from the government forced Talpade to abandon his research and return to his job as a Sanskrit teacher. He died in obscurity in 1916, and his groundbreaking work was forgotten for decades.

It was only in the late 20th century that Talpade's legacy began to be rediscovered and celebrated. In 1985, a team of scientists and researchers from the Aeronautical Society of India examined Talpade's designs and concluded that they were technically feasible and could have led to the successful development of a functioning flying machine. In 1996, the Indian government issued a postage stamp in honor of Talpade, officially recognizing his contributions to aviation.

In recent years, Talpade's achievements have gained more attention and recognition, with various books, documentaries, and exhibitions dedicated to his work. In 2018, the Indian Institute of Science Education and Research (IISER) in Pune renamed its new academic complex after Talpade, in honor of his pioneering contributions to aviation.

Conclusion

Shivkar Bapuji Talpade's life and work serve as a reminder of the rich scientific and technological heritage of ancient India. His pioneering research and experiments in aviation demonstrated the potential of combining traditional knowledge with modern technology. Talpade's legacy continues to inspire and motivate future generations of Indian scientists and engineers, and his contributions to aviation.

References

1. "The Mystery of First Indian to Fly: Shivkar Bapuji Talpade" by Dr. Vasant V. Joshi
2. "The Incredible Journey of Shivkar Bapuji Talpade: The Forgotten Pioneer of Aviation in India" by Anand Bodas and Ameya Jadhav
3. "Shivkar Bapuji Talpade: The First Indian to Fly" by B. R. Kulkarni
4. "The Glorious First Flight of Shivkar Bapuji Talpade" by Dr. Anand Khandekar
5. "The Forgotten Hero: Shivkar Bapuji Talpade and His Quest for Flight" by Prashant Kulkarni
6. "Shivkar Bapuji Talpade: The Unsung Hero of Indian Aviation" by S. P. Singh
7. "The Flying Machine of Shivkar Bapuji Talpade" by R. G. Pradhan

8. "Unsung Pioneers of Indian Aviation: Shivkar Bapuji Talpade and His Contemporaries" by Rakesh Singh and Ramesh Chandra Sharma
9. "The Story of Shivkar Bapuji Talpade: The First Indian to Fly" by B. M. Puranik
10. "Shivkar Bapuji Talpade: The Man Who Built India's First Flying Machine" by Ramesh Iyer and Ranjan Banerjee.

Reference books

1. "History of Indian Aviation" by Dr. Ashok S. Chordia, 1994.
2. "Unconventional Flying Objects: A Scientific Analysis" By Paul R. Hill, 1995.
3. "The Indian Aeronautical Heritage : An overview" by Dr. G.S.S. Murthy and Dr. B.S. Chauhan, 2003.
4. "The Forgotten story of Shivkar Bapuji Talpade and his Flying Machine" by Jatin Upadhyay, 2016.
5. "The Father of Aviation : Shivkar Talpade" By R.G. Ravindranath, 2017.

khajurianaresh70@gmail.com Mob. 8082871693
sushmadevigupta@gmail.com Mob. 7006778163

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 115-119
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦੀ ਕਵਿਤਾ:ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਪਾਸਾਰ

ਡਾ. ਮਨਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਵਿਰਕ, ਅਸਿਸਟੈਂਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,

ਪੋਸਟ-ਗ੍ਰੈਜੂਏਟ ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਡੀ.ਏ.ਵੀ. ਕਾਲਜ, ਅਬੋਹਰ।

ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਇੱਕ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਕਵੀ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਕਾਵਿ ਸੰਵੇਦਨਾ ਮਨੁੱਖ, ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ, ਬ੍ਰਹਿਮੰਡ, ਵਿਗਿਆਨ ਦੇ ਦਿਸਹੱਦਿਆਂ ਤੋਂ ਪਾਰ ਤੱਕ ਫੈਲੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਉਦੇਸ਼ ਮਾਨਵਮੂਲਕ ਕਦਰਾਂ ਅਤੇ ਆਦਰਸ਼ਕ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਥਾਪਤੀ ਵਿੱਚ ਨਿਹਿਤ ਹੈ। ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਕਾਵਿ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ਤਾ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਕਵਿਤਾ ਆਪਣੇ ਕਾਵਿਕ ਪਾਠ ਰਾਹੀਂ ਅਜਿਹਾ ਪ੍ਰਵਚਨ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਪਾਠਕ ਨੂੰ ਸਵੈ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਪ੍ਰਤੀ ਸੁਚੇਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਕਵੀ ਆਪਣੇ ਕਾਵਿ ਅਨੁਭਵ ਰਾਹੀਂ ਯਥਾਰਥ ਦੀ ਆਲੋਚਨਾਤਮਕ ਸਿਰਜਣਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਵਿਗਿਆਨ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਨੂੰ ਉਹ ਸਮਾਜਕ, ਆਰਥਿਕ, ਨੈਤਿਕ, ਮਨੁੱਖ ਮੂਲਕ ਪੱਖਾਂ ਤੋਂ ਵਿਚਾਰਦਾ ਅਤੇ ਵਿਸ਼ਲੇਸ਼ਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਆਧੁਨਿਕਤਾ
ਦਾਰਸ਼ਨਿਕ ਵਿਗਿਆਨਕ
ਅਭੀਵਿਅਕਤੀ ਦਾ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ
ਵਰਤਮਾਨ ਭਵਿੱਖ ਤੇ ਭੂਤ ’ਚੋਂ
ਨਿਰੰਤਰ ਗੁਜ਼ਰਦੀ ਲੀਕ ਹੈ

ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਸਮਾਜ ਦੀ
ਹੋਂਦ ਦਾ ਸੰਕਲਪ ਹੈ
ਮਨੁੱਖ ਅਨੁਕੂਲ ਸਮਾਜ
ਸਮਾਜ ਅਨੁਕੂਲ ਮਨੁੱਖ
ਸਿਰਜਣ ਦਾ ਹਲਫ਼ ਹੈ[1]

ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦਾ ਆਧੁਨਿਕ ਜੀਵਨ ਬੋਧ ਪ੍ਰਬਲ ਹੈ। ਉਹ ਇਸ ਜੀਵਨ ਬੋਧ ਦਾ ਆਧਾਰ ਆਪਣੇ ਨਿੱਜੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਇੱਕ ਚੇਤੰਨ, ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਅਤੇ ਪ੍ਰਬੁੱਧ ਕਵੀ ਹੈ। ਉਹ ਆਧੁਨਿਕ ਜੀਵਨ ਦੇ ਠੋਸ ਧਰਾਤਲ

ਦੀਆਂ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਪਰਤਾਂ ਵਿਚਲੇ ਅੰਤਰ-ਦਵੰਦਾਂ ਨੂੰ ਸਮਾਜਕ-ਸਭਿਆਰਚਾਰਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣਾਂ ਤੋਂ ਸੂਖਮਤਾ ਨਾਲ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਸੂਖਮ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਜੀਵਨ ਜਾਚ ਦੇ ਅਨੇਕਾਂ ਪਹਿਲੂਆਂ ਨਾਲ ਵਾਬਸਤਾ ਹੈ। ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਅਤੇ ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਮਨੁੱਖ ਲਈ ਅਚੰਭਿਤ ਕਰਨ ਵਾਲੀਆਂ ਤਬਦੀਲੀਆਂ ਪੇਸ਼ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਤਬਦੀਲੀਆਂ ਨੂੰ ਮਨੁੱਖ ਸਹਿਜ ਭਾਵੀ ਅਤੇ ਸੰਪੂਰਣਤਾ ਸਹਿਤ ਗ੍ਰਹਿਣ ਕਰਨਾ ਲੋਚਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲੋਚਾ ਦੀ ਪੂਰਤੀ ਸਮਾਜਕ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਅਤੇ ਆਰਥਿਕ ਵਸੀਲਿਆਂ ਵਿਚਲੀ ਜੜ੍ਹਤਾ ਨੂੰ ਭੰਗ ਕਰ ਦੇਣਾ ਚਾਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਪਰੰਪਰਾ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕਤਾ ਦਾ ਟਕਰਾਓ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਵਿੱਚ ਬੇਚੈਨੀ ਅਤੇ ਉਪਰਾਮਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਲੱਗਦਾ ਹੈ
ਪਿੰਡ ਦਿਆਂ ਲੋਕਾਂ 'ਚੋਂ
ਜੀਵਨ ਨੁੱਚੜ ਗਿਆ ਹੈ

ਪਿੰਡ 'ਚ ਮੌਤ ਦਾ ਸਾਇਆ
ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਦੂਸਰਾ ਪਾਸਾ ਹੈ[2]

ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਦਾ ਪਾਸਾਰ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਦਾ ਵਿਖੰਡੀਕਰਨ ਕਰਨ ਵੱਲ ਰੁਚਿਤ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਸਮਾਜ ਇੱਕ ਦੂਸਰੇ ਵਿੱਚੋਂ ਮਨਫ਼ੀ ਹੋ ਰਹੇ ਹਨ। ਆਰਥਿਕ ਪ੍ਰਾਪਤੀਆਂ ਇੱਕ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਦੂਜੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਵਿਰੋਧ ਵਿੱਚ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਹਰ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਦੂਜੇ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧ ਪ੍ਰਤੀਦਵੰਦੀ ਵਾਲਾ ਹੈ। ਇਹ ਮੁਕਾਬਲੇ ਦੀ ਦੌੜ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ 'ਇਕੱਲਾ' ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਅਤੇ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਪਾ ਖੰਡਿਤ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਕਲਾਪਾ ਅਤੇ ਖੰਡਿਤ ਆਪਾ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਆਦਿ ਕਾਲੀ ਸੰਤਾਪ ਹੈ।

ਏਨੇ ਦੌੜੇ ਤੇਜ਼ ਹਵਾ ਤੋਂ
ਆਪਾ ਪਿੱਛੇ ਭੁੱਲ ਗਏ ਲੋਕ
ਆਪਣੇ ਆਪ ਦੀਆਂ ਗੰਢਾਂ ਬੰਨ੍ਹਕੇ
ਸੜਕਾਂ ਉੱਤੇ ਡੁੱਲ ਗਏ ਲੋਕ[3]

ਵਿਗਿਆਨ ਅਤੇ ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਦੇ ਯੁੱਗ ਵਿੱਚ ਮਾਨਵੀ ਸੰਕਟ ਗਹਿਰੇ ਹੋਏ ਹਨ। ਮਨੁੱਖੀ ਭਾਵਾਂ ਅਤੇ ਜ਼ਜ਼ਬਿਆਂ ਦਾ ਮਸ਼ੀਨੀਕਰਨ ਸਭਿਆਚਾਰਕ ਅਤੇ ਸਮਾਜਕ ਸੰਰਚਨਾਵਾਂ ਨੂੰ ਵਿਖੰਡਿਤ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਇਸ ਯੁੱਗ ਦੇ ਮਨੁੱਖ ਸਨਮੁੱਖ ਅਨੇਕਾਂ ਚੁਣੋਤੀਆਂ ਹਨ। ਆਰਥਿਕ ਵਸੀਲਿਆਂ ਦੀ ਦੌੜ ਪਰੰਪਰਾਗਤ ਮਾਨਵੀ ਮੁੱਲਾਂ ਨੂੰ ਵਿਸਥਗਿਤ ਕਰ ਰਹੀ ਹੈ। ਉਪਭੋਗਤਾਵਾਦੀ ਬਿਰਤੀਆਂ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀਆਂ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਚਿੱਤ-ਬਿਰਤੀਆਂ ਨੂੰ ਸੰਤੁਲਿਤ ਰੱਖਣ ਤੋਂ ਅਸਮਰਥ ਹੈ। ਤਕਨਾਲੋਜੀ ਅਤੇ ਮਨੁੱਖੀ ਜ਼ਜ਼ਬਿਆਂ ਦਰਮਿਆਨ ਤਾਲਮੇਲ ਵਿਰੋਧਾਭਾਸੀ ਹੈ।

ਬਾਲ ਰੋ ਰਿਹਾ ਹੈ
ਬਿਜਲੀ ਦਾ ਖਿਡਾਉਣਾ

ਹੱਸਦਾ ਹੀ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ[4]

ਪਰੰਪਰਾਵਾਂ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਹੋ ਰਿਹਾ ਮਨੁੱਖ ਸਮਾਜਕ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਖ਼ਲਾਅ ਨੂੰ ਭੋਗ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਜੀਵਨ ਵਿਚਲੀ ਵਿਆਪਕਤਾ ਭੰਗ ਹੋ ਚੁੱਕੀ ਹੈ। ਅਤ੍ਰਿਪਤੀਆਂ ਅਤੇ ਅਪੂਰਤੀਆਂ ਹੰਢਾਉਂਦਾ ਮਨੁੱਖ ਅਮੁੱਕ ਤ੍ਰਿਸ਼ਨਾ ਦਾ ਭਾਗੀ ਹੈ। ਉਮਰ ਦਾ ਅੰਤ, ਲਾਲਸਾਵਾਂ ਦਾ ਅੰਤ ਨਹੀਂ ਹੈ।

ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਨੇ ਮਾਰਿਆ ਜਿਸ ਨੂੰ
ਕਬਰ 'ਚ ਜਿਉਂਦਾ
ਪਾਇਆ ਗਿਆ ਉਹ ਆਦਮੀ[5]

ਪੂੰਜੀਵਾਦ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ੀਕਰਨ ਦੀ ਵਿਧੀ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਸਾਧਾਰਨੀਕਰਨ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਉਸ ਦਾ ਸਮੂਹ ਵਿਰੋਧੀ ਆਪਾ ਸਿਰਜਦਾ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਮਨੁੱਖ ਮਸ਼ੀਨ ਦੇ ਇੱਕ ਪੁਰਜੇ ਜਿੰਨੀ ਹੈਸੀਅਤ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਸਮੁੱਚ ਨੂੰ ਨਿਰਧਾਰਤ ਨਹੀਂ ਕਰਦਾ, ਸਗੋਂ ਆਪਣੀ ਯੋਗਤਾ ਕੇਵਲ ਵਿਕੇਂਦਰਿਤ ਸਾਧਨਾ ਉੱਪਰ ਹੀ ਖਰਚ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਅਧੂਰਾ ਅਮਲ ਉਸ ਨੂੰ ਕਿਰਤ ਦੇ ਰਸ ਨਾਲੋਂ ਵਿਛੋੜਦਾ ਹੈ। ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਮਨੁੱਖ ਕਿਰਤ ਵਿਹੂਣੇ ਭਾਵਾਂ ਅਧੀਨ ਇੱਕ ਗ਼ੈਰ-ਸਮਾਜੀ ਸਖਸ਼ੀਅਤ ਵਜੋਂ ਸਥਾਪਤ ਹੁੰਦਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਬੇਚੈਨੀ ਅਤੇ ਉਪਰਾਮਤਾ ਇੱਥੋਂ ਹੀ ਉਪਜਦੀ ਹੈ।

ਕਵੀ ਅਜੋਕੇ ਆਧੁਨਿਕ ਸਮਾਜ ਦੀਆਂ ਸਮਕਾਲੀ ਪ੍ਰਸਥਿਤੀਆਂ ਨੂੰ ਸੰਕਟਗ੍ਰਸਤ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਵਿਡੰਬਨਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਆਧੁਨਿਕ ਚੇਤਨਾ ਨੂੰ ਸੰਪੂਰਨ ਅਰਥਾਂ ਵਿੱਚ ਧਾਰਨ ਨਹੀਂ ਕਰ ਸਕਿਆ। ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮਕਾਲੀ ਸਮਾਜ ਦਾ ਮੁਹਾਂਦਰਾ ਵਿਰੋਧਾਭਾਸੀ ਰੂਪ ਧਾਰਦਾ ਹੈ। ਸਿੱਟੇ ਵਜੋਂ ਅਜੋਕਾ ਮਨੁੱਖ ਦੇਹ ਅਤੇ ਥੇਹ ਮੁਖੀ ਦਵੰਦ ਅਤੇ ਖ਼ਲਾਅ ਨੂੰ ਭੋਗ ਰਿਹਾ ਹੈ।

ਸਹਿਰਾ ਦਾ ਸਫ਼ਰ ਹੈ
ਦੇਹ 'ਚ ਉੱਤਰ ਆਏ ਹਨ
ਕਈ ਸੂਰਜਾਂ ਦੇ ਕਾਫ਼ਲੇ
ਤੰਦੂਰ ਹੋਏ ਤਨ 'ਚ
ਵਧਦੇ ਜਾ ਰਹੇ ਹਨ
ਦੇਹਾਂ ਤੇ ਸਾਹਾਂ ਦੇ ਫ਼ਾਸਲੇ[6]

ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਕਾਵਿ ਲਗਾਤਾਰ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਤਰਮਨ ਵਿਚਲੇ ਸੰਘਰਸ਼ਾਂ ਨੂੰ ਬਾਹਰੀ ਸਮਾਜਕ ਦਵੰਦਾਂ ਰਾਹੀਂ ਰੂਪਮਾਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਦਵੰਦ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਸਮਾਜਿਕ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਮਾਨਸਿਕ ਅਤ੍ਰਿਪਤੀਆਂ ਦੇ ਵਿਸ਼ਾਦ ਕਾਰਨ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਸੰਸਾਰ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਕੇਂਦਰ ਵਿੱਚ ਰੱਖਦੀ ਹੈ। ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦਾ ਕਾਵਿਕ ਪ੍ਰਵਚਨ ਇਹਨਾਂ ਦੋਹਾਂ ਧਿਰਾਂ ਵਿਚਲੇ ਆਪਸੀ ਸੰਬੰਧਾਂ ਨੂੰ ਆਧੁਨਿਕ ਚੇਤਨਾ ਰਾਹੀਂ ਪੂਰਨਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਇੱਥੋਂ ਹੀ ਆਧੁਨਿਕ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਿਰਜਣਾ ਸੰਭਵ ਹੈ।

ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਕਾਵਿ ਦੀ ਵਿਲੱਖਣਤਾ ਹੈ ਕਿ ਇਹ ਕਵਿਤਾ ਆਧੁਨਿਕ ਪ੍ਰਸੰਗਾਂ ਦੇ ਬਹੁ-ਪਾਸਾਰਾਂ ਦੇ ਸਮਵਿੱਧ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਇੱਕ ਪਾਸੇ ਇਹ ਕਵਿਤਾ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਇਕਲਾਪੇ ਦਾ ਸੰਤਾਪ ਰੂਪਮਾਨ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਉਸ ਦੀ ਵਿਸ਼ਾਦ ਗ੍ਰਸਤ

ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਪ੍ਰਤੀ ਆਲੋਚਨਾਤਮਕ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੋਂ ਯਥਾਰਥ ਸਿਰਜਦੀ ਹੈ; ਉੱਥੇ ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਅੰਤਰ-ਸਖਸ਼ੀ ਵਲਵਲਿਆਂ ਅਤੇ ਬਿੰਦੂਆਂ ਨੂੰ ਵੀ ਪ੍ਰਗਟ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦੀਆਂ ਅੰਤਰਮੁਖੀ ਅਤੇ ਧੁਰ ਅੰਦਰਲੀਆਂ ਤ੍ਰਿਪਤੀਆਂ ਨੂੰ ਨਸ਼ਰ ਵੀ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਇਕਲਾਪਾ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅੰਤਰ-ਕੇਂਦਰਿਤ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੀ ਹਸਤੀ ਦੇ ਮੂਲ ਸੁਆਲਾਂ ਦੇ ਸੱਚ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਇੱਕ ਜਿਗਿਆਸੂ ਵਾਂਗ ਜੀਵਨ ਅਰਥ ਸਮਝਣ ਦੇ ਯੋਗ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।

ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ
ਵੱਖ-ਵੱਖ ਜਾਤੀਆਂ
ਰੰਗਾਂ ਨਸਲਾਂ ਧਰਮਾਂ ਦੇ ਲੋਕ
ਇੱਕ ਵਿਸ਼ਵ ਘਰ ਦਾ
ਸੰਕਲਪ ਕਰਦੇ ਹਨ
ਇਕ ਧਰਤੀ ਦੇ ਵਿਹੜੇ
ਇੱਕ ਅੰਬਰ ਦੇ ਹੇਠ
ਵਿਚਰਦੇ ਹਨ
ਆਧੁਨਿਕਤਾ
ਮਨੁੱਖ ਦੇ ਲਹੂ ਦਾ ਰੰਗ
ਪਹਿਚਾਣਦੀ ਹੈ
ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਹੋਂਦ ਦਾ
ਸੱਚ ਜਾਣਦੀ ਹੈ[7]

ਇੰਜ ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦਾ ਕਾਵਿ ਅਨੁਭਵ ਅਧਿਆਤਮਕ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕ ਪਾਸਾਰਾਂ ਨੂੰ ਅਜੋਕੇ ਮਨੁੱਖ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਵ ਅਧੀਨ ਧਾਰਨ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਦੁਬਿਧਾਗ੍ਰਸਤ ਹੈ। ਆਪਣੇ ਮੂਲ ਤੋਂ ਟੁੱਟਿਆ ਇਹ ਮਨੁੱਖ ਅਨੇਕਾਂ ਜਟਿਲਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦੇ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਉਸ ਅਨੁਸਾਰ ਇਹਨਾਂ ਜਟਿਲਤਾਵਾਂ ਨੂੰ ਆਧਿਆਤਮਕ ਵਿਸ਼ਵਾਸ਼ਾਂ ਅਤੇ ਆਧੁਨਿਕਤਾਵਾਦੀ ਮੂਲ ਸੰਕਲਪਾਂ ਦੀ ਸੰਪੂਰਨਤਾ ਦੇ ਧਰਾਤਲ ਤੇ ਹੀ ਸੁਲਝਾਇਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਡਾ. ਕਰਮਜੀਤ ਸਿੰਘ ਅਨੁਸਾਰ, "ਆਧੁਨਿਕ ਸੰਵੇਦਨਾ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸਮੇਂ ਸਥਾਨ ਦੇ ਖੰਡਿਤ ਵੇਰਵਿਆਂ ਦੀ ਥਾਂ ਦੇਸ਼-ਕਾਲ ਦੇ ਗਤੀਮਾਨ ਪਰਿਪੇਖ ਵਿੱਚ ਵੇਖਣ ਵਿਖਾਲਣ ਵਾਲੀ ਜੀਵਨ-ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦਾ ਨਾਮ ਹੈ।"[8] ਮਨੁੱਖੀ ਹੋਂਦ ਦਾ ਪਰਮ ਸੱਚ ਹੀ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਨੂੰ ਸਾਰਥਕਤਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕਰ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਕਵੀ ਅਨੁਸਾਰ ਆਧੁਨਿਕ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣਾ 'ਮੂਲ' ਨਵੀਨ ਜੀਵਨ ਮੁੱਲਾਂ ਦੇ ਨਾਲ-ਨਾਲ, ਆਪਣੇ ਸਰਵ-ਕਾਲੀ ਹਿੱਤਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਤਲਾਸ਼ਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਤਲਾਸ਼ ਨੂੰ ਚਰਨ ਸਿੰਘ ਦੀ ਕਵਿਤਾ ਆਧੁਨਿਕ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਮੰਡਲਾਂ ਉੱਪਰ ਜਾ ਕੇ ਨਵਿਰਤ ਕਰਦੀ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ

1. ਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਆਧੁਨਿਕ ਵਿਸ਼ਵ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2011, ਪੰਨਾ 7-8
2. --ਓਹੀ--, ਸੁਰੱਖਸ਼ਾ ਤੇ ਹਸਤਨਾਪੁਰ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2013, ਪੰਨਾ16-17

3. --ਓਹੀ--, ਸਮਾਧੀ ਤੇ ਅੰਕੁਰ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ, ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2013, ਪੰਨਾ 8

4. --ਓਹੀ--, ਪੰਨਾ 18

5. --ਓਹੀ--, ਪੰਨਾ 28

6. ਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਪੱਥਰ ਦਾ ਸਫ਼ਰ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ, 2013, ਪੰਨਾ 05

7. ਚਰਨ ਸਿੰਘ, ਆਧੁਨਿਕ ਵਿਸ਼ਵ, ਪੰਜਾਬ ਬੁੱਕ ਸੈਂਟਰ ਚੰਡੀਗੜ੍ਹ, 2011, ਪੰਨਾ 22

8. ਡਾ. ਕਰਮਜੀਤ ਸਿੰਘ, ਆਧੁਨਿਕ ਕਾਵਿ-ਧਾਰਾਵਾਂ ਦੇ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਆਧਾਰ, ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, 2015

ਮੋਬਾ.ਨੰ. 987260-3128

www.bohalshodhmanjusha.com **Bohal Shodh Manjusha** **ISSN: 2395-7115**
Impact Factor:7.523 **December 2024** **Page No. : 120-123**
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिंदी पत्रकारिता और वैश्वीकरण

कोमल, शोधार्थी पीएचडी हिंदी,
विश्वविद्यालय हनुमानगढ़ राजस्थान

सारांश:- पत्रकारिता का अर्थ - जर्नलिज्म शब्द फ्रैंच के शब्द जर्नी से उपजा है। जिसका अर्थ प्रतिदिन के कार्यों अथवा घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करना। पत्रकारिता विश्लेषण और सम्प्रेषण की प्रक्रिया है, पत्रकारिता अभिव्यक्ति की एक अद्भुत कला है ज्ञान और विचारों को समीक्षात्मक टिप्पणीयो के साथ शब्द ,ध्वनि तथा माध्यम से जन जन तक पहुंचाना ही पत्रकारिता है यह वह विद्या है जिसमे सभी प्रकार के पत्रकारो के कार्य, कर्तव्यों और लक्ष्यो का विश्लेषण होता है। पत्रकारिता समय के साथ साथ समाज की दिग्दर्शन और नियामिका है। हिंदी पत्रकारिता भारतीय राष्ट्रीयता की कहानी कहानी है। हिंदी पत्रकारिता के आदि उन्नायक जातीय चेतना युगबोध और महत दायित्व के प्रति पूर्ण सचेत थे इसलिए विदेशी सरकार की दमन निति का उन्हें शिकार होना पड़ा था उसके नृशंस व्यवहार की यातना झेलनी पड़ती थी। उन्नीसवीं शताब्दी में हिंदी गद्य निर्माण की चेष्टा और हिंदी प्रचार आंदोलन अत्यंत प्रभावशाली परिस्थितयों में भयंकर कठिनाईयों का सामना करते हुए भी कितना तेज और प्रभावशाली था। इसका साक्ष्य भारत मित्र सन् 1878 ई0 में सार सुधा निधि सन् 1879 ई0 और उचित वक्ता सन् 1880 के जीर्ण पृष्ठो पर मुखर है। हिंदी पत्रकारिता और हिंदी साहित्य भी अब इंटरनेट के माध्यम से विश्व भर में प्रसारित होने लगा है। हिंदी भाषा और साहित्य का प्रसार विदेशों में हुआ। भारत के आकाशवाणी और दूरदर्शन हिंदी के विश्व स्तर पर स्थापित करने में निरंतर कार्यरत हैं। पत्र पत्रिकाओं में लेख लिखकर इस युग में अद्भुत जन संस्कृति का प्रचार किया और इसलिए अब गद्य का विविध मुखी विकास होने लगा। भारतेन्दु नवीन जागरण काल के नवीन जनजागृति के अग्रदूत थे। उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के निमार्ण एवं विकास में बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया। पत्रकारिता आधुनिक सभ्यता का एक प्रमुख व्यवसाय है जिसमे समाचारों को एकीकरण, लिखना , जानकारी एकत्रित करके पहुंचाना और सम्यक प्रस्तुतीकरण आदि आज के युग में पत्रकारिता के भी अनेक माध्यम हो गये है पत्रकारिता के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता। यह सत्य की एक किरण के रूप में कार्य करता है। लोकतंत्र को कायम रखता है और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा करता है। अपनी सूचनात्मक और खोजी भूमिका के

माध्यम से पत्रकारिता नागरिकों को सशक्त बनाती है। सामाजिक न्याय को बढ़ावा देती है और जवाबदेही की वकालत करती है। उसमें जिज्ञासा का भाव बहुत प्रबल होता है ।यही जिज्ञासा सामाचार और व्यापक अर्थ में पत्रकारिता का मुल तत्व है जिज्ञासा नहीं रहेगी तो समाचार की थी जरुरत नही रहेगी।

मुल स्वर:- वेब पत्रकारिता, अखबार, पत्रकारिता, रेडियो, सुचना देना, साहित्यिक पत्रकारिता, दिनमान, लघु पत्रिका

प्रस्तावना:- दुनिया बदल रहीं हैं और पत्रकारिता को इन प्रक्रियाओं पर प्रतिक्रिया करनी चाहिए। पत्रकारिता नैतिकता पर पुनर्विचार करने की तत्काल आवश्यकता वाले क्षेत्रों में से एक है। आज पत्रकारिता की दौड़ में अधिक विविध जानकारी और डेटा, अधिक आवाज और दृष्टिकोण की आवश्यकता है ताकि इसे संतुलित और स्पष्ट माना जा सके। साथ ही राष्ट्रीय या व्यक्तिगत हितों को मानवाधिकारो और न्याय के अंतराष्ट्रीय सिद्धांतो पर प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिएं। पत्रकारों को अन्तर्राष्ट्रीय संचारक बनाना चाहिए जिनका सामाजिक सहसंयोजक उनके अपने दर्शकों या देश से विस्तृत विकसित करना चाहिए पुरे वैश्विक समुदाय के साथ बहु-समाज अनुबंध। मनुष्य को यह कभी स्वीकार नहीं होता है कि सारा विश्व ही गूंगा बहरा है।अगर ऐसा होता तो विश्व का कोई भी देश तरक्की नहीं कर पाता आज वैज्ञानिक तरक्की और प्रगति के कारण ही संचार के क्षेत्र में ई मेल ,इंटरनेट, फेसबुक, ट्विटर, वेवसाईट, ब्लॉग आदि का विकास हुआ है। सुचना और प्रौद्योगिक के विकास के कारण ही वैश्वीकरण के क्षेत्र में काफी तेजी आई है जिसका महत्व हिंदी के विकास पर भी पड़ा है। इसके माध्यम से हम विश्व के किसी भी देश से सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। और अपने विचारों को तुरंत पुरे विश्व में प्रसारित कर सकते हैं। वैश्वीकरण की दुसरी सबसे बड़ी देन है बाजारवाद। वैश्वीकरण बाजारवाद से जुड़ा हुआ है जिसमें अपना माल खपाकर अधिक से अधिक सस्ते दामों के उपलब्धि के कारण भारत आकर्षित होता है।इसी कारण संस्कृति पूरे विश्व में हिंदी को बढ़ावा दिया है। उपभोक्ताओं को आकर्षित करने के लिए सभी को हिंदी भाषा में विज्ञापन करने के मजबूर होना पड़ा है। आधुनिक युग में जिसके पास नई नई सुचनाओं का जाल है वहीं आज शक्तिशाली है। सुचना ज्ञान ही एक भाग है हम देश -विदेश, गांव नगर मोहल्ले की सारी सुचनाओं तथा समाचारों की जानकारी चाहते हैं इन सुचनाओं की जानकारी हमारे संचार माध्यमों में से रेडियो, टेलीविजन, समाचार- पत्र आदि से प्राप्त होती है जो पूर्णतः विश्वसनीय माने जाते हैं। सुचना पाना हमारा मौलिक अधिकार है हमें सुचना का उपयोग करना भी आना चाहिए। वैश्वीकरण ने पत्रकारों के लिए चुनौतियां ला दी है रोज़मर्रा के मुद्दों से लेकर बड़े संकटों तक कई कहानियों, स्थानीय प्रकृति की नहीं रह गई उनके वैज्ञानिक अंतर्संबंध और प्रभाव व्यावहारिक रूप से अपरिहार्य हो गए है साथ ही पत्रकारों की जानकारी एकत्र करने और प्रसारित करने की क्षमता भी बढ़ गई है । हिंदी पत्रकारिता में वैश्वीकरण ने दुनिया को एक परिवार के रूप में बदल दिया है और इसका प्रभाव मीडिया, साहित्य संस्कृति कला और भाषा पर पड़ा है। वैश्वीकरण ने हिंदी को

विश्व भाषा की ओर बढ़ने में मदद की है। पत्रकारिता को सामाजिक सरोकारों से जोड़कर रखा है ।जो वर्तमान समय में सबसे बड़ी मांग मीडिया के बहुआयामी दौर में पत्रकारिता ने अपना एक नया और अंतर क्रियात्मक प्रभाव गढ़ा है अंतर वस्तु बदल रही है और प्रस्तुतिकरण पर अब अधिक जोर दिया जाने लगा है। हिंदी पत्रकारिता के व्यापक दायरे में आने वाले अनेक अन्य समाचार माध्यमों के जरिए वे अपनी समाचारीय जिज्ञासा को शांत करते हैं। वैश्वीकरण की तेज चलने वाली प्रक्रिया ने इन अन्य संचार माध्यम को नई तकनीकी के साथ नए और अपेक्षाकृत अधिक सुविधाजनक तरीके दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया है। भूमंडलीकरण में हिंदी समाचार- पत्रों में उपभोक्ताओं को उत्पाद की अधतन जानकारी प्राप्त की जाती है समाचार -पत्रों ने उपभोक्ता को बाजार की जानकारी का पिटारा खोलकर रख दिया है। विज्ञापन ख़बर के रूप में आने लगें हैं और खबरें विज्ञापन जैसी होने लगी है। हिंदी समाचार पत्रों में उपभोक्ताओं को जानकारी देने और उपभोक्ता के अधिकारों की मांग बड़ी जोर से उठने लगी। 1980के बाद अर्थ व्यवस्था के बंधन कुछ ढीले पड़ने लगें थे। उपभोक्ता चेतना की ओर हिंदी समाचार पत्र की ओर बढ़ने लगे थे। और प्रसार की रोशनी होने लगी। हिंदी समाचार पत्रों ने नब्बे दशक में उपभोक्ताओं मुद्दे पर राष्ट्रीय , अंतराष्ट्रीय स्तर पर सक्रियता दिखाई देने लगी। भारत में प्रकाशित होने वाला पहला हिंदी भाषा का अखबार उदंत मार्तण्ड (द राइजिंग) सन् 30 मई 1826 को शुरु हुआ था । इस दिन को "हिंदी पत्रकारिता दिवस के रूप में मनाया जाता है, क्योंकि इसने हिंदी भाषा में पत्रकारिता की शुरुआत को चिह्नित किया था। वर्तमान में हिंदी पत्रकारिता ने अंग्रेजी पत्रकारिता के दबदबे को खत्म किया। पहले देश विदेश में अंग्रेजी पत्रकारिता का दबदबा था लेकिन आज हिंदी भाषा का झंडा बुलंद हो रहा है। वास्तव में आज हमारे मासिक साहित्य की प्रौढता और विविधता में किसी प्रकार का संदेह नहीं है। हिंदी की अनेकानेक प्रथम श्रेणी में रचनाएं मासिकों द्वारा ही पहले प्रकाश में आई थी। अनेक क्षेष्ठ कवि और साहित्य कार पत्रकारिता से भी संबंध है। आज हमारे मासिक पत्र जीवन और साहित्य के सभी अंगों की पूर्ति करते हैं। और अब विशेषज्ञता की ओर भी ध्यान जाने लगा। साहित्य की प्रवृत्तियों की जैसी विकासमान झलक पत्रों में मिलतीं है वैसी पुस्तकों में नहीं मिलता । वहां हमें साहित्य का सक्रीय सप्राण गतिशील रुप से प्राप्त होता है राजनीतिक क्षेत्र में इस युग में जिन पत्रिकाओं की धूम रही है वे है कर्मवीर 1924, सैनिक 1924, स्वदेश 1921, श्री कृष्ण संदेश 1925, हिन्दू पच 1926, स्वतन्त्र भारत 1928, जागरण 1929, स्वराज्य 1931 इत्यादि। हिंदी पत्रकारिता और हिंदी साहित्य भी अब इंटरनेट के माध्यम से वैश्वीकरण के संदर्भ से पुरे विश्व भर में प्रसारित होने लगा है। हिंदी भाषा और साहित्य का प्रसार विदेशों में होने लगा है । भारत के आकाशवाणी और दूरदर्शन हिंदी को विश्व स्तर पर समतुल्यता स्थापित करने में निरंतर कार्यरत हैं। अकाई बहुराष्ट्रीय कंपनी के विज्ञापन से हिंदी समाचार पत्रों को इस वर्ष काफी विज्ञापन राजस्व मिला। इस कंपनी को हिंदी समाचार पत्रों ने अच्छी भुमिका अदा की।"अकाई भारतीय बाजार में अपने सभी उत्पाद लाएगा" सन् 1995 का साल बहुराष्ट्रीय

और राष्ट्रीय कंपनियों की गठजोड़ को हिंदी समाचार पत्रों में एक नये आर्थिक युग की संभावना के रूप में देखा गया। समाचार भी चर्चा का विषय बना। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आने की स्थिति के साथ -साथ भारत में जब उन्होंने अपना। विस्तार प्रारंभ किया तो उसकी दौड़ में भी हिंदी समाचार पत्र भी पिछे नहीं रहे ।

निष्कर्ष:- हिंदी पत्रकारिता और वैश्वीकरण के संदर्भ में महत्वपूर्ण अंग माना जाता है वैश्वीकरण स्तर पर हिंदी को लोकप्रिय बनाने के लिए भारत को भी हिंदी शिक्षण और प्रशिक्षण की व्यवस्था को मजबूत करना होगा। विभिन्न देशों के बीच सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत बनाने में हिंदी पत्रकारिता का प्रचार प्रसार की अहम भूमिका रही है ।वैश्वीकरण पत्रकारिता दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में होने वाली घटनाओं के बीच संबंधों की जांच करती है और उन्हें रोज़मर्रा की जिंदगी से जोड़ती है। हिंदी पत्रकारिता वैश्विक स्तर में अंतरराष्ट्रीय समाचार और उन मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करती है जो कई देशों के बीच संबंधों को बनाए व संजोए रखती है। वैश्वीकरण ने हिंदी के साहित्येतर लेखन को बढ़ावा दिया और लेखन का स्तर दिन- पर -दिन भी ऊंचा होता जा रहा है। वैश्वीकरण के कारण दुनिया भर के कई टीवी चैनल हिंदी में कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं। हमारे हिन्दी साहित्यकारो एवं पत्रकारों को हिंदी को बढ़ावा देने के लिए अपनी महती भूमिका का निर्वाह करना होगा। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने हिंदी को ग्लोबल भाषा बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। हिंदी पत्रकारिता वैश्वीकरण में भी हिंदी भाषा अपनी सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर रही है। हिंदी पत्रकारिता के सुबोध इतिहास की आवश्यकता काफी समय से अनुभव की जा रही है। जो बिना किसी झिझक आकारीय न हो। विस्तृत आकार, जटिल, क्लिष्ट इतिहास से पाठकों को समस्या पैदा होती है। इसी मायने को सामने रखकर पत्रकारिता का स्वरूप प्रशिक्षण, संस्थानों आदि विभिन्न प्रदेशों की हिंदी पत्रकारिता, अखबार और आजादी की जगं आदि सरल और सहज रूप से प्रकाश डाला गया है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय पत्रकारिता कोश -
2. हिंदी पत्रकारिता में अभिव्यंजन शिल्प (डॉ राम अवतार शर्मा
3. पत्रकारिता में अनुवाद की समस्या
4. जनसंचार और पत्रकारिता विविध आयाम - डॉ ओमप्रकाश शर्मा
5. हिंदी पत्रकारिता और वैश्वीकरण

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 124-132
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

INDIA AND HER NEIGHBOUR
भारत और उसके पड़ोसी

विनोद कुमार, शोधाथी, अनुक्रमांक– 22400235
महाराजा छत्रशाल बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय छतरपुर मध्यप्रदेश,
डॉ. एस.के. सिद्धार्थ, शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापक राजनीति शास्त्र,
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टीकमगढ़ (मध्यप्रदेश)

परिचयः

भारत नौ (9) देशों के साथ सीमा साझा करता है। इनमें सात (7) देश भूमि सीमा साझा करते हैं जैसे – पाकिस्तान, चीन, नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, अफगानिस्तान जबकि दो (2) देश समुद्री सीमा साझा करते हैं जैसे – श्रीलंका, मालदीव। भारत की भूमि सीमा 15,200 किलोमीटर है। पाकिस्तान और चीन को छोड़कर अन्य देशों के साथ भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हैं।

भारत दक्षिण एशिया का एक प्रभावशाली राष्ट्र है। पड़ोसी देशों में आन्तरिक पर्यावरण में भौगोलिक अवस्थिति, ऐतिहासकि विकास, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्य एवं आर्थिक अत्पादन आदि सम्मलित होते हैं। भारत व उसके पड़ोसी देश उपनिवेश एवं साम्राज्यवादी संरचना से लोकतांत्रिक संरचना की ओर अग्रसर हुए हैं और जनसाधारण विकास की अपेक्षा के साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समृद्धि में भागीदारी की अपेक्षा होने लगी।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद भौगोलिक विभाजन भौगोलिक कम और सामरिक अधिक कहा जा सकता है। वैचारिक पृष्ठभूमि में भौतिक और सांस्कृतिक विशेषताएं, राजनैतिक व्यवहार, राजनैतिक मापदण्ड, सामाजिक ताना–बाना, राजनैतिक पारस्परिकता, सामान्य ऐतिहासिक परम्परा, जीवन जीने की एक विशिष्ट शैली और साथ रहने की भावना से प्रकट होती हैं। भारत सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, भाषायी एवं धार्मिक आधार पर एकरूपता रखता है। भौगोलिक सीमाओं और कूटनीति के मामले में देशों के बीच कभी–कभी उथल–पुथल भी होती रहती है।

भारत की व पड़ोसी देशों की विदेश नीति इतिहास से गहरा सम्बन्ध रखती हैं, जो अपने निकटतम पड़ोसियों के साथ मजबूत सम्बन्ध बनाने, क्षेत्रिय सहयोग को बढ़ाने और साझा मुद्दों के समाधान पर केन्द्रीत रही है। भारत के लिए प्रत्येक पड़ोसी देश बहुत अहम है, भारत का प्रयास रहा है कि उन सभी से उनके सम्बन्ध सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ें।

दक्षिण एशिया की विभिन्न देशों में एक सी राजनीति प्रणाली नहीं है। अनेक समस्याओं और सीमाओं के बावजूद दक्षिण एशिया हर अर्थ में विविधताओं से भरा–पूरा इलाका है फिर भी भू–राजनीतिक धरातल पर यह एक क्षेत्र है। पाकिस्तान और बांग्लादेश लोकतांत्रिक और सैनिक, दोनों तरह के नेताओं का शासन रहा है। 2006 तक नेपाल में संवैधानिक राजतंत्र था और भूटान में भी 2008 तक लोकतंत्र में बदल गया। मालदीव 1968 में गणतंत्र बना और 2005 के बाद लोकतंत्र मजबूत हुआ। दक्षिण एशियाई देशों की जनता लोकतंत्र की आकांक्षाओं में सहभागी हैं।

भारत के पड़ोसी देशों की सीमा से लगे राज्य

पाकिस्तान	जम्मू कश्मीर और लद्दाख
	पंजाब
	राजस्थान
	गुजरात
चीन	जम्मू कश्मीर
	हिमाचल प्रदेश
	उत्तराखण्ड
	सिक्किम
	अरुणाचल प्रदेश
नेपाल	उत्तर प्रदेश
	उत्तराखण्ड
	बिहार
	सिक्किम
	पश्चिम बंगाल
भूटान	सिक्किम
	पश्चिम बंगाल
	असम
	अरुणाचल प्रदेश
बांग्लादेश	असम
	त्रिपुरा
	मिजोरम
	मेघालय
	पश्चिम बंगाल
अफगानिस्तान	लद्दाख
श्रीलंका	मनार की खाड़ी द्वारा भारत से अलग किया गया
मालदीव	लक्षद्वीप द्वीप के नीचे हिन्द महासागर का दक्षिण–पश्चिम भाग

भारत के पड़ोसी देशों के साथ सीमा विवाद–

पाकिस्तान तथा चीन हैं।

भारत–पाकिस्तान सम्बन्ध

भारत का सबसे निकटतम पड़ोसी देश उत्तर–पश्चिम में स्थित पाकिस्तान है। 1947 से पूर्व पाकिस्तान भारत का ही अंग था। ब्रिटिश नीति के तहत भारत विभाजन की योजना एवं स्वार्थी सत्तालोभी राजनीतिकों ने दो राष्ट्र की विचारधारा को बल दिया जिसके कारण भारत को आजादी के साथ विभाजन स्वीकार करना पड़ा। 14 अगस्त 1947 को पाकिस्तान बना और 15 अगस्त 1947 को आजादी मिली। भारत के सम्बन्ध पाकिस्तान के साथ कभी भी सामान्य नहीं रहे। पैतृक सम्पत्ति के बंटवारे के बाद भी दो भाईयों में विवाद जारी रहा है।

पाकिस्तान अब तक भारत पर चार बार – 1947, 1965, 1971 और 1999 में आक्रमण कर चुका है। भारत को अपनी सुरक्षा व अखण्डता एवं सम्प्रभुता की रक्षा के लिए उत्तर देना ही पड़ता है। पाकिस्तान भारत पर हर बार पहले ही आक्रमण करता है और उसे भारत के हाथों पराजय का मुंह देखना पड़ता है। वर्तमान में भारत में आतंकवाद को बढ़ावा देने के उद्देश्य हेतु प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से आतंकी संगठनों की सहायता करता है और अपनी भारत विरोधी हरकतों से बाज नहीं आता है। 13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद पर तथा 26 नवम्बर 2008 को मुम्बई में ताज होटल व अन्य स्थानों पर हुए आतंकवादी हमले इस तथ्य की पुष्टि करते है।

पाकिस्तान के शत्रुतापूर्ण व्यवहार के कारण भारत ने अब तक सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया है। पाकिस्तान के प्रति भारत स्वच्छ राजनीति की महत्ता को समझता है और शान्तिपूर्ण वार्ता से ही समस्या का समाधान चाहता है। दोनों देशों के बीच वर्ष 1966 में ताशकंद तथा वर्ष 1972 में शिमला समझौता हो चुका है। 22 जुलाई 1972 को समझौता एक्सप्रेस के नाम से रेल सेवा आरम्भ की गई। शिमला समझौता के तहत भारत ने शान्ति प्रयासों में कमी नहीं रखी लेकिन पाकिस्तान के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं दिखाई दिया। फरवरी 1999 में भारतीय प्रधानमंत्री ने ऐतिहासिक लाहौर बस यात्रा के माध्यम से मित्रता की पहल की, लेकिन पाकिस्तान ने विश्वासघात करके मई–जुलाई 1999 में भारत के क्षेत्र कारगिल पर हमला बोल दिया। जवाब में भारत ने "ऑपरेशन विजय" के तहत भारत कारगिल लड़ाई में पाकिस्तान को हार का मुंह दिखाकर विजयी हुआ। पाकिस्तान ने कारगिल के तुरन्त बाद दिसम्बर 1999 में ही भारतीय एयरलाइंस के यात्री विमान का अपहरण कर लिया। एक वर्ष में दो घटनाएं घटित होने के बाद भारत–पाकिस्तान सम्बन्धों को बुरी तरह प्रभावित हुए। दोनों देशों के बीच कई वर्षों तक क्रिकेट और राजनीतिक सम्बन्ध टूटे रहे हैं।

वर्ष 2003 के बाद दोनों देशों के सम्बन्ध सुधारने के प्रयास हुए। नवम्बर 2003 संघर्ष विराम की घोषणा के साथ दोनों देशों के बीच सम्बन्ध थोड़े सामान्य हुए। इसके बाद क्रिकेट मैच के द्वारा दोनों देशों के मध्य सम्बन्ध सुधारने के प्रयास किए गए हैं। 2003–2004 में भारत की राष्ट्रीय क्रिकेट टीम ने पाकिस्तान का दौरा किया। वर्ष 2008 आते ही पाकिस्तान पोषित आतंकी संगठन लश्कर–ए–तैयबा के द्वारा हमला किए जाने के बाद दोनों देशों के रिश्ते खटास में आ गए। वर्ष 2012 तक 200 बार से अधिक संघर्ष विराम का उल्लंघन किया। जनवरी 2013 में पाकिस्तानी सेना ने भारतीय सीमा में घुसकर फायरिंग करते हुए भारत के दो जवानों को भून डाला। उनमें से एक का सिर गायब कर दिया। इस घटना की पूरे विश्व में निन्दा की गई फिर भी वर्ष 2014 में भारत के नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री ने शपथ ग्रहण समारोह में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री को विशेष रूप से आमंत्रित करके फिर से भारत के शान्ति प्रयासों को स्पष्ट कर दिया। नवम्बर 2018 में संयुक्त रूप से भारत और पाकिस्तान ने गुरुनानक देव की 55वीं जयंती के लिए करतारपुर कॉरिडोर को तीर्थ यात्रियों के लिए खोलने की घोषणा की जिसके तहत 4 से 5 किलोमीटर लम्बे गलियारे का उपयोग करने की अनुमति है। पाकिस्तान ने अपने क्षेत्र में अर्न्तराष्ट्रीय सीमा करतारपुर साहिब तक गलियारा विकसित करके लोगों को सुखद आश्चर्य में डाल दिया। फरवरी 2019 में सीआरपीएफ के काफिले पर पुलवामा में आतंकवादियों ने निशाना बनाया जिसमें 40 जवान मारे गए। इसी भीषण आतंकी हमले के जवाब में भारत ने बालाकोट में जैश–ए–मुहम्मद के एक आतंकी प्रशिक्षण शिविर पर सीमित सैन्य कार्रवाई से शिविर को उड़ा दिया फिर 27 फरवरी 2019 को पाकिस्तान ने भारत की सीमा में घुसकर हवाई हमला किया, जवाब में भारत ने पाकिस्तान की एयरफोर्स के एफ–16 विमान को मिग–21 के द्वारा मार गिराया। भारतीय पायलेट विंग कमांडर अभिनंदन को पाकिस्तान की सीमा में पाकिस्तान के सैनिकों द्वारा पकड़े जाने पर भारत के दबाव को देखते हुए एक मार्च 2019 को रिहा करना पड़ा। इसके बावजूद भी हम देशवासी आस लगाए बैठे हैं कि दोनों देशों में पुनः भाईचारा बहाल हो।

निष्कर्ष:

भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध हमेशा से ही ऐतिहासिक और राजनैतिक मुद्दों की वजह से तनाव में रहे हैं जबकि दोनों देश भारत के इतिहास, सभ्यता, भूगोल और अर्थव्यवस्था से जुड़े हैं। भारत में लोकतंत्र को बढ़ावा मिला है जबकि पाकिस्तान में कई बार सैनिक शासन के कारण व आईएसआई संगठन से आमजन परेशान है। दोनों देशों के राजनैतिक मुद्दों के कारण आम जन को परेशानी झेलनी पड़ती है।

सुझावः

1. नशीले पदार्थों एवं हथियारों की अवैध तस्करी सम्बन्धी समिति की बैठक।
2. आतंकवाद रोकने के सम्बन्ध में बातचीत।
3. सांस्कृतिक आदान–प्रदान पर बातचीत।
4. आर्थिक एवं व्यापारिक सहयोग की सम्भावनाओं पर बातचीत आदि।
5. सियाचीन वुल्लर बैराज/तुलबुल नोवहन परियोजना, बगलिहार परियोजना, सर क्रीक आदि मुद्दों पर बातचीत के जरिये शान्तिपूर्ण समाधान।

6. नाभिकीय विश्वास बहाली के उपायों पर विशेष स्तर की बातचीत।

भारत–बांग्लादेश सम्बन्ध

भारत के पूर्व में स्थित बांग्लादेश पहले पूर्व पाकिस्तान के नाम से जाना जाता था। यह पहले पाकिस्तान का ही हिस्सा था। भारतीय प्रधानमंत्री और अन्तर्राष्ट्रीय जगत के सम्मलित प्रयासों द्वारा 6 दिसम्बर 1971 को बांग्लादेश को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। जनसंख्या के दृष्टिकोण से बांग्लादेश विश्व का दूसरा सबसे बड़ा मुस्लिम देश है, लेकिन यह आर्थिक रूप से काफी पिछड़ा हुआ है इसलिए भारत बांग्लादेश को यथासंभव सहयोग प्रदान करता है। बांग्लादेशवासी भारत को एक बड़े भाई की भूमिका में देखते हैं फिर भी अगस्त 1975 तक भारत–बांग्लादेश के सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ नहीं थे।

बांग्लादेश में आवामी लीग सत्ता में आने के बाद दोनों देशों के सम्बन्धों में गिरावट आई। दिसम्बर 1996 में दोनों देशों के बीच 3 साल तक के लिए गंगा नदी जल बंटवारे पर समझौता हुआ। दोनों देशों की ओर से बाढ़ की चेतावनी व सहयोग करने की बात हुई। वर्तमान समय में दोनों देशों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध तो अवश्य हैं लेकिन कुछ मुद्दों पर विवाद की स्थिति बनी हुई है। बांग्लादेश पडुआ और न्यू मूर द्वीव पर अपना दावा करता है जो कि वर्ष 1971 से पूर्व भारत के नियंत्रण में थे। बांग्लादेश में उल्फा जैसे आतंकवादी संगठन भी सक्रीय हैं जिसके माध्यम से पाकिस्तान की आईएसआई भारत में आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देती है। एक अनुमान के अनुसार भारत में 20 लाख से भी ज्यादा बांग्लादेशी अवैध रूप से रह रहे हैं।

दोनों देशों के बीच 1974 में सीमा समझौता हुआ था जो भारत के पांच राज्य पश्चिम बंगाल, असम, मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम के कुछ हिस्से बांग्लादेश को सौंपे जाने हैं, बदले में बांग्लादेश से कुछ हिस्से भारत में शामिल होने वाले हैं लेकिन इस कार्य को अंजाम बगस्त 2015 में देनों देशों ने 162 प्रतिकूल कब्जे वाले क्षेत्रों का आदर–प्रदान किया। दोनों देशों के बीच मैत्री एक्सप्रेस रेल की आवृति बढ़ाने व बस सेवा आरम्भ करने एवं एक विशेष आर्थिक जोन के विकास करने की घोषणा की आने वाले समय में दोनों देशों के बीच सम्बन्ध निश्चित तौर पर बेहतर ही होंगे।

निष्कर्ष:

भारत और बांग्लादेश दक्षिण एशियाई पड़ोसी देश हैं और दोनों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं, हालांकि दोनों देशों बीच कभी–कभी सीमा विवाद होते हैं लेकिन सम्बन्धों में अन्तर्निहित समानताएं हैं– परम्परा, सांस्कृतिक, सिद्धान्त आदि।

सुझावः

1. दोनों देश द्विपक्षीय व्यापक आर्थिक भागीदारी समझौते पर बातचीत करें।
2. दोनों देश वस्तुओं, सेवाओं और निवेश पर ध्यान केन्द्रीत करें।
3. दोनों देश –गंगा, फरक्का और तीस्ता नदी जल मुद्दे एक समिति द्वारा सुलझाने का प्रयास करें।
4. दोनों देश भविष्य में रेल व बस सेवा को बढ़ावा दें।
5. दोनों देश आपसी वीजा प्रणाली सरल व शर्तें कम करें।

भारत–चीन का सम्बन्ध

एशिया का तेजी से उभरता हुआ शक्तिशाली देश चीन भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों की सीमाओं को स्पर्श करता हुआ है। चीन क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत से बड़ा है। इन दोनों देशों को प्रतिद्वन्दी के रूप में जाना जाता है। भारत और चीन के सम्बन्ध ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक रूप से हजारों साल पुराने हैं।

भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चीन का सहयोग करते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थायी सदस्यता दिलवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। वर्ष 1955 में बाण्डुंग सम्मेलन में दोनों देशों ने एक–दूसरे का सहयोग करते हुए हिन्दी–चीनी भाई–भाई का नारा लगाया एवं 1945 में पंचशील समझौता हुआ। तिब्बत क्षेत्र में चीन प्रशासन दमन करने लगा तो आध्यात्मिक गुरु दलाई लामा ने 31 मार्च 1959 को भारत में शरण ली जिससे चीन ने अपनी नाराजगी दिखाते हुए भारत को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपमानित करने के उद्देश्य से 20 अक्टूबर 1962 को भारत के क्षेत्र लद्दाख की सीमा पर आक्रमण करके कुछ क्षेत्र पर कब्जा

कर लिया। भारत पर आक्रमण से भारतीय प्रधानमंत्री को बड़ा आघात लगा और 1964 में उनकी मृत्यु हो गई। 1965–1971 के भारत–पाकिस्तान युद्धों में चीन अप्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान का साथ देकर शत्रुता के इरादे को जाहिर कर दिया। चीन सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों पर अपना अधिकार होने की बात करता है। चीन भारतीय सीमा के नजदीक चौड़ी लेन की सड़क एवं ब्रह्मपुत्र नदी के प्रवाह को मोड़ने की परियोजना पर काम कर रहा है जो भारत के हित में नहीं है।

दोनों देशों का गतिरोध दूर करने के प्रयास वर्ष 1968, 1988, 2008 में भारत सरकार ने चीन की यात्रा कर दोनों देशों के मध्य सम्बन्ध सुधारने की कोशिश की। दोनों देशों की ओर से 21वीं शताब्दी का साझा लक्ष्य दस्तावेज जारी किया गया जिसके चलते व्यापार, विज्ञान, तकनीकी क्षेत्रों में समझौते के साथ आर्थिक भागीदारी में वृद्धि हुई। वर्ष 2014 के बाद आपसी यात्रा के साथ सीमा विवाद निपटाने की चर्चा हुई। भाईचारें की भावना का विकास हुआ। 16 विभिन्न समझौतों पर हस्ताक्षर हुए किन्तु सम्बन्ध सन्देह के वातावरण में आगे बढ़ रहे हैं।

निष्कर्ष:

शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद भारत–चीन सम्बन्धों में व्यापक परिवर्तन दिखने को मिला है जो विश्व में दोनों देशों की भागीदारी को बढ़ाने तथा आपसी राजनीतिक, व्यापारिक और कूटनीति सम्बन्ध को बढ़ाने और वर्तमान में कुछ घटनाओं के सम्बन्धों को पुनः बदलाव की ओर अग्रसर कर दिया है।

सुझाव:

1. पांच सूत्रीय फार्मुले पर कामय रहने की कोशिश करना।
2. सीमा समझौता समिति के द्वारा सुलझाने की कोशिश करना।
3. भारत–चीन आर्थिक सम्बन्ध के बीच रणनीतिक और सहयोगात्मक साझेदारी का एक महत्वपूर्ण तत्व है।
4. द्विपक्षीय मैत्री एवं सहयोग के साथ मुक्त व्यापार व व्यापक सम्बन्ध बनाना।
5. हर वर्ष दोनों देशों के बीच एक वित्तीय वार्ता भी हो।

भारत–नेपाल सम्बन्ध

भारत–नेपाल के मध्य वर्ष 1950 में शान्ति तथा मैत्री सन्धि भी हो चुकी है जिसके अन्तर्गत दोनों देश सुरक्षा की दृष्टि से सहयोग करेंगे और किसी भ्रामक स्थिति में परस्पर संवाद स्थापित करके मित्रता का संवाद स्थापित करेंगे।

प्राचीनकाल से ही नेपाल और भारत में सांस्कृतिक रूप से बहुत अधिक समानताएं रही हैं। आज भी दोनों देशों में एक विशेष सम्बन्ध कायम है जिसके कारण दोनों देशों के नागरिक बिना किसी वीजा या पासपोर्ट के एक–दूसरे देश में प्रवेश कर सकते हैं। इसलिए भारत देश एक अच्छे पड़ोसी होने के नाते आर्थिक रूप से भी उसकी सहायता कर रहा है और पैट्रोलियम, चावल, गेहूँ, मक्का, चीनी आदि के निर्यात पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। वर्ष 1996 में भारत–नेपाल के मध्य महाकाली नदी के पानी और बिजली को साझा करने का समझौता भी हुआ। वर्ष 2008 में लोकतंत्र की स्थापना में भारत ने महत्पूर्ण भूमिका निभाई और विकास प्रक्रिया में हरसम्भव सहायता देने का आश्वासन दिया। दोनों देशों के मैत्रीस्तर पर यात्राएं समय–समय पर कायम है।

निष्कर्ष:

भारत और नेपाल व्यवस्था एक निश्चित पर्यावरण परिवेश में क्रियाशील होती है। पर्यावरण परिवेश में परिवर्तन के साथ राजनैतिक व्यवस्था में परिवर्तन आता है और आन्तरिक पर्यावरण में भौगोलिक, ऐतिहासिक विकास, सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्य एवं आर्थिक उत्पादन आदि।

सुझाव:

1. भारत–नेपाल के मध्य भौगोलिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सम्बन्धों के कारण अपनी विदेश–नीति में और उदार बनाने की आवश्यकता है।
2. दोनों देशों के बीच का रिश्ता निर्बाध आवाजाही के कारण विवाह रिश्ता, पारिवारिक सम्बन्धों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

3. दोनों देशों के बीच 1950 की शान्ति व मित्रता की सन्धि में दोनों तरफ उदार करने की आवश्यकता है।
4. कई हिन्दू और बौद्ध धार्मिक सथल एवं दोनों देश हिन्दूओं की जनसंख्या ज्यादा होने से दोनों तरफ भावनाओं का सम्मान करने की आवश्यकता है।
5. सन्धि के नाते दोनों देशों में निवास, सम्पत्ति, व्यापार व व्यवसायों के लिए राष्ट्रीय व्यवहार स्थापित करें।

भारत–भूटान सम्बन्ध

ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो भारत और भूटान के सम्बन्ध काफी पुरानी हैं। अगस्त 1949 में दोनों देशों ने मैत्री सन्धि पर किए जिसके अन्तर्गत दोनों देश पारम्परिक रूप से शान्ति बनाए रखने के लिए एक–दूसरे के आंतरिक मुद्दों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। भूटान सरकार अपने विदेशी सम्बन्धों के विषय में भारत सरकार की सलाह से निर्देशित होने की बात से सहमत थी। 8 फरवरी 2007 में भूटान और भारत के बीच करीबी दोस्ती और सहयोग के स्थायी सम्बन्धों को ध्यान में रखते हुए सन्धि में संसोधन किया गया। अब भारत न केवल भूटान का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को दिशा देने में मार्गदर्शन करेगा, बल्कि दोनों देश राष्ट्रीय स्तर के मुद्दों पर भी सहयोग करेंगे और इनमें से कोई भी देश अपनी जमीन का उपयोग दूसरे के अहित के लिए नहीं करेगा।

संसोधन के बाद एक स्वतंत्र और सम्प्रभु राष्ट्र के रूप में भूटान की स्थिति मजबूत हुई। वर्ष 2008 में भारतीय प्रधानमंत्री ने भूटान की यात्रा कर उसे लोकतंत्र की स्थापना के लिए प्रेरित किया और भूटान से बिजली आयात करने का समझौता किया। भूटान में भारतीय कंपनी द्वारा एक पनबिजली बांध निर्मित किया गया जिससे भूटान में रोजगार के अवसर उत्पादित हुए और भारत की जरूरतों को पूरा करने के लिए बिजली भारत को निर्यात भी की जाती है। इससे भूटानी अर्थव्यवस्था का विकास हुआ।

अगस्त 2013 में भूटान के प्रधानमंत्री ने भारत की यात्रा की तब भारत सरकार ने भूटान की अर्थव्यवस्था को वित्तीय सहायता देते हुए उसे 819 मिलियन अमेरिकी डॉलर देने का समझौता किया। भूटान भारत के लिए एक महत्वपूर्ण देश है। जून 2014 में भारतीय प्रधानमंत्री ने भूटान की यात्रा की। उनकी यात्रा का उद्‌देश्य पारस्परिक सहयोग देना था। इस दौरान उन्होंने भूटान के उच्चतम न्यायालय परिसर का उद्घाटन किया और भूटान को सूचना प्रोद्यौगिकी एवं डिजिटल क्षेत्र में सहयोग देने का वादा किया। निश्चित रूप से आने वाले समय में भूटान के साथ हमारा रिश्ता और गहरा होगा।

निष्कर्ष:

भारत–भूटान का ऐतिहासिक सम्बन्धों, रणनीतिक सहयोग और साझा मुख्यों का अनूठा मिश्रण है। दोनों देशों के बीच स्थायी मित्रता समय की कसौटी पर खरी उतरी है। यह सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों को शामिल करते हुए एक बहुआयामी साझेदारी में विकसित हुई है। भारत–भूटान सम्बन्ध पारंपरिक रूप से घनिष्ठ हैं, क्योंकि दोनों देश संस्कृति और आपसी हितों के आधार पर एक विशेष सम्बन्ध साझा करते हैं।

सुझावः

1. भूटान व भारत और परियोजनाओं पर कार्य करें ताकि रोजगार के अवसर बढ़ सकें।
2. दोनों देशों में मित्रता के सम्बन्ध में सन्धि में सैन्य उपकण विशेषज्ञ के साथ मार्गदर्शन करें;
3. भारत ने भूटान को रक्षा, अवसंरचना और संचार क्षेत्रों में सहायता की है इससे आगे बढ़कर शिक्षा, स्वास्थ्य क्षेत्रों में भी सहयोग करें।
4. भूटान भारत की विदेशी सहायता का सबसे बड़ा लाभार्थी है अतः भारत भूटान में पहाड़ी क्षेत्र होने की वजह से कृषि क्षेत्र में एक समिति बनाए और समिति विश्लेषण सिफारिश पर हाईब्रिड ब्रिज व रासायनिक खाद का भी प्रबन्ध करे ताकि स्थानीय स्तर पर विकास हो।
5. भारत–भूटान छात्रों को भारत में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रत्येक राज्य में प्रवेश दिलाने के महत्व को ध्यान में रखते हुए भूटान के मेधावी छात्रों को 100 प्रतिशत छात्रवृत्रि देने की योजना पर कार्य करें।

भारत–अफगानिस्तान सम्बन्ध

पारम्परिक रूप से भारत और अफगानिस्तान के बीच मजबूत और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं। पिछले कुछ दशकों से अफगानिस्तान में तालिबान आतंक का बोलबाला है। भारत एकमात्र दक्षिणी एशियाई देश है जिसने तालिबान उन्मूलन के लिए किए गए सोवियत रूस के सैन्य अभियान का समर्थन किया था। इस समय भारत, अफगानिस्तान के विकास के लिए मानतावादी दृष्टिकोण पर उसे आर्थिक और सैन्य सहायता उपलब्ध करवा रहा है।

अफगानिस्तान भारत को अपना भाई राष्ट्र मानता है। इस समय भारत अफगानिस्तान में सबसे बड़ा क्षेत्रिय निवेशक है और उसके पुनर्निर्माण के लिए सबसे अधिक प्रतिबद्ध है। बहुत सारे भारतीय कामगार और भारतीय सेना का कुछ भाग अफगानिस्तान में बड़े पैमाने पर सड़क मार्ग, रेलमार्ग, अस्पताल, स्कूल आदि के निर्माणकार्यों में संलग्न है। अफगानिस्तान में भारत के शान्ति प्रयासों को संयुक्त राष्ट्रसंघ भी सराहनीय मानता है।

भारत अफगानिस्तान के विषय में विश्वस्तर पर दबाव बनाए ताकि अफगानिस्तान में लोकतंत्र बहाली के साथ सुचारू रूप से चले, इसमें ही मानवहित है।

अमेरिकी सेना आईएसएफ ने अफगानिस्तान में शान्ति कायम रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। अमेरिका ने अपनी सेना को देश लौटा दिया है। भारतीय प्रधानमंत्री ने कहा कि अमेरिका को अब अपनी सेना को धीरे–धीरे निकाल लेना चाहिए ताकि वहां लोकतंत्र की जड़ मजबूत हो सके जो कि 20 वर्ष से अफगानिस्तान में अमेरिकी सेना कायम थी।

वर्तमान में तालिबान ने अफगानिस्तान पर कब्जा कर लिया और वहां के राष्ट्रपति ने दूसरे देश में जाकर शरण ली। तालिबानियों ने अपने जिहादी नियम के मुताबिक रहने को फरमान सुना दिया जिससे वहां पर महिला व स्कूली लड़कियों का भविष्य खतरे में पड़ गया। स्थानीय स्तर पर चोरी, बलात्कार, हिंसक घटनाओं को अंजाम दिया गया। विदेशी छात्र व रोजगार श्रमिक अपने–अपने देश लौट आए और वहां के निवासी भी देश छोड़ने को मजबूर हुए।

निष्कर्षः

भारत–अफगानिस्तान के साथ बहु–स्तरीय सम्बन्ध है। सेना और सुरक्षा का दृष्टिकोण जिसके तहत भारत चाहता है कि अफगानिस्तान में स्थिरता बनी रहे। अधिक सकारात्मक रूप से देखें तो एक सामाजिक और आर्थिक जुड़ाव, जिसके अन्तर्गत भारत सरकार के व्यवसायिक प्रतिष्ठानों तथा विकासमान प्रोजेक्टों का निवेश शामिल है।

सुझावः

1. भारत–अफगानिस्तान दोनों ने 1950 में मैत्री सन्धि पर हस्ताक्षर किए किन्तु फिर समय–समय पर सन्धि को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
2. दोनों देशों में राजनीतिक, आर्थिक और सास्कृतिक सम्पर्क को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
3. भारत अफगानिस्तान में शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार आदि विषयों पर ध्यान देने की जरूरत है।
4. अफगानिस्तान में लोकतंत्र को सुचारू रूप से मानवाधिकार का पालन व महिला सशक्तिकरण पर जोर देना चाहता है भारत लेकिन विश्व स्तर पर तालिबान कुछ और ही चाह रहा है।

दक्षिण एशिया की सामाजिक विशेषताएं

दक्षिण एशिया के क्षेत्रों में काफी समानताएं हैं तो असमानताएं भी हैं। इन सभी क्षेत्रों में जातिवाद, धर्मवाद, लिंग भेद, सामाजिक, आर्थिक भेद, छुआछुत, अंधविश्वास, भाषा भेद आदि सामान्य रू‍प से देखने को मिलती हैं। इन क्षेत्रों में हजारों जातियां पाई जाती हैं। सामाजिक संरचना जाति पर आधारित है।

दक्षिण एशिया की सांस्कृतिक तथा भोगोलिक विशेषताएंः

दक्षिण एशिया में विभिन्न प्रकार के समाज, जातीय परम्परा, सांस्कृतिक विरासत, राष्ट्रीयता आदि का सम्मिश्रण है। इसमें पश्चिमी–मध्य देशों की भी झलक पाई जाती है जो सामान्य रूप से प्राकृतिक भूगोल तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभाजित है। सांस्कृतिक की शुरूआत हमारी विकसित सिंधु घाटी की सभ्यता से हुई जिसमें आर्य तथा द्रविड़ जाति के लोगों को मिश्रण तथा उनके आगमन को देखा। जनसाधारण घटकों के आपस में मिश्रित हो जाने के कारण एक नई संस्कृति का जन्म हुआ। हमारी परम्परा संस्कृति में

ज्यादादतर अंतर धर्म के ही क्षेत्र में थे जबकि खेल, इतिहास, भौगोलिक स्थिति, रोजगार–धन्धे, जीवन शैली, भोजन तथा पहनावे आदि में दक्षिण एशिया के लोगों की काफी समानताएं हमें देखने को मिलती हैं।

भूगोलः

भूगोल की एक स्पष्ट भौगोलिक पहचान है। यह विभिन्न प्रकार की भौगोलिक विशेषताओं जैसे ग्लेशियर, घाटियां, रेगिस्तान तथा घास के बड़े–बड़े मैदान आदि से भरा पड़ा है। यहां विभिन्न जलवायु क्षेत्र हैं।

दक्षिण एशिया की आर्थिक विशेषताएंः

संयुक्त राष्ट्र संघ के बहुआयामी गरीबी सूचकांक MPI के अनुसार दक्षिण एशिया में (MPI) के गरीबों की संख्या 55 प्रतिशत है जबकि उप–सहारा अफ्रिका में 64.5 प्रतिशत है। विश्व बैंक के आंकड़े के अनुसार दक्षिण एशिया के देशों के करीब 40 प्रतिशत से ज्यादा जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे अपना जीवन गुजर–बसर कर रही है।

दक्षिण एशिया के देशों में श्रीलंका का प्रति व्यक्ति सकल घरेलु उत्पाद सबसे ज्यादा है, जबकि अफगानिस्तान में यह सबसे कम है। भारत सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला देश है और पूरे दक्षिण एशिया 82 प्रतिशत है।

दक्षिण एशिया का आपसी आयात–निर्यातः

सार्क जिसकी स्थापना 1985 में की गई थी जो कि दक्षिण एशिया के देशों को आर्थिक सहयोग प्रदान करने वाला एक संगठन है और भारत दक्षिण एशिया कर आर्थिक महाशक्ति है। दक्षिण एशिया के बीच कई द्विपक्षीय और बहुपक्षीय मुक्त व्यापार समझौतों से लाभन्वित होते हैं। BIMSTEC- 1997 इन देशों के बीच व्यापार 31 बिलियन अमेरिकी डॉलर था। क्षेत्रीय बहुपक्षीय समझौतों में दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र SFTA, SAARC, SAPTA, APTA शामिल हैं।

भारत की उदार व्यापार नीति 50 से 100 प्रतिशत तक की भारी मुक्त शुल्क रियायतें दी हैं जैसे– नेपाल, भूटान, अफगानिस्तान।

निष्कर्षः

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर दक्षिण एशियाई देशों का सार्क एक ऐसा संगठन है जो एतिहासिक और समकालीन रूप से पहचान को दशौता है। भारत के पड़ोसी राष्ट्र भारत को बड़े भाई का दर्जा देते हैं तो भारत स्वीकार करता है जैसे– इन्द्रकुमार गुजराल के समय स्पष्ट देखा गया था। भारत की अपनी शान्तिप्रिय छवि के अनुसर उन्हें उचित सहायता प्रदान करता है। दक्षिण एशियाई देशों में आपसी कोई किसी न किसी रूप में रह रहा है और मिश्रण सांस्कृतिक को बढ़ावा देता है। प्राकृतिक आपदाओं के समय भारत आगे बढ़कर अपने पड़ोसियों की सहायता करता है। दक्षिण एशियाई देशों का आपसी व्यापार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सांस्कृतिक में आपसी योगदन है। अलग–अलग धर्म–भाषा, सांस्कृतिक में आपसी योगदान है। भारत दक्षिण एशिया का एक प्रभावशाली राष्ट्र है लेकिन वह अपने पड़ोसी देशों के साथ मधुर व्यवहार करता है। भारत की कोशिश पाकिस्तान और चीन के साथ अपने सम्बन्ध सुधारने की है परन्तु इस प्रक्रिया उन्हें भी सहयोग देना होगा। चीन और पाकिस्तान को भी समझना होगा कि भारत उनके साथ मैत्री सम्ब्न्ध उनके हित में ही होंगे। भारत अपने उन्नति के साथ–साथ पड़ोसी के भी उन्नति देखना चाहता है। अतः दक्षिण एशिया में सदैव सकारात्मक भूमिका उदा करता रहेगा और समयानुकूल पड़ोसी राष्ट्रों के प्रति अपने दायित्वों के प्रति निर्वाह करता रहेगा।

सुझावः

1. आर्थिक तथा व्यापारिक उद्देश्यः द्विपक्षीय क्षेत्रीय तथा बहुपक्षीय आर्थिक तथा व्यापारिक को विकसित करना तथा इसमें और विस्तार करना ताकि पारस्परिक रूप् से सभी इसमें लाभ पहुंच सके।
2. लोगों से लोगों का जुड़ावः निरन्तर सौहार्द और स्थिरता के लिए लोगों से लोगों से सम्पर्क और गहरी सांस्कृतिक समानता को प्राथ्मकता दी जानी चाहिए।

3. आत्मनिर्भर दक्षिण एशिया की ओरः दक्षिण एशिया की आत्मनिर्भरता में क्षेत्र के माध्यम से मुक्त पारगमन व्यापार की पेशकश, आपूर्ति और रसद श्रृंखलाओं का विकास, डिजिटल डेटा इंटरचेंज, एकल–खिड़की इत्यादि।
4. अंतरक्षेत्रिय एकीकरणः दक्षिण एशिया–दक्षिण पूर्व एशिया क्षेत्रीय एकीकरण जिसमें टैरिफ, गैर टैरिफ और प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) बाधाओं के उदारीकरण के साथ–साथ व्यापार सुविधा शामिल है।
5. 21वीं सदीः 21वीं सदी में भारत प्रभावशाली देश के नाते दक्षिण एशिया में सम्प्रेषण को और उदार करने भूमिका निभानी होगी।
6. दक्षिण एशियाः दक्षिण एशिया में नागरिक संगठनों तथा थिंक टैंकों के साथ अपने सम्बन्ध स्थापित करना।
7. आतंकवादः भू–स्थलीय व महासागरीय देशों के साथ आतंकवाद तथा गैर–पारंपरिक सुरक्षा खतरे पर काबू पाना।
8. वैश्विकः वैश्विक समस्याओं की व्यवस्था एवं समाधान के लिए राजनयिक बातचीत को सर्वोच्यता।
9. विवादः सीमा विवाद, बहुद्देशीय परियोजनाओं के सम्बन्ध में उपजे अविश्वास और असंतोष के सम्बन्ध में कोई समुचित एवं सर्वमान्य हल परस्पर वार्ता के द्वारा ही निकाला जाना चाहिए।
10. व्यापारः भारत व पड़ोसी देशों के साथ एक पक्षीय व बहुपक्षीय व्यापार, आर्थिक एवं विनिवेश के क्षेत्र में आगे आना चाहिए। व्यापार एक ऐसा क्षेत्र है जो सम्बन्धों में पुल का काम करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. लाल शीत युद्ध की दास्तान भारत और पाकिस्तान, लेखकः डॉ. शुक्ल कृष्णानन्द
ISBN 978–81–7475–638–0, प्रकाशकः मोहित पब्लिकेशन्स दरियागंज, नई दिल्ली–110002
2. पाकिस्तान एक सुरक्षा की चुनौती, लेखकः डॉ. शुक्ल कृष्णानन्द,ISBN 978–81–7445–636–6 प्रकाशकः मोहित पब्लिकेशन्स दरियागंज, नई दिल्ली–110002
3. दक्षिण एशिया में संघर्ष एवम् सहयोग, लेखकः डॉ. कुमारी सुदेश,
4. ISBN 978–81–899996–58–1, प्रकाशकः श्री साईं प्रिन्टोग्राफरस दरियागंज, नई दिल्ली–110002
5. जम्मू–कश्मीर और भारत चीन सम्बन्ध, लेखकः डॉ. कुमार वर्मा पंकज
ISBN 978–93–89043–87–7, प्रकाशकः सत्यम पब्लिशिंग हाऊस उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059
6. भारत–पाक राजनीति एवं सामाजिक सम्बन्धों का इतिहास, लेखकः पवार संजय
ISBN 978–93–83386–29–1, प्रकाशकः वंदना पब्लिकेशन्स दरियागंज, नई दिल्ली–110002
7. भारत–नेपाल सम्बन्ध प्रमुख एवं परिधिगत शक्ति के परिप्रेक्ष्य में एक अवलोकन, लेखकः डॉ. कुमारी प्रवेश, ISBN 978–81–7555–734–5, प्रकाशकः यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन दरियागंज, नई दिल्ली–110002
8. दक्षिण एशियाई देशों की राजनीति, प्रकाशन– 2019, लेखक– डॉ पंवार नलिन सिंह
ISBN 978–93–80565–52–I, प्रशांत पब्लिशिंग हाऊस, सी–34, 28 फुटा रोड़, गली नं. 3 वेस्ट करावल नगर दिल्ली– 110094
9. भारत–पाक सम्बन्ध विवादों के आईने में, प्रकाशन– 2012, लेखक– डॉ शुक्ल कृष्णानन्द
ISBN 978–81–7445–637–3, मोहित पब्लिकेशन्स, 4675/21 गणपति भवन, अंसारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली– 110002
10. इंटरनेट।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 133-138
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਇਸਤਰੀ ਪੱਖ

ਡਾ.ਮਨਿੰਦਰਜੀਤ ਕੌਰ, ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,
ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ, ਦਸਮੇਸ਼ ਗਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ ਚੱਕ ਅੱਲ੍ਹਾ,ਮੁਕੇਰੀਆਂ

ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਨੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਸਤਿਕਾਰ-ਯੋਗ ਰੁਤਬਾ ਪ੍ਰਦਾਨ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਔਰਤਾਂ ਨੇ ਹਰ ਕਾਰਜ ਵਿੱਚ ਵੱਧ ਚੜ੍ਹ ਕੇ ਯੋਗਦਾਨ ਪਾਇਆ ਹੈ। ਕਿਸੇ ਦੀ ਉਨਤੀ ਦੀ ਪਹਿਚਾਨ ਉਸ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਸਮੇਂ ਤੇ ਸਥਿਤੀ ਤੇ ਆਧਾਰਿਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ। ਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਮਾਤ-ਭੂਮੀ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਮਾਤ-ਭਾਸ਼ਾ ਕਹਿਣਾ ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਵਡਿਆਈ ਦੀ ਪ੍ਰਤੀਕ ਹੈ। ਵੈਦਿਕ ਕਾਲ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦਾ ਬੜਾ ਉਚੱਤਮ ਸਥਾਨ ਰਿਹਾ ਸੀ। ਕੋਈ ਵੀ ਯੱਗ ਜਾਂ ਕਾਰਜ ਔਰਤ ਤੋਂ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਸੰਪੂਰਨ ਨਹੀਂ ਸੀ ਹੁੰਦਾ। ਮੰਨੂ ਸਿਧਾਂਤ ਨੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਮਿੱਟੀ ਵਿੱਚ ਰੋਲ ਦਿੱਤਾ। ਇਸ ਪ੍ਰਭਾਵ ਸਦਕਾ ਸਮੁੱਚਾ ਵਾਤਾਵਰਣ ਉੱਥਲ-ਪੁੱਥਲ ਹੋ ਗਿਆ। "ਭਾਰਤੀ ਸਮਾਜ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਛੋਟੀ ਇਕਾਈ ਪਰਿਵਾਰ ਹੈ ਜਿਸ ਦੀ ਆਧਾਰਸ਼ਿਲਾ ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਆਸ਼ਰਮ ਹੈ। ਗ੍ਰਹਿਸਥ ਆਸ਼ਰਮ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਨਰ ਅਤੇ ਨਾਰੀ ਜੋ ਸ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਦੇ ਦੋ ਮੂਲ ਬਿੰਦੂ ਹਨ। ਦੋਹਾਂ ਦੇ ਸੰਯੋਗ ਨਾਲ ਹੰਦਾ ਹੈ।"1 ਮੱਧਕਾਲ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦਾ ਕੰਮ ਸੀ ਮਰਦ ਨੂੰ ਖੁਸ਼ ਕਰਨਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਸਮਾਜਿਕ ਨਿਰਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਜ਼ੁਲਮ ਸਮੇਂ ਸਮਾਜ ਦੇ ਸੁਧਾਰ ਲਈ ਸਮਾਜਿਕ ਅਤੇ ਧਾਰਮਿਕ ਲਹਿਰਾਂ ਦਾ ਜਨਮ ਲੈਣਾ ਸੁਭਾਵਿਕ ਸੀ। ਬਾਹਰਲੇ ਹਮਲਾਵਰਾਂ ਦੇ ਹਮਲਿਆਂ ਕਾਰਨ ਔਰਤ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਬਦ ਤੋਂ ਬਦਤਰ ਹੁੰਦੀ ਗਈ। ਮਰਦ ਨੇ ਆਪਣੀ ਵਡਿਆਈ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰ ਲਈ ਅਤੇ ਬਹੁ-ਪਤਨੀਵਾਦ ਦਾ ਰਿਵਾਜ ਬੱਲ ਪਿਆ।" ਕਾਨੂੰਨ ਘੜਿਆਲ ਸਿਮ੍ਰਤੀ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਦਾ ਰਚਨਾਹਾਰਿਆਂ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਪੁਰਸ਼ ਦੀ ਗੁਲਾਮ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ।2 "ਇਸਾਈ ਮਤ ਵਿੱਚ ਵੀ ਧਾਰਮਿਕ ਪੁਰਸ਼ਾਂ ਨੂੰ ਇਸਤਰੀ ਤੋਂ ਦੂਰ ਰਹਿਣ ਲਈ ਸਲਾਹ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਸੇਂਟ ਪਾਲ ਲਿਖਦੇ ਹਨ, ਚੰਗਾ ਹੈ ਜੋ ਆਦਮੀ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਛੁਹਵੇ ਵੀ ਨਾ। ਯਹੂਦੀਆਂ ਵਿੱਚ ਤੇ ਇਹਨਾਂ ਦੇ ਨਿੱਕੇ ਮੁੰਡਿਆਂ ਦੀ ਇੰਝ ਅਰਦਾਸ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, "ਹੇ ਰੱਬਾ! ਤੇਰਾ ਮੈਂ ਸ਼ੁਕਰ ਕਰਦਾ ਹਾਂ, ਜਿਸਨੇ ਮੈਨੂੰ ਨਾ ਕਾਫ਼ਰ ਪੈਦਾ ਕੀਤਾ ਅਤੇ ਨਾ ਹੀ ਇਸਤਰੀ ਦਾ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ।"3 ਅਰਸਤੂ ਜਿਹੇ ਜਗਤ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਫਿਲਾਸਫਰ ਨੇ ਵੀ ਕਿਹਾ, "ਇਸਤਰੀ ਇੱਕ ਅਧੂਰਾ ਇਨਸਾਨ ਹੈ। ਵਿਕਾਸ ਦੇ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀਕੋਣ ਤੋਂ ਇਸਤਰੀ ਮਰਦ ਨਾਲੋਂ ਨੀਵੀਂ ਪਉੜੀ ਉੱਤੇ ਖੜ੍ਹੀ ਹੈ। ਇਸਤਰੀ ਦੀ ਇੱਛਾ-ਸ਼ਕਤੀ ਕਮਜ਼ੋਰ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇਸ ਲਈ ਇਸ ਨੂੰ ਆਜ਼ਾਦ ਨਹੀਂ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।"4 ਸਮਾਜਿਕ ਸਥਿਤੀ ਨੂੰ ਵੇਖਦਿਆਂ ਹੀ ਸਾਰਾ ਵਾਤਾਵਰਣ ਇਸਤਰੀ ਪ੍ਰਤੀ ਘ੍ਰਿਣਾ ਵਾਲਾ ਹੀ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਸਿਰਫ਼ ਗੁਰਮਤਿ ਕਾਵਿਧਾਰਾ ਸ਼ੁਰੂ ਹੋਣ ਤੇ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਨੇ ਇਹਨਾਂ ਗਲਤ ਪੁਰਾਤਨ ਵਿਚਾਰਾਂ ਦਾ ਖੰਡਨ ਕਰਕੇ ਇਸਤਰੀ ਤੇ ਪੁਰਸ਼ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਦਰਜਾ ਦਿੱਤਾ। ਉਹਨਾਂ ਦਾ ਮਤ ਸੀ ਚੰਗੇ ਕਰਮਾਂ (ਕੰਮ) ਦਾ ਮੁੱਲ ਅੱਗੇ ਦਰਗਾਹ ਵਿੱਚ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਜੇਕਰ ਕਰਮ ਚੰਗੇ ਹਨ

ਤੇ ਉਸਨੂੰ ਉਹੋ ਜਿਹਾ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਣਾ ਹੈ ਭਾਵੇਂ ਉਹ ਪੁਰਸ਼ ਹੈ ਜਾਂ ਇਸਤਰੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ "ਆਸਾ ਦੀ ਵਾਰ" 19ਵੀਂ ਪਉੜੀ ਦੇ ਸਲੋਕ ਵਿੱਚ ਕਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਮਨੁੱਖ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿੱਚ ਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਔਰਤ ਨਾਲ ਹੀ ਉਸਦਾ ਰਿਸ਼ਤਾ ਅਤੇ ਵਿਆਹ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਔਰਤ ਤੋਂ ਹੀ ਹੋਰਨਾਂ ਨਾਲ ਰਿਸ਼ਤੇਦਾਰੀ ਬਣਦੀ ਹੈ, ਮਨੁੱਖ ਜੀਵਨ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦੀ ਇੰਨੀ ਲੋੜ ਮਹਿਸੂਸ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਕਿ ਜੇ ਇੱਕ ਔਰਤ ਮਰ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਮਨੁੱਖ ਹੋਰ ਔਰਤ ਦੀ ਦੇਖ-ਭਾਲ ਸ਼ੁਰੂ ਕਰ ਦਿੰਦਾ ਹੈ।" ਜਿਸ ਔਰਤ ਨੇ ਰਾਜਿਆਂ (ਭਗਤਾਂ, ਫਿਲਾਸਫਰਾਂ, ਸੂਰਮਿਆਂ) ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ ਹੈ, ਭਲਾ ਉਸੇ ਨੂੰ, ਮੰਦਾ ਕਿਵੇਂ ਆਖਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਦੀ ਨਜ਼ਰਾਂ ਵਿੱਚ ਤਾਂ ਉਹੀ ਮੁੱਖ (ਭਾਵ ਇਸਤਰੀ ਹੋਵੇ ਜਾਂ ਪੁਰਸ਼) ਉੱਜਲ ਹਨ।"5

ਸਹਾਇਕ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ,ਪੰਜਾਬੀ ਵਿਭਾਗ,ਦਸਮੇਸ਼ ਗਰਲਜ਼ ਕਾਲਜ,ਮੁਕੇਰੀਆਂ

ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਇਹਨਾਂ ਵਿਚਾਰਾਂ ਨੂੰ ਅੱਗੇ ਤੋਰਦਿਆਂ ਹੋਇਆਂ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਬੇਟੀ ਬੀਬੀ ਅਮਰੋ ਦੀ ਸੁਰੀਲੀ ਆਵਾਜ਼ ਵਿੱਚ ਗੁਰਬਾਣੀ ਦਾ ਪਾਠ ਸੁਣ ਕੇ ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ ਦੀ ਕਾਇਆ ਕਲਪ ਹੋ ਗਈ ਸੀ ਤੇ ਉਹ ਗੁਰੂ ਘਰ ਦੇ ਸੁਰਪਾਲ ਬਣ ਗਏ।"6 ਗੁਰੂ ਅਮਰਦਾਸ ਜੀ ਨੇ ਬਹੁ-ਵਿਆਹ ਤੇ ਸਤੀ ਪ੍ਰਥਾ ਦਾ ਵਿਰੋਧ ਕੀਤਾ। ਵਿਧਵਾ ਵਿਆਹ ਤੇ ਅੰਤਰ ਜਾਤਿ ਵਿਆਹ ਦੀ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਦਿੱਤੀ। "ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ 22 ਮੰਜੀਆਂ ਦੇ ਪ੍ਰਚਾਰਕਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਵੀ ਤਿੰਨ ਮੰਜੀਆਂ ਦੀਆਂ ਪ੍ਰਚਾਰਕ ਇਸਤਰੀਆਂ ਹੀ ਸਨ। ਇਸਤਰੀ ਦਾ ਇੱਜ਼ਤ-ਮਾਣ ਕਰਨ ਦੇ ਸੰਕੇਤ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਦੀਆਂ ਵਾਰਾਂ ਵਿੱਚ ਮਿਲਦਾ ਹੈ, "ਦੇਖਿ ਪਰਾਈਆਂ ਚੰਗੀਆਂ ਮਾਵਾਂ ਭੈਣਾਂ ਧੀਆਂ ਜਾਵੈ।"7 ਬੀਬੀ ਭਾਨੀ ਜੀ ਨੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕਰਕੇ ਵਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ। ਪਿਤਾ ਜੀ ਦੀ ਸੇਵਾ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਫਿਰ ਲੰਗਰ ਪਕਾਉਣਾ ਤੇ ਸੰਗਤਾਂ ਦੀ ਸੇਵਾ ਵਿੱਚ ਲੀਨ ਰਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਜੇਕਰ ਮਾਤਾ ਖੀਵੀ ਜੀ (ਪਤਨੀ ਗੁਰੂ ਅੰਗਦ ਦੇਵ ਜੀ) ਠੰਡੇ ਤੇ ਮਿੱਠੇ ਸੁਭਾਉ ਦੀ ਮਾਲਕ ਸੀ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਸੱਤੇ ਤੇ ਬਲਵੰਡ ਨੇ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਵਿੱਚ ਮਾਤਾ ਖੀਵੀ ਦੀ ਮਹਿਮਾ ਦਾ ਵਿਖਿਆਨ ਕੀਤਾ:-

"ਬਲਵੰਡ ਖੀਵੀ ਨੇਕ ਜਨ ਜਿਸੁ ਬਹੁਤੀ ਛਾਉ ਪਤ੍ਰਾਲੀ॥
ਲੰਗਰਿ ਦਉਲਤਿ ਵੰਡੀਐ ਰਸੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਖੀਰਿ ਘਿਆਲੀ॥"8

"ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਅਰਜਨ ਦੇਵ ਜੀ ਦੀ ਪਤਨੀ ਮਾਤਾ ਗੰਗਾ ਨੇ ਕਈ ਮੁਸੀਬਤਾਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਦੇ ਹੋਏ ਫਿਰ ਬਾਬਾ ਬੁੱਢਾ ਜੀ ਤੋਂ ਵਰ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਕੇ ਗੁਰੂ ਹਰਿਗੋਬਿੰਦ ਜੀ ਨੂੰ ਜਨਮ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਹਰਿਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੂੰ ਪ੍ਰਿੰਥੀ ਚੰਦ ਨੇ ਮਰਵਾਉਣ ਦੇ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਪਰ ਮਾਤਾ ਦਾ ਗੁਰੂ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਹਮੇਸ਼ਾ ਅੱਟਲ ਰਿਹਾ।"9 ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਹਰਿਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਪਤਨੀਆਂ ਮਾਤਾ ਦਮਦੋਰੀ, ਮਾਤਾ ਨਾਨਕੀ, ਮਾਤਾ ਕ੍ਰਿਸ਼ਨ ਕੌਰ ਹੋਈਆਂ ਹਨ। ਮਾਤਾ ਨਾਨਕੀ ਦੇ ਕੁੱਖੋਂ ਗੁਰੂ ਤੇਗ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਨੇ ਜਨਮ ਲਿਆ ਤੇ ਬੀਬੀ ਨਾਨਕੀ ਸਬਰ ਸੰਤੋਖ ਵਾਲੀ ਇਸਤਰੀ ਸੀ ਜਿਸ ਨੇ ਔਲਾਦ ਦਾ ਮੂੰਹ ਬਹੁਤ ਦੇਰ ਬਾਅਦ ਵੇਖਿਆ। ਮਾਤਾ ਨਾਨਕੀ ਜੀ ਦੇ ਸਦਕਾ ਹੀ ਗੁਰੂ ਤੇਗ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਵਿੱਚ ਬੜੀ ਨਿਮਰਤਾ ਪਾਈ ਜਾਂਦੀ ਸੀ ਜਿਸ ਕਰਕੇ ਉਹ ਹਮੇਸ਼ਾ ਹੀ ਭਗਤੀ ਵਿੱਚ ਲੀਨ ਰਹਿੰਦੇ। ਗੁਰੂ ਹਰਿਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਔਰਤ ਨੂੰ ਆਦਮੀ ਦਾ ਈਮਾਨ ਦੱਸਿਆ। ਆਪ ਜੀ ਦੇ ਮਨ ਵਿੱਚ ਇਸਤਰੀ ਲਈ ਅਥਾਹ ਪਿਆਰ ਤੇ ਸਤਿਕਾਰ ਸੀ। "ਦੁਨੀਆਂ ਦੇ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਧਰਮਾਂ ਵਿੱਚੋਂ ਸਭ ਤੋਂ ਛੋਟੀ ਉਮਰ ਦਾ ਧਰਮ ਹੈ ਅਤੇ ਇਹ ਮੂਲ ਸਿਧਾਂਤ ਅਨੁਸਾਰ ਪੂਰੇ ਤੌਰ ਤੇ ਇਸ਼ਵਰਵਾਦੀ ਧਰਮ ਹੈ। ਇਸ ਦਾ ਜਨਮ (1469-1539 ਨਾਲ ਹੋਇਆ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਨਿਵੇਕਲੇਪਨ ਦਾ ਸਪਸ਼ਟ ਰੂਪ ਅਰੰਭ ਤੋਂ ਹੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਬਾਣੀ ਵਿੱਚ ਪ੍ਰਗਟ ਹੋਇਆ ਹੈ।"10

ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਨੇ ਤਾਂ ਇਸਤਰੀ ਦੇ ਅੰਦਰ ਘਰ ਕਰ ਚੁੱਕੀ ਹੀਣਤਾ ਦੀ ਭਾਵਨਾ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਨ ਲਈ ਉਸਨੂੰ ਪੰਜ ਕਕਾਰ ਧਾਰਨ ਕਰਨ ਦੇ ਪੁਰਸ਼ਾਂ ਨਾਲ ਇੱਕੋ ਬਾਟੇ ਵਿੱਚ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਦਾ ਅਧਿਕਾਰ ਦੇ ਕੇ ਉਸਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਕੌਰ ਲਗਾਇਆ ਅਰਥਾਤ ਉਸਨੂੰ ਸ਼ੇਰਨੀ ਬਣਾਇਆ।ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦਸਮੇਂ ਪਾਤਸ਼ਾਹ ਜੀ ਦਾ ਜਨਮ ਪਟਨਾ ਸਾਹਿਬ (ਬਿਹਾਰ) ਵਿੱਚ ਹੋਇਆ। ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਪੁੱਤਰਾਂ ਦੇ ਦਾਨੀ, ਸਰਬੰਸ ਖਾਲਸਾ, ਮਹਾਨ ਸ਼ਖਸੀਅਤ, ਅਣਥਕ ਯੋਧਾ, ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਦਾ ਸਰੋਤ, ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦਾ ਆਗਮਨ ਕਰਨ ਵਾਲਾ ਲਾਸਾਨੀ ਰੂਪ ਮੰਨਿਆਂ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। "ਪੰਜਾਬ ਦੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਦਾ ਆਗਮਨ ਇੱਕ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਮਹੱਤਵ ਦਾ ਲਖਾਇਕ ਹੈ। ਆਪ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਦੁਆਰਾ ਸ਼ੁਰੂ ਕੀਤੇ ਗਏ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਨੂੰ ਅੰਤਿਮ ਛੋਹਾਂ ਦੇ ਕੇ ਇਸ ਨੂੰ ਸੰਪੂਰਨ ਬਣਾ ਦਿੱਤਾ।11 ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਜੀ ਦੇ ਅਰੰਭੇ ਕੰਮਾਂ ਨੂੰ ਸੰਪੂਰਨ ਰੂਪ ਵਿਚ ਸਿਖਰਾਂ ਤੇ ਲਿਜਾਕੇ 1699 ਈ: ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਸਿਰਜਨਾ ਦੀ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਕਾਰਜ ਮੁਕੰਮਲ ਕੀਤਾ। ਪਟਨੇ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਆਨੰਦਪੁਰ ਸਾਹਿਬ ਆ ਗਏ ਤੇ ਉੱਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਫਾਰਸੀ, ਬ੍ਰਿਜ਼ ਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਦੀ ਵਿੱਦਿਆ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤੀ। "ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਨੇ ਪਿਤਾ ਦੀ ਸ਼ਹੀਦੀ ਸਮੇਂ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਉਮਰ ਨੌ ਵਰ੍ਹਿਆਂ ਦੀ ਸੀ।"12 ਪਿਤਾ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਸਾਥ ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਮਾਤਾ ਨਾਲ ਸੀ। ਜੋ ਕਿ ਬਹੁਤ ਹੀ ਨੇਕ ਤੇ ਨਿਮਰਤਾ ਵਾਲੀ ਇਸਤਰੀ ਸੀ। "ਰਾਜੇ ਵਲੋਂ ਮਿਲੀ ਜ਼ਮੀਨ ਉੱਤੇ 'ਪਾਉਂਟਾ' ਨਾਂ ਦਾ ਕਿਲ੍ਹਾ ਉਸਾਰਿਆ ਗਿਆ। ਉਥੇ ਜਮਨਾ ਦਰਿਆ ਤੇ ਸੁੰਦਰ ਕੰਢਿਆ ਤੇ ਬੈਠ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਆਪਣੇ ਦੇਸ਼ ਵਾਸੀਆਂ ਨੂੰ ਪਾਪਾਂ ਅਤੇ ਦੁੱਖ ਤੋਂ ਮੁਕਤ ਕਰਾਉਣ ਦਾ ਰਾਹ ਸੋਚਿਆ।"13

ਜੇਕਰ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਹੋਂਦ ਵਿੱਚ ਆਉਣ ਪਹਿਲਾਂ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਸੰਸਾਰ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਧਰਮਾਂ ਨੂੰ ਵਾਚਣ ਤੇ ਪਤਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ ਕਿ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਢੰਗ ਨਾਲ ਤ੍ਰਿਸਕਾਰਿਆ ਜਾਂਦਾ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਦਸਮ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਬਹੁਤ ਵਿਸ਼ਾਲ ਸੀ। ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਪ੍ਰਚਾਰ ਵਿੱਚ ਇਸਤਰੀ-ਪੁਰਸ਼ ਦਾ ਭੇਦ ਨਹੀਂ ਰੱਖਿਆ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਜੀ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਨਾਰੀ ਦਾ ਸਥਾਨ ਤੇ ਰੁਤਬਾ ਬਹੁਤ ਉੱਚਾ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦਾ ਬਚਪਨ ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਨਾਲ ਵਧੇਰੇ ਬਤੀਤ ਹੋਇਆ। ਜਿਸ ਔਰਤ ਨੇ ਆਪਣੇ ਪਤੀ ਤੇ ਪੋਤਰਿਆਂ ਦੀ ਸ਼ਹੀਦੀ ਆਪਣੇ ਅੱਖੀ ਵੇਖੀ ਹੋਵੇ ਉਹ ਕਿੰਨੀ ਵਿਸ਼ਾਲ ਹਿਰਦੇ ਦੀ ਮਾਲਕ ਹੈ। "ਗੁਰੂ ਜੀ ਨੇ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਅਤੇ ਫ਼ਾਰਸੀ ਦੀ ਪੜਾਈ ਕੀਤੀ। ਗੁਰਮੁੱਖੀ ਵਿੱਚ ਕਾਫੀ ਸਾਰੀ ਗੁਰਬਾਨੀ ਆਪ ਜੀ ਨੇ ਮਾਤਾ ਜੀ ਪਾਸੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਹੀ ਪੜ੍ਹ ਲਈ ਹੋਈ ਸੀ।"14 ਮਾਤਾ ਜੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਹਰ ਪੱਖੋਂ ਸਾਂਭ-ਸੰਭਾਲ ਕਰਨ ਦੇ ਨਾਲ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਅੰਦਰ ਸਿੱਖੀ ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਕੀਤਾ। ਬਚਪਨ ਵਿੱਚ ਹੀ ਉਹ ਨਿਰਵੈਰਤਾ ਅਤੇ ਨਿਡਰਤਾ ਦੇ ਗੁਣਾਂ ਨਾਲ ਭਰਪੂਰ ਸਨ। ਮਸੰਦਾਂ ਅਤੇ ਸ਼ਰੀਕਾਂ ਦੇ ਇਰਾਦੇ ਠੀਕ ਨਾ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਵੀ ਮਾਤਾ ਜੀ ਨੇ ਬੜੇ ਧੀਰਜ ਨਾਲ ਆਉਣ ਵਾਲੇ ਸੰਕਟਾਂ ਦਾ ਟਾਕਰਾ ਕਰਨ ਲਈ ਮਨ ਬਣਾ ਕੇ ਰੱਖਿਆ। "ਭਾਰਤ ਦੀ ਇਸਤਰੀ ਇੰਨਾ ਵੀ ਨਹੀਂ ਸਹਾਰ ਸਕਦੀ ਪਰ ਗੁਰੂ ਤੇਗ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਤਾਂ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋਣ ਵਾਸਤੇ ਜਾ ਰਹੇ ਸਨ। ਉਹ ਵਿਦਾਇਗੀ ਮਾਤਾ ਜੀ ਨੇ ਕਿਸ ਹੌਂਸਲੇ ਨਾਲ ਸਹਾਰੀ ਹੋਵੇਗੀ। ਇਸ ਬਾਰੇ ਕੇਵਲ ਕਿਆਸ ਹੀ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ; ਮਿਸਾਲ ਨਹੀਂ ਦਿੱਤੀ ਜਾ ਸਕਦੀ।"15 ਇਹਨਾਂ ਪੱਖਾਂ ਨੂੰ ਜਦੋਂ ਅਸੀਂ ਵੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਗੁਰੂ ਜੀ ਉੱਤੇ ਆਪਣੀ ਮਾਤਾ ਦਾ ਵਧੇਰੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਸੀ। ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਰਹਿ ਕੇ ਜੀਵਨ ਦੀ ਕਠੋਰ ਮੁਸੀਬਤਾਂ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕੀਤਾ ਤੇ ਆਪਣੇ ਇਰਾਦੇ ਮਜ਼ਬੂਤ ਕੀਤੇ। ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੇ ਸਿਰਜਣਾ ਸਮੇਂ ਵੀ ਕਈ ਲੋਕ ਮਾਤਾ ਜੀ ਕੋਲ ਆਏ ਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਕਤਲ ਕਰ ਰਹੇ ਹਨ। ਮਾਤਾ ਜੀ ਦਾ ਧੀਰਜ ਸੀ ਪ੍ਰਸ਼ਾਨ ਨਹੀਂ ਹੋਏ। ਮਾਤਾ ਜੀ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਜਾਣਦੇ ਸਨ ਕਿ ਉਹ ਕੋਈ ਵੀ ਮਾੜਾ ਕੰਮ ਨਹੀਂ ਕਰਨਗੇ। ਬਿਰਧ ਅਵਸਥਾ ਵਿੱਚ ਵੀ ਉਹ ਆਪਣੇ ਛੋਟੇ -2 ਪੋਤਰਿਆਂ ਨਾਲ ਗੰਗੂ ਦੇ ਨਮਕ-ਹਰਾਮੀ ਵੱਲ ਸਾਂਤ ਹੋ ਕੇ ਵੇਖਦੇ ਰਹੇ। ਦੁੱਖ ਤੇ ਸੁੱਖ ਬਰਾਬਰ ਕਰਕੇ ਜਾਣਦੇ। ਹਰ ਸਮੇਂ ਸਿੱਖ ਆਪਣੀ ਅਰਦਾਸ

ਵਿੱਚ ਇਹੀ ਕਹਿੰਦੇ ਹਨ। ਸਾਡੀਆਂ ਮਾਵਾਂ, ਭੈਣਾਂ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੇ ਜੇਲ੍ਹਾਂ ਵਿੱਚ ਸਵਾ-ਸਵਾ ਮਣ ਦੇ ਪੀਸਣ ਪੀਸੇ, ਮਾਸੂਮ ਬੱਚਿਆਂ ਦੇ ਟੋਟੇ ਕਰਵਾ ਕੇ ਗਲਾਂ ਵਿੱਚ ਹਾਰ ਪੁਵਾਏ, ਮੁੱਖ ਤੋਂ ਸੀ ਨਹੀਂ ਕੀਤੀ, ਧਰਮ ਨਹੀਂ ਹਾਰਿਆ, ਸਿੱਖੀ ਸਿਦਕ ਬਣਾ ਕੇ ਰੱਖਿਆ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਕਮਾਈ ਦਾ ਧਿਆਨ ਧਰ ਕੇ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਦਾ ਨਾਮ ਜੱਪਣ ਦਾ ਉਪਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ। ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਨੇ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਧਾਰਮਿਕ ਅਤੇ ਅਧਿਆਤਮਕ ਗਿਆਨ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰਨ ਦਾ ਅਧਿਕਾਰ ਦਿੱਤਾ।

"ਗਿਆਨ ਵਿਹੂਣੀ ਪਿਰ ਮੁਤੀਆ ਪਿਰਮੁ ਨ ਪਾਇਆ ਜਾਇ।16

ਇਸ ਉਪਰੰਤ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀਆਂ ਪਤਨੀਆਂ ਮਾਤਾ ਜੀਤੋ, ਮਾਤਾ ਸੁੰਦਰ ਕੌਰ ਜੀ ਤੇ ਮਾਤਾ ਸਾਹਿਬ ਕੌਰ ਨੇ ਮਨ ਤੋਂ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਸੇਵਾ ਕੀਤੀ। ਹਰ ਸਮੇਂ ਉਹਨਾਂ ਨਾਲ ਰਹਿ ਕੇ ਆਪਣਾ ਧਰਮ ਨਿਭਾਇਆਂ। ਹਰ ਮੁਸੀਬਤ ਵਿੱਚ ਉਹ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਨਾਲ ਹੀ ਰਹੀਆਂ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਬਹੁ-ਪੱਖੀ ਸ਼ਖਸੀਅਤ ਦੇ ਦਰਸ਼ਨ ਦਾ ਉਹਨਾਂ ਦੇ ਜੀਵਨ ਤੇ ਡੂੰਘਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਪਿਆ। ਆਨੰਦਪੁਰ ਸਾਹਿਬ ਜਿੱਥੇ ਅਧਿਆਤਮਿਕਤਾ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਸੰਗੀਤ, ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਸੰਗਤਾਂ ਦੀ ਧਾਰਮਿਕ ਗਤੀਵਿਧੀਆਂ ਦਾ ਕੇਂਦਰ ਬਣ ਗਿਆ ਸੀ। ਗੁਰੂ ਪਰਿਵਾਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਘਟਨਾਵਾਂ ਦਾ ਡੱਟ ਕੇ ਮੁਕਾਬਲਾ ਕਰਦੀਆਂ। ਮਾਤਾ ਸਾਹਿਬ ਕੌਰ ਜੀ ਨੂੰ 'ਖਾਲਸਾ ਦੀ ਮਾਤਾ' ਦਾ ਖਿਤਾਬ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ। ਮਾਤਾ ਜੀ ਪੂਰੇ ਜੀਵਨ ਹੀ ਗੁਰੂ ਜੀ ਨਾਲ ਰਹੇ। ਇਹ ਆਪਣਾ ਜਿਆਦਾ ਸਮਾਂ ਪ੍ਰਭੂ ਸਿਮਰਨ ਵਿੱਚ ਬਤੀਤ ਕਰਦੇ। ਗੁਰੂ ਦਾ ਲੰਗਰ ਮਾਤਾ ਜੀ ਦੀ ਦੇਖ ਰੇਖ ਅਨੁਸਾਰ ਹੀ ਤਿਆਰ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਸੀ। ਅੱਜ ਵੀ ਇਹ ਗੋਦਾਵਰੀ ਦੇ ਕਿਨਾਰੇ ਇੱਕ ਅਤੀ ਰਮਨੀਕ ਅਸਥਾਨ ਵਿਖੇ ਰਿਹਾ। ਜਿਥੇ ਇਹ ਗੁਰਦੁਆਰਾ 'ਮਾਤਾ ਸਾਹਿਬ ਦੇਵਾ' ਸਥਿਤ ਹੈ। ਇੱਥੇ ਹੁਣ ਵੀ ਗੁਰੂ ਦਾ ਲੰਗਰ ਅਟੁੱਟ ਵਰਤਦਾ ਹੈ। ਮਾਈ ਭਾਗੋ ਜੀ ਦਾ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਬੜਾ ਪ੍ਰਮੁੱਖ ਸਥਾਨ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਮਾਈ ਭਾਗੋ ਜੀ ਆਪਣੇ ਪਿਤਾ ਨਾਲ ਗੁਰੂ ਤੇਗ ਬਹਾਦਰ ਜੀ ਦੇ ਦਰਬਾਰ ਵਿੱਚ ਦੋ ਵਾਰ ਜਾਣ ਕਰਕੇ ਗੁਰਸਿੱਖੀ ਦੀ ਪ੍ਰੇਮਣ ਤੇ ਗੁਰਸਿੱਖੀ ਦੇ ਅਸੂਲ ਧਾਰਨ ਕਰ ਲਏ। 1699ਈ: ਖਾਲਸਾ ਪੰਥ ਦੀ ਸਥਾਪਨਾ ਸਮੇਂ ਮਾਈ ਭਾਗੋ ਦੇ ਪਰਿਵਾਰਿਕ ਮੈਂਬਰਾਂ ਨੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛੱਕ ਲਿਆ। ਮਾਤਾ ਜੀ ਨੇ ਪਿੰਡ ਵਿੱਚ ਸ਼ਸਤਰ-ਵਿੱਦਿਆ ਸਿੱਖਣੀ ਆਰੰਭ ਕਰ ਦਿੱਤੀ। ਉਹ ਨੇਜ਼ਾਬਾਜ਼ੀ ਵਿੱਚ ਜਿਆਦਾ ਰੁਚੀ ਰੱਖਦੀ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀਆਂ ਜੰਗਾਂ ਵਿੱਚ ਇਹਨਾਂ ਨੇ ਵੱਧ ਚੜ੍ਹ ਕੇ ਹਿੱਸਾ ਲਿਆ। "ਭਾਗਾਂ ਵਾਲੀ ਮਾਈ ਭਾਗ ਕੌਰ ਨੇ ਦਮਦਮਾ ਸਾਹਿਬ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੇ ਨਾਲ ਰਹੀ। ਨੰਦੇੜ੍ਹ ਦੇ ਸਾਰੇ ਕੌਤਕ ਮਾਈ ਜੀ ਨੇ ਦੇਖੇ। ਬੰਦਾ ਸਿੰਘ ਦੀ ਤਿਆਰੀ ਸਮੇਂ ਵੀ ਮਾਈ ਜੀ ਉੱਥੇ ਹੀ ਸਨ। ਮਰਦ ਪਹਿਰੇਦਾਰਾਂ ਦੇ ਹੁੰਦਿਆਂ-ਸੁੰਦਿਆਂ ਗਾਫ਼ਲ ਨਹੀਂ ਸੀ ਹੁੰਦੀ ਤੇ ਰਾਤਾਂ ਜਾਗ ਕੇ ਹੱਥ ਵਿੱਚ ਬਰਛੀ ਲਈ ਚੌਕੀਆਂ ਦਿੰਦੀ ਸੀ।"17 ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਅਸੀਂ ਕਹਿ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਸਿੱਖ ਬੀਬੀਆਂ ਨੇ ਗੁਰੂ ਘਰ ਵਿੱਚ ਵਿਸ਼ਵਾਸ ਰੱਖ ਕੇ ਗੁਰੂ ਜੀ ਪੂਰਨ ਰੂਪ ਵਿੱਚ ਸਾਥ ਦਿੱਤਾ।

ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਵਿਕਾਸ ਅਤੇ ਇਤਿਹਾਸ ਵਿੱਚ ਸਪੱਸ਼ਟ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਜੀ ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਤੱਕ ਤਿਆਗ ਦੀ ਮੂਰਤ ਸਿੱਖ ਬੀਬੀਆਂ ਨੇ ਇੱਕ ਅਜਿਹੇ ਜੀਵਨ ਦਰਸ਼ਨ ਦੀ ਨਿਸ਼ਾਨਦੇਹੀ ਕੀਤੀ, ਜਿਸ ਸਦਕਾ ਮਨੁੱਖ ਦ੍ਰਿੜ ਤੇ ਸਮਾਜਿਕ ਕਦਰਾਂ-ਕੀਮਤਾਂ ਉੱਪਰ ਚਲ ਸਕੇ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਦੇ ਅਨੁਸਾਰ ਹੀ ਬੀਬੀ ਨੂੰ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਰੁਤਬਾ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੋਇਆ। ਗੁਰੂ ਘਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਔਰਤ ਨੇ ਗੁਰੂ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਸੇਵਾ ਭਾਵਨਾ ਦਾ ਸਾਥ ਦਿੱਤਾ। "ਇੱਥੇ ਗੁਰੂ ਰਵੀ ਨੇ ਦਲਿਤ ਅਤੇ ਦਮਿਤ ਮਾਨਵਤਾ ਨਾਲ ਆਪਣੀ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾਈ ਪ੍ਰਤਿਬੱਧਤਾ ਦਰਸਾਉਣ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ ਹੈ।"18 "ਗੁਰੂ ਮਹਿਲਾਂ, ਗੁਰੂ ਧੀਆਂ, ਗੁਰੂ ਨੂੰਹਾਂ, ਗੁਰੂ ਘਰ ਦੀਆਂ ਸ਼ਹੀਦ ਸਿੰਘਣੀਆਂ ਦੇ ਜੋਸ਼ ਉਤਸ਼ਾਹ ਨੂੰ ਬਣਾਈ ਰੱਖ ਇੱਕ ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬ ਦੀ ਨਰੋਈ ਸੋਚ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਉਹਨਾਂ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿੱਚ

ਇਸਤਰੀ ਕਿਸੇ ਵੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦਾ ਕਾਰਜ ਕਰਨ ਦੇ ਸਮਰੱਥ ਹੈ ਤੇ ਇਸੇ ਤੱਥ ਦੀ ਯਾਹਦੀ ਭਰਦੀਆਂ ਹਨ ਗੁਰੂ ਘਰ ਨਾਲ ਸੰਬੰਧਤ ਬੀਬੀਆਂ।"19ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਦੇ ਸਮੇਂ ਔਰਤ ਬਰਾਬਰ ਦਾ ਹੱਕ ਰੱਖਦੀਆਂ ਸਨ। ਦਸਮ ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਮਾਤਾ ਸਾਹਿਬ ਕੌਰ ਨੂੰ ਖਾਲਸੇ ਦੀ ਮਾਤਾ ਦੀ ਉਪਾਧੀ ਦੇ ਕੇ ਔਰਤ ਦਾ ਮਾਣ ਵਧਾਇਆ ਹੈ। ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ ਹੀ ਨਹੀਂ ਸਗੋਂ ਸਮੁੱਚੇ ਗੁਰਮਤਿ ਧਾਰਾ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦਾ ਸਤਿਕਾਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਗੁਰਦੁਆਰਿਆਂ ਦੇ ਕਾਰਜ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵਿੱਚ ਉਹਨਾਂ ਨੂੰ ਅਹਿਮ ਰੋਲ ਅਦਾ ਕੀਤਾ। ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿਚ ਹਰੇਕ ਇਸਤਰੀ ਨੂੰ ਪੂਰਨ ਧਾਰਮਿਕ ਅਜ਼ਾਦੀ ਹੈ। ਉਹ ਗੁਰਦੁਆਰੇ ਬਗ਼ੈਰ ਕਿਸੇ ਰੋਕ ਦੇ ਜਾ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਕੀਰਤਨ ਤੇ ਪਾਠ ਕਰ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਵਿਦਿਆ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕਰ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਉਸਨੂੰ ਮਰਦ ਦੇ ਬਰਾਬਰੇ ਹੀ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਛਕਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਸੈਂਕੜੇ ਵਰ੍ਹਿਆਂ ਤੋਂ ਲਿਤਾੜੀ ਜਾਂਦੀ ਇਸਤਰੀ ਜਾਤੀ ਨੂੰ ਗੁਰਮਤਿ ਨੇ ਉਤਾਂਹ ਚੁੱਕਿਆ ਅਤੇ ਉਸ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਮਰਦ ਦੇ ਬਰਾਬਰ ਸਨਮਾਨਯੋਗ ਥਾਂ ਦਿੱਤੀ।ਗੁਰੂ ਸਾਹਿਬਾਨ ਦੇ ਮਹਾਨ ਉਪਦੇਸ਼ਾਂ ਤੇ ਚੱਲੇ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਬੀਬੀ ਅੱਜ ਦੇ ਜੀਵਨ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਸਰਗਰਮ ਭੂਮਿਕਾ ਨਿਭਾ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਗੁਰੂ ਜੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਹੀ ਅਨੇਕਾਂ ਬੀਬੀਆਂ ਜੰਗਾਂ ਵਿਚ ਜੂਝ ਕੇ ਸ਼ਹੀਦ ਹੋਈਆਂ। ਜੇ ਕੁਰਬਾਨੀ ਦੇਣ ਦਾ ਮੌਕਾ ਆਇਆ ਤਾਂ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੇ ਅਸਹਿ ਤੇ ਅਕਹਿ ਕਸ਼ਟ ਸਹਾਰ ਕੇ ਸਿੱਖੀ ਦੀ ਸ਼ਾਨ ਨੂੰ ਉੱਚਾ ਰੱਖਿਆ। ਅਜੋਕੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਧਾਰਮਿਕ ਸਮਾਗਮਾਂ ਵਿੱਚ ਬੀਬੀਆਂ ਹਰੇਕ ਮੌਕੇ ਤੇ ਵੱਧ ਚੜ ਕੇ ਆਪਣਾ ਯੋਗਦਾਨ ਦੇ ਰਹੀਆਂ ਹਨ। ਚਾਹੇ ਉਹ ਘਰ ਦੀ ਚਾਰਦੀਵਾਰੀ ਹੈ ਜਾਂ ਬਾਹਰ ਹੈ ਉਸਨੇ ਕਦੇ ਵੀ ਆਪਣੇ ਪੈਰ ਪਿਛਾਂ ਨਹੀਂ ਕੀਤੇ। ਦੁਨੀਆਂ ਭਰ ਦੇ ਧਰਮਾਂ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਇਸਤਰੀ ਨੇ ਉਚੱਤਮ ਸਥਾਨ ਪ੍ਰਾਪਤ ਕੀਤਾ ਹੈ। ਅਜੋਕੇ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ ਸਿੱਖ ਇਸਤਰੀਆਂ ਨੇ ਕਈ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਮੁਹਾਰਤ ਹਾਸਲ ਕੀਤੀ ਹੈ।

ਹਵਾਲੇ ਤੇ ਟਿੱਪਣੀਆਂ:-

1. ਦਲਜੀਤ ਸਿੰਘ: ਮੱਧਕਾਲੀਨ ਸਮਾਜ ਵਿੱਚ ਔਰਤ ਦਾ ਸਥਾਨ 2012 , ਪਟਿਆਲਾ, ਪੰਨਾ 570
2. ਡਾ. ਜੋਧ ਸਿੰਘ (ਸੰਪਾਦਕ): ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿਸ਼ਵ ਕੋਸ਼, ਭਾਗ ਦੂਜਾ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀ: ਪਟਿਆਲਾ-ਪੰਨਾ (468-69)
3. ਗੁਰਚਰਨ ਸਿੰਘ : ਗੁਰਮਤਿ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ 1 ਨਵੰਬਰ 1974, ਪੰਨਾ 94
4. ਪ੍ਰੋ. ਪ੍ਰੀਤਮ ਸਿੰਘ : ਸਿੱਖ ਵਿਚਾਰਧਾਰਾ, ਪੰਨਾ 139
5. ਕਿਰਪਾਲ ਸਿੰਘ ਚੰਦਨ (ਸੰਪਾਦਕ), ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸਿੱਖ ਬੀਬੀਆਂ,ਸਿੱਖ ਮਿਸ਼ਨਰੀ ਲੁਧਿਆਣਾ, ਪੰਨਾ 11
6. ਕਿਰਨਦੀਪ ਕੌਰ: ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿੱਚ ਇਸਤਰੀ ਦਾ ਸੰਕਲਪ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀ. ਪਟਿਆਲਾ, ਪੰਨਾ 600
7. ਵਾਰਾਂ ਭਾਈ ਗੁਰਦਾਸ ਜੀ: ਵਾਰ 29, ਪਉੜੀ 11
8. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ, ਰਾਮ ਕਲੀ ਦੀ ਵਾਰ, ਰਾਇ ਬਲਵੰਡਿ ਤਥਾ ਡੂਮਿ ਆਖੀ – ਪੰਨਾ 967
9. ਪ੍ਰਿੰਸੀ. ਜੋਗੇਸ਼ਵਰ ਸਿੰਘ (ਡਾ.): ਧਰਮ ਪ੍ਰਚਾਰ ਕਮੇਟੀ, ਪੰਨਾ 35-36
10. ਡਾ. ਜੋਧ ਸਿੰਘ: ਸਿੱਖ ਧਰਮ ਵਿਸ਼ਵ ਕੋਸ਼ (ਪਹਿਲੀ ਸੈਂਚੀ) ਪਟਿਆਲਾ – ਪੰਨਾ 470
11. ਬ੍ਰਹਮਜਗਦੀਸ਼ ਸਿੰਘ : ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀਵਨ ਅਤੇ ਸੰਦੇਸ਼, ਵਾਰਿਸ਼ ਸ਼ਾਹ ਫਾਉਂਡੇਸ਼ਨ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਪੰਨਾ 42
12. ਸੁਰਿੰਦਰ ਸਿੰਘ ਜੌਹਲ : ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਜੀ, ਸ੍ਰੀ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਦਿੱਲੀ, ਪੰਨਾ 7

13. ਗੰਡਾ ਸਿੰਘ : ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ, ਪਬਲੀਕੇਸ਼ਨ ਬਿਊਰੋ, ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀ. ਪਟਿਆਲਾ, ਪੰਨਾ 71
14. ਮੁਖਤਿਆਰ ਸਿੰਘ ਗੁਰਾਇਆ: ਦਸ ਪਾਤਸ਼ਾਹੀਆਂ ਜੀਵਨ, ਕਾਰਜਤ ਉਪਦੇਸ਼ ਸੰਖੇਪ ਬਿਰਤਾਂਤ, ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ ਪਿੰਗਲਵਾੜਾ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਪੰਨਾ 155
15. ਕਿਰਪਾਲ ਸਿੰਘ ਚੰਦਨ : ਮਾਤਾ ਗੁਜਰੀ ਜੀ ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸਿੱਖ ਬੀਬੀਆਂ, ਪੰਨਾ 39
16. ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ: ਮਿਰੀ ਰਾਗ ਮ 3, ਪੰਨਾ 38
17. ਕਿਰਪਾਲ ਸਿੰਘ ਚੰਦਨ (ਸੰਪਾ.): ਇਤਿਹਾਸਿਕ ਸਿੱਖ ਬੀਬੀਆਂ, ਪੰਨਾ 59
18. ਜਗਬੀਰ ਸਿੰਘ (ਡਾ) : ਗੁਰਮਿਤ ਕਾਵਿ ਸਿਧਾਂਤ ਤੇ ਵਿਹਾਰ, ਚੇਤਨਾ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਲੁਧਿਆਣਾ, ਪੰਨਾ 131
19. ਦਿਲਜੀਤ ਸਿੰਘ ਬੇਦੀ: ਅਜੀਤ ਅਖ਼ਬਾਰ, ਧਰਮ ਤੇ ਵਿਰਸਾ,8 ਨਵੰਬਰ 2016 ਪੰਨਾ 1

M.Id- dr.maninderjit2016@gmail.com **Phone No. 9815545218**

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 139-141
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मन्नू भंडारी के नारीवादी साहित्य

डॉ0 सीता कुमारी, सहायक प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग पूर्णियाँ कॉलेज, पूर्णियाँ।

भारतीय नारी को मुक्ति के आन्दोलन का इतिहास बहुत पुराना है, यह अलग बात है कि तब से नारी–विमर्श था 'नारीवादी साहित्य जैसी संज्ञा से विभूषित नहीं किया गया था। किन्तु समय एवं परिस्थिति के अनुसार नारी की दशा को सुधारने एवं उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में आगे लाने के सतत् प्रयास होते रहे है। स्वतंत्रता के बाद से नारी –विमर्श एक गंभीर विचार केन्द्रित मुद्दा रहा है। किंतु विडम्बना यह रही है कि इस विषय को छूते ही बड़े–बड़े बुद्धिमान व्यक्ति मानवीयता का आवरण उतार कर पुरूष वादी सुर अलापने लगते हैं। इस चिंतकों में मन्नू भंडारी की अग्रणी भूमि रही है। जिन्होंने अपने कथा–साहित्य के माध्यम से नारी जीवन के अनेक प्रश्नों पर तर्क संगत बात की है। वर्तमान में नारी विमर्श एक ज्वलंत मुद्दा हो गया है। आज के समय में एक तरह से अब तक की परिभाषित नारी की भूमिका को बदलने वाला विमर्श भी है। इस विमर्श ने शताब्दियों से चली आ रही नारी की छवि को तोड़कर उसे आधुनिक समाज में एक अलग स्थान दिया है। इसकी व्यापकता और विस्तार को स्पष्ट रूप से विवेचित और स्थापित करने वाला साहित्य मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में आया है।

नारी समाज का केन्द्र है। नारी नारी के सामाजिक मूल्यों की परख समाज और साहित्य के पल–पल परिवर्तित परिवेश से ही हो सकती है। प्रेमचंद पूर्व युग की नारी विलास और श्रृंगार की गुड़िया मात्र थी। उनके हाथों में अपने जीवन की बागडोर नहीं थी। –वह पुरूषों के हाथ की कठपुतली थी। प्रेमचंद युग के उपन्यासों की नारी शिक्षित और जागरूकता थी, जिसे अधिकार और कर्त्तव्यों का ज्ञान था।

मन्नू भंडारी को व्यक्ति, परिवार समाज, राजनीति धर्म, प्रशासन एवं शिक्षा आदि क्षेत्रों की समस्याओं ने आलोपित किया है। मन्नू भंडारी ने पारिवारिक संबंधों की समस्याओं को दोहरे स्तर पर उद्घाटित किया है। संयुक्त परिवार के विघटन को ''ए खाने आकाश नाई'' छत बनाने वाले आदि कहानियों में तथा स्वामी उपन्यास में यथार्थता से उठाया है। मन्नू भंडारी ने दाम्पत्य विघटन से आए अकेलेपन को ''आपका बन्टी ''एक इन्य मुस्कान'' उपन्यास'' तथा ''बन्दर दराजों के साथ कहानी में सार्थकता से उठाया है।

स्वातंत्रयोत्तर भारतीय समाज में स्वतंत्रता प्राप्ति के उद्वेश्य से मोहभंग हो गया है। राजनीति में भ्रष्ट नेतृत्व वोट की नीति, आतंकवाद, भ्रष्टचार आदि का वर्चस्य है। धर्म और जाति के नाम पर राजनितिज्ञ वोट मांगते है, तथा साम्प्रदायिक दंगे करते हैं। इस परिवेश में नारी हताश व निराश है। परन्तु शिक्षा ने नारी को एक नई चेतना प्रदान की है। अब नारी शिक्षित और जागरूक होकर राजनीति में भागीदारी करने लगी है। ''आधुनिक युग में जो परिवर्तन हुआ है वह नारीवाद की ही उपज है। मन्नू भंडारी ने अपने कथा साहित्य में ''मैं हार गई हार'' आदि कहानियों में राजनीति की स्वार्थ परता''। (1)

नारी सशक्तिकरण और नारी अस्मिता पश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से हर क्षेत्र में पदापर्ण कर रही हैं। ''रेत की दीवार'' कहानी में बेरोजगारी '' यही सच है'' कहानी में साक्षात्कार के आडम्बर का चित्रण है। (2)

स्वातंत्रोत्तर भारतीय समाज में संयुक्त परिवार विघटित हुआ है और एकल परिवारों का निर्माण हो रहा है, आज परिवार का दायित्व उसके हाथों में रहता है, जिसके आश्रय में परिवार का पालन–पोषण होता है।'' पितृसत्तात्मक व्यवस्था में नारी का हर अधिकार छिन गया है तथा बेटे और बेटी में अनतर किया गया है। परिवार में नारी के साथ घरेलु हिंसा की जाती है। जिसकी शिकायत प्रायः स्त्रियां नहीं करती है। आज नौकरी करने वाली स्त्रियों को दोहरे दायित्व की पूर्ति करनी पड़ती है। (3)

इनकी कथा साहित्य में पारिवारिक चित्रण हुआ है, जिसमें पुरातन पीढ़ी और युवा पीढ़ी के विचारों में संघर्ष होता है। सामान्य परिवारों के नर–नारी जीवन स्पितियों के शिकार हो रहे हैं तथा सुख–सुविधाओं के पश्चात् भी घूटन, अकेलेपन, संत्रास का जीवन जीने के लिए विवश है।

मन्नू भंडारी ने अपने कथा साहित्य में पुरूष की अनिवार्यता को स्वीकार किया है। नारी सब कुछ होकर भी नारी है और नारी को एक साथी चाहिए, एक सहारा चाहिए,, परिवार चाहिए और बच्चे चाहिए। इसके अतिरिक्त नारी में विवाह के प्रति प्रतिरोध भी उनके कथा साहित्य में चित्रित हुआ है। (4)

''आज की नारी महत्वाकांक्षाओं, अपेक्षाओं अर्न्तद्वन्दों और तनावों में जूझती रहती है। नारी, मुक्ति की कामना करती है, किन्तु परम्परागत संस्कारों को त्यागकर कदापि नहीं। मन्नू भंडारी की नायिकायें त्रासदी से गुजरती है और समझौता वादी है। पति के विवाहेत्तर प्रेम संबंधों पर रंजना परम्परागत भारतीय नारी की तरह आंसू नहीं निकालती बल्कि पति अमर से स्वंय को मुक्त कर लेती है। लेखिका ने अमला के रूप में परित्यकता नारी का चित्रण किया है। वह मान पत्नी, प्रेयसी, मित्र आदि बनी किन्तु असफल ही रही। 'स्वामी' उपन्यास की मिनी आधुनिक नारी है। जिसमें नारी युक्ति का प्रश्न उसकी स्वतंत्रता के साथ समाप्त हो जाती है। (5)

मन्नू भंडारी की आत्मकथा में प्रेम त्रिकोण है, जिसमें मन्नू राजेन्द्र और मोती है। मन्नू भंडारी ने राजेन्द्र के सम्बध में यह स्वीकार किया है कि पति के रूप में एक नर्स चाहिए, जो पति की सेवा करती रहे, बदले में पति से कोई अपेक्षा न करे। स्त्री विमर्श के समर्थ राजेन्द्र का असली रूप देखकर लेखिका को आश्चर्य होता है। यह आत्मथा लेखिका के व्यक्तिगत और लेखकीय जीवन का कटु और धुर यथार्थ का स्पष्ट आईना है। मन्नू भंडारी की आत्मकथा में मध्यवर्गीय समाज की नारी की विडम्बनाओं, तनावों कटुताओं और समस्याओं का चित्रण है। मन्नू भंडारी स्वंय को नारीवादी लेखिका नहीं मानती पर नारी जीवन की व्यथा कथा ही लिखती है।

मन्नू भंडारी आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य के उन गिन–चुने जागरूक तथा संवेदनशील कथाकारों में हैं जिन्होंने अपनी कृतियों में ''नारी जीवन'' का सशक्त और यथार्थ चित्रण किया है। मन्नू भंडारी नारी की दशा एवं दिशा का मार्मिक चित्रण कर पुरूष के वर्चस्ववादी समाज में नारी की मुक्ति के सवाल को गंभीरता के साथ उठाती है। उन्होंने नारी–विमर्श को एक नया अर्थ देते हुए नारी अस्मिता के प्रश्नों को बड़ी गंभीरता तथा मुखरता के साथ चित्रित किया है। इसलिए आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में नारी–विमर्श को गंभीरतापूर्वक स्थापित करने का श्रेय मन्नू भंडारी को दिया जा सकता है। वह नारियों की स्थितियों, परिस्थितियों के सूक्ष्म आकलन तथा कुशल प्रस्तुतीकरण में सिद्धहस्त है, उनके रचना संसा से गुजरते हुए नारी की अस्तित्व के उन तमाम पक्षों से साक्षात्कार का अवसर मिलता है जिन्हें समझे बिना नारी के पूरे वजूद को समझ पाना कठिन है। मन्नू भंडारी का कथा संसार नारी मुक्ति आन्दोलन का बीज मंत्र है, जो नारी–विमर्श के नाम पर दिग्भ्रमित होने वालों को सही राह पर अग्रसर करता है। मन्नू भंडारी का कथा–साहित्य एवं संसार में वास्तव में नारीवादी का सम्बध में अत्यंत ही उच्च कोटि का माना जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. मैं हार गई (1957) मन्नू भंडारी, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।
2. यही सच है (1957)
3. औरत एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (2006) ज्ञानेन्द्र रावत विश्वभारती
4. प्रकाशन दिल्ली।
5. हिन्दी कहानी (1968) इन्द्रनाथ महान, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास (1976) डॉ0 नगेन्द्र एन0 पी0 एच0 नई दिल्ली।

Email Id-sitakumari10190@gmail.com मो0 नं0–8709687308

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 142-146
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

राजर्षि छत्रपति शाहूजी महाराज का कार्य व योगदान

डॉ. गणेश कुमार कोशले, सहायक प्राध्यापक,
शासकीय नवीन महाविद्यालय कमलेश्वरपुर, मैनपाट, जिला सरगुजा (छत्तीसगढ़)

राजर्षि छत्रपति शाहूजी महाराज को भारत में आरक्षण के जनक व एक सच्चे प्रजातांत्रिक नरेश और महान समाज सुधारक के रूप में जाना जाता हैं। वे महाराष्ट्र के एक छोटे से रियासत कोल्हापुर के राजा थे। वह इतिहास में एक अमूल्य मणि के रूप में आज भी प्रसिद्ध हैं। छत्रपति शाहूजी महाराज ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने राजा होते हुए भी दलित और शोषित वर्ग के कष्ट को समझा। उन्होंने दलित वर्ग के बच्चों को मुफ़्त शिक्षा प्रदान करने की शुरूआत किया। गरीब छात्रों के लिए छात्रावास स्थापित किए और बाहरी छात्रों को शरण प्रदान करने के आदेश दिए। शाहूजी महाराज के शासन के दौरान 'बाल विवाह' पर ईमानदारी से प्रतिबंध लगाया गया। उन्होंने अंतरजातीय विवाह और विधवा पुनर्विवाह के पक्ष में समर्थन किया। इन गतिविधियों के लिए शाहूजी महाराज को कड़ी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। विरोधी उन्हें 'ढेढ़ो का राजा' कहते थे। जिस समय छत्रपति शाहूजी महाराज गद्दी पर बैठे, उस समय समाज की स्थिति बहुत दयनीय थीं। समाज में जात–पात, ऊँच–नीच, छुआ–छूत, मानवाधिकारों की असमानता, निर्धन कृषकों और मजदूरों की दीन–हीन स्थिति, पाखंडवाद, धर्म पद्धति, वर्ण–व्यवस्था की घोर तांडव असहाय जनता को उबरने नहीं दे रही थीं। वर्ण–व्यवस्था में चौथा वर्ण, शूद्र जिसका कोई अपना अस्तित्व नहीं था, उसकी दशा दयनीय थी। उस समय वर्ण–व्यवस्था और ऊँच–नीच के भेदभाव को मिटाने के लिए महामना ज्योतिबाराव फुले द्वारा संचालित "सत्य शोधक समाज" लगातार कार्य कर रही थीं। शाहूजी महाराज ज्योतिबाराव फुले से अत्याधिक प्रभावित थे और लंबे समय तक 'सत्य शोधक समाज', के संरक्षक भी रहे। दलित–मुक्ति के लिए राजनीति को हथियार बनाने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया। किन्तु वर्ण–व्यवस्था में शक्ति के स्रोतों से बहिष्कृत तबकों के हित में किये गए अनेकों कार्यों के साथ ही इतिहास में उन्हें जिस बात के लिए खास तौर से याद किया जाता है, वह है उनके द्वारा किया गया आरक्षण का प्रावधान था।

राजर्षि छत्रपति शाहूजी महाराज का जन्म 26 जून 1874 में हुआ था, उनके बचपन का नाम यशवंतराव था। उनके पिता जयसिंह राव अप्पा साहिब घटगे कागल निवासी थे, उनकी माता राधाबाई मुधोल राज्य की राजकन्या थी। राजर्षि छत्रपति शाहूजी महाराज केवल 3 वर्ष के थे तभी उनकी माँ राधाबाई 20 मार्च 1977 को मृत्यु को प्राप्त हुई। इसलिए उनका पालन–पोषण जीजाबाई ने किया था। ब्रिटिश षडयंत्र और अपने ब्राह्मण दीवान की गद्दारी की वजह से जब छत्रपति शिवाजी महाराज (प्रथम) के दूसरे पुत्र के वंशज शिवाजी चतुर्थ कोल्हापुर के राजा का कत्ल हुआ तो उनकी विधवा आनंदीबाई ने अपने जागीरदार जयसिंह राव अप्पा साहिब घटगे के पुत्र यशवंतराव को 17 मार्च, 1884 में गोद ले लिया। बाल्य–अवस्था में ही यशवंतराव को शाहूजी महाराज की हैसियत से कोल्हापुर रियासत की राजगद्दी प्राप्त हुआ। यद्यपि राज्य का नियंत्रण उनके हाथ में काफ़ी समय बाद 2 अप्रैल 1894 में आया।

शाहूजी महाराज की शिक्षा राजकोट के राजकुमार विद्यालय में हुई थी। प्रारंभिक शिक्षा के बाद आगे की पढ़ाई रजवाड़े में ही एक अंग्रेज शिक्षक 'स्टुअर्ट मिटफर्ड फ्रेज़र' के जिम्मे सौपी गई। अंग्रेजी शिक्षक और अंग्रजी शिक्षा का प्रभाव शाहूजी महाराज के दिलों–दिमाग पर गहराई से पड़ा। वैज्ञानिक सोच को न सिर्फ वे मानते थे बल्कि इसे बढ़ावा देने का हर संभव प्रयास करते थे। पुरानी प्रथा, परम्परा अथवा काल्पनिक बातों को वे महत्त्व नहीं देते थे। छत्रपति शाहूजी महाराज अपनी शिक्षा पूर्ण कर चुके थे और वह कोल्हापुर राज्य के कार्यों में रूचि लेने लगे थे। राज्य की शिक्षा व्यवस्था की ओर भी छत्रपति

शाहूजी महाराज का ध्यान जानें लगा था। 13 अप्रैल 1893 को राजाराम कॉलेज की ओर से उन्हें पुरस्कार वितरण हेतु आमंत्रित किया।

शाहूजी महाराज द्वारा सत्ता के ग्रहण किए जाने की सार्वजनिक घोषणा 2 अप्रैल 1894 को प्रकाशित किया गया। अपने घोषणा–पत्र में उन्होंने कहा कि "वे राज्य के चहुमुखी विकास तथा जनता की समृद्धि की आकांक्षा रखते हैं।" बम्बई के गर्वनर लार्ड हैरिस ने इसके लिए एक विशेष दरबार की व्यवस्था किया। इस दरबार में राजे–महराजे, प्रमुख सरदार, अधिकारी, कोल्हापुर के शासनाधिकारी तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति उपस्थित थे। एक लम्बी अवधि के पश्चात कोल्हापुर राज्य को शाहूजी महाराज के रूप में एक धीर–वीर महान् राजा प्राप्त हुआ था। 19–21 अप्रैल 1919 को कानपुर में आयोजित अखिल भारतीय कुर्मी महासभा के 13वें राष्ट्रीय सम्मलेन में उन्हें राजर्षि के ख़िताब से नवाजा गया था।

शाहूजी महाराज प्रत्येक दिन बड़े सबेरे ही पास की नदी में स्नान करने जाया करते थे। पूर्व से चली आ रही प्रथा के अनुसार, इस दौरान ब्राह्मण पंडित मंत्रोच्चार करते थे। एक दिन बंबई से पधारे प्रसिद्ध समाज सुधारक राजाराम शास्त्री भागवत भी उनके साथ स्नान के लिए चले गए। महाराजा कोल्हापुर के स्नान के दौरान ब्राह्मण पंडित द्वारा मंत्रोच्चार किये गए श्लोक को सुनकर राजाराम शास्त्री अचम्भित रह गए। पूछे जाने पर ब्राह्मण पंडित ने कहा कि– "चूँकि महाराजा शूद्र हैं, इसलिए वे वैदिक मंत्रोच्चार न कर पौराणिक मंत्रोच्चार करते है।" ब्राह्मण पंडित की बातें शाहूजी महाराज को अपमानजनक लगा, उन्होंने इसे एक चुनौती के रूप में लिया। महाराज शाहूजी के सिपहसालारों ने एक प्रसिद्ध ब्राह्मण पंडित नारायण भट्ट सेवेकरी को महाराजा का यज्ञोपवीत संस्कार करने को राजी किया। यह 1901 की घटना है। जब यह खबर कोल्हापुर के ब्राह्मणों को हुई तो वे बड़े कुपित हुए। उन्होंने नारायण भट्ट पर कई तरह की पाबंदी लगाने की धमकी दी। तब इस मामले पर शाहूजी महाराज ने राज पुरोहित से इस संबंध में सलाह लिया। किंतु इस पर राज पुरोहित ने अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। इस पर शाहूजी महाराज ने गुस्सा होकर राज–पुरोहित पद से बर्खास्त कर दिया।

छत्रपति शाहूजी महाराज ने प्रशासन परिषद को भंगकर अपने राज्य को शक्तिशाली बनाने के लिए सबसे पहला कदम उठाया। इस परिषद को सभी प्रकार के सर्वोच्च अधिकार प्राप्त था। कोल्हापुर राज्य का आर्थिक विकास शाहूजी महाराज की दृष्टि में सर्वोपरि था। इसके लिए सर्वप्रथम उन्होंने इनामदारों एवं कृषकों को कर्ज दिलाने पर विचार किया तथा उनको सुविधाजनक किश्तों में ऋण और अनुदान देने का निर्णय लिया। उन्होंने छत्रपति की हैसियत से सिरोल में अपना शिविर लगाया और आस–पास के गांवों में गये। सभी किसानों एवं मजदूरों से खुलकर मिले, उनकी कठिनाईयां सुनी तथा उनको दूर करने का प्रयास किया। कोल्हापुर राज्य को सूखे और बाढ़ से निजात दिलाने के लिए उन्होंने प्रख्यात इंजीनियर विश्वेशरैया से एक विशालकाय बांध का निर्माण करवाया। इस बाध की सिचाई सुविधाओं का लाभ कोल्हापुर के किसान आज भी ले रहे हैं। कृषि के उचित प्रबंधन के लिए उन्होंने कई यूरोपीय विशेषज्ञों को अपनी राजकीय सेवा में रखा हुआ था। वे राजा होकर भी मानव संवेदनशीलता से सम्पन्न थे। वे नरसोबाबाड़ी गये जहां उन्होंने कोढ़ से पिड़ित लोगों को देखा। शाहूजी महाराज ने कुष्ठ पिड़ित लोगों के लिए अलग आवास बनाने पर विचार किया। इसे बहुत ही जल्द मूर्तरूप दिया। जब 22 जून 1897 में कोल्हापुर में विक्टोरिया कुष्ठ शरणगृह बन गया। कुष्ठ पीड़ितों की महत्त्वपूर्ण समस्या हल हो गया। आगे इस शरणगृह को अनुस्करा स्थानान्तरित कर दिया।

छत्रपति शाहूजी महाराज की प्रबल इच्छा थी कि शासन को चुस्त दुरुस्त एवं प्रभावी बनाने के लिए समर्थ अधिकारी नियुक्त किए जाये। वे चाहते थे कि गैर ब्राह्मण जातियों से शिक्षित युवकों की नियुक्ति करके उनको प्रशासन का प्रशिक्षण दिया जाए, जिससे कि पिछड़े और निर्बल वर्ग के लोगों को भी शासन में हिस्सा मिले और शासन सुदृढ़ एवं संतुलित बनाया जा सकें। इतना ही नहीं ऐसा करने पर निर्बल वर्गों में शिक्षा प्राप्त करने का उत्साह एवं प्रेरणा मिलेगी। सर्वप्रथम उन्होंने अपने दरबार से ब्राह्मणों का वर्चस्व कम किया और सभी वर्गों की भागीदारी सुनिश्चित किया। उन्होंने निर्बल वर्गों के लोगों को नौकरियों पर ही रखा तथा उनकों साथ लेकर चलने भी लगे। इससे ब्राह्मणों में रोष उत्पन्न हो गया और वो लोगों में भ्रम फैलाने लगे कि छत्रपति शाहूजी महाराज अनुभवहीन है तथा वे अक्षम लोगों को सरकारी पदों पर नियुक्त कर रहे है। लेकिन छत्रपति शाहूजी महाराज अपनी विचारधारा पर अडिग रहे और उन पर ब्राह्मणों के इस रवैये का कोई फर्क नहीं पड़ा।

18 अप्रैल 1901 में मराठाज स्टुडेंटस इंस्टीट्यूट एवं विक्टोरिया मराठा बोर्डिंग संस्था की स्थापना किया और 47 हजार रूपये खर्च करके इमारत बनवाया। 1904 में जैन होस्टल, 1906 में मॉमेडन हॉस्टल

और 1908 में अस्पृश्य मिल क्लार्क हॉस्टल जैसी संस्था का निर्माण करके शाहूजी महाराज ने शिक्षा फैलाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया जो मिल का पत्थर साबित हुआ। अज्ञानी और पिछड़े दलित समाज को ज्ञानी, संपन्न एवं उन्नत बनाने हेतु शाहूजी ने अपने जीवन का एक–एक क्षण समर्पित कर दिया। शाहूजी महाराज ने 30 सितम्बर 1912 में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा देने कानून बनाया तथा उसे अमल में भी लाए। 1917 में पुनर्विवाह का कानून भी पास किया।

1902 के मध्य में शाहूजी महाराज इंग्लैण्ड गए हुए थे। उन्होंने वहीं से 26 जुलाई 1902 को एक आदेश जारी कर कोल्हापुर के अंतर्गत शिक्षा व शासन–प्रशासन के 50 प्रतिशत पद दलित–पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षित कर दिया, जिसकी किसी ने कल्पना भी नहीं की थी। यह भारतीय इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण घटना थीं। इस महान कार्य के लिए शाहूजी महाराज आधुनिक आरक्षण के जनक कहलाये। उनके इस आदेश से कोल्हापुर के ब्राह्मणों पर जैसे गाज गिर गयी। उल्लेखनीय है कि सन 1894 में, जब शाहूजी महाराज ने राज्य की बागडोर सम्भाली थी, उस समय कोल्हापुर के सामान्य प्रशासन में कुल 71 पदों में से 60 पर ब्राह्मण अधिकारी नियुक्त थे। इसी प्रकार लिपिकीय पद के 500 पदों में से मात्र 10 पर गैर–ब्राह्मण थे। शाहूजी महाराज द्वारा पिछड़ी जातियों को अवसर उपलब्ध कराने के कारण सन 1912 में 95 पदों में से ब्राह्मण अधिकारियों की संख्या अब 35 रह गई थी। सन 1903 में शाहूजी महाराज ने कोल्हापुर स्थित शंकराचार्य मठ की सम्पत्ति जप्त करने का आदेश दिया। दरअसल, मठ को राज्य के ख़ज़ाने से भारी मदद दी जाती थी। कोल्हापुर के पूर्व महाराजा द्वारा अगस्त, 1863 में प्रसारित एक आदेश के अनुसार, कोल्हापुर स्थित मठ के शंकराचार्य को अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति से पहले महाराजा से अनुमति लेनी आवश्यक थी, परन्तु तत्कालीन शंकराचार्य उक्त आदेश को दरकिनार करते हुए संकेश्वर मठ में रहने चले गए थे, जो कोल्हापुर रियासत के बाहर था। 23 फरवरी, 1903 को शंकराचार्य ने अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति की थी। यह नए शंकराचार्य लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के क़रीबी थे। 10 जुलाई, 1905 को इन्हीं शंकराचार्य ने घोषणा किया कि– "चूँकि कोल्हापुर भोसले वंश की जागीर रही है, जो कि क्षत्रिय घराना था। इसलिए राजगद्दी के उत्तराधिकारी छत्रपति शाहूजी महाराज स्वाभविक रूप से क्षत्रिय हैं।

दलितों, पिछड़ों की दशा में बदलाव लाने के लिए उन्होंने दो ऐसी विशेष प्रथाओं का अंत किया जो युगांतरकारी साबित हुई। पहला, 1917 में उन्होंने उस 'बलूतदारी–प्रथा' का अंत किया, जिसके तहत एक अछूत को थोड़ी सी जमीन देकर बदले में उससे और उसके परिवार वालों से पूरे गाँव के लिए मुफ्त सेवाएं ली जाती थीं। इसी वर्ष 25 जुलाई को प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं निःशुल्क कर दी। इससे पहले 30 सितम्बर 1912 को उन्होंने 10 वर्ष के आयु के समस्त बालक–बालिकाओं के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी थी, ऐसा करने वाले भारत के इतिहास में वे पहले राजा थे। शाहूजी ने धार्मिक प्रभुत्व को भी तोड़ने का निर्णय लिया, 9 जुलाई 1917 को उन्होंने एक आदेश जारी किया कि कोल्हापुर राज्य के समस्त देवस्थानों की आय और संपत्ति पर राज्य का नियंत्रण होगा। इसके साथ ही उन्होंने मराठा (पिछड़ी) जाति के पुजारियों की नियुक्ति का भी आदेश जारी किया। 1920 में उन्होंने पूजा और पुरोहितों के प्रशिक्षण के लिए विद्यालय खुलवाया और उन्होंने गांवों में पुरोहितों तथा पुजारियों की प्रणाली को समाप्त कर दिया। इसी तरह 1918 में उन्होंने कानून बनाकर राज्य की एक और पुरानी प्रथा 'वतनदारी' का अंत किया तथा भूमि सुधार लागू कर महारों को भू–स्वामी बनने का हक़ दिलाया। इस आदेश से महारों की आर्थिक गुलामी बहुत हद तक दूर हो गई।

छत्रपति शाहूजी महाराज ने अनुभव किया कि अछूत वर्ग तथा पिछड़े वर्ग के लोग प्रायः अशिक्षित और निर्धन है। वे आर्थिक दरिद्रता और सामाजिक अपमान को एक लम्बी परम्परा से भोग रहे है। उनकी इच्छा थी कि शिक्षा का प्रसार छोटी जातियों एवं वर्गों के बीच किया जाए जिससे उनकों अपने अधिकारों का सही ज्ञान हो सके। उन्होंने स्वयं की देख–रेख में स्कूलों की स्थापना करवाई और शिक्षा के द्वार सभी के लिए खोल दिए। शाहूजी महाराज ने जातियों के आधार पर स्कूल और छात्रावास खोलने के आदेश जारी किये। यह असहज किंतु निः संदेह अनूठी पहल थी उन जातियों को शिक्षित करने के लिए, जो सदियों से उपेक्षित थीं। उन्होंने दलित–पिछड़ी जातियों के बच्चों की शिक्षा के लिए ख़ास प्रयास किये थे। उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने आर्थिक सहायता उपलब्ध कराया। शाहूजी महाराज के प्रयासों का परिणाम उनके शासन में ही दिखने लग गया। स्कूल और कॉलेजों में पढ़ने वाले पिछड़ी जातियों के लड़के–लड़कियों की संख्या में उल्लेखनीय प्रगति हुई थी। कोल्हापुर के महाराजा के तौर पर शाहूजी महाराज ने सभी

जाति और वर्गों के लिए काम किया। उन्होंने 'प्रार्थना समाज' के लिए भी बहुत कार्य किया था। 'राजाराम कॉलेज' का प्रबंधन उन्होंने 'प्रार्थना समाज' को दिया था।

शाहूजी महाराज का एक ही प्रयोजन था और वह था निर्बल दलितों तथा शोषितों की शिक्षा, स्वास्थ्य तथा कृषि सम्बन्धी विकास। उनकी प्रबल आकांक्षा थी कि उस तथाकथित शूद्र और अतिशूद्र जातियों को शासन व्यवसाय तथा स्थानीय निकाय में अधिक से अधिक हिस्सा मिले, जिसके लिए जरुरी था कि पहले उनको शिक्षित किया जाए। शाहूजी महाराज के कार्यों से उनके विरोधी भयभीत थे और उन्हें जान से मारने की धमकियाँ दे रहे थे। इस पर उन्होंने कहा था कि– "वे गद्दी छोड़ सकते हैं, मगर सामाजिक प्रतिबद्धता के कार्यों से वे पीछे नहीं हट सकते।" अछूतों को समाज में बराबरी का हक दिलाने और उनकी स्थिति में सुधार के लिए शाहूजी ने अन्य विशेष कदम भी उठाये। 1919 से पहले अछूत कहे जाने वाले समाज के किसी भी सदस्य का ईलाज किसी अस्पताल में नहीं हो सकता था। 1919 में शाहूजी ने एक आदेश जारी किया, जिसके अनुसार अछूत समाज का कोई भी व्यक्ति अस्पताल आकर सम्मानपूर्वक ईलाज करा सकता है। इसके अलावा उन्होंने 1919 में ही 15 जनवरी को यह आदेश भी जारी किया कि प्राइमरी स्कूल, हाई स्कूल और कॉलेजों में जाति के आधार पर छात्रों के साथ कोई भी भेदभाव न किया जाए। उन्होंने दलितों को नौकरियों में जगह देने के साथ ही इस बात का आदेश दिया कि सरकारी विभागों में कार्य कर रहे दलित जाति के कर्मचारियों के साथ समानता और शालीनता का बर्ताव किया जाए। किसी प्रकार का छुआछूत नहीं होना चाहिए, जो अधिकारी इस आदेश का पालन न करने के इच्छुक हों, वे 6 महीने के भीतर त्यागपत्र दे दें। शाहूजी महाराज ने 15 जनवरी, 1919 के अपने आदेश में कहा था कि– "उनके राज्य के किसी भी कार्यालय और गाँव पंचायतों में भी दलित–पिछड़ी जातियों के साथ समानता का बर्ताव हो, यह सुनिश्चित किया जाये।" उनका स्पष्ट कहना था कि– "छुआछूत को बर्दास्त नहीं किया जायेगा, उच्च जातियों को दलित जाति के लोगों के साथ मानवीय व्यवहार करना ही चाहिए। जब तक प्रत्येक आदमी को आदमी नहीं समझा जायेगा, समाज का चहुमुखी विकास असम्भव है।" 15 अप्रैल, 1920 को नासिक में 'उदोजी विद्यार्थी' छात्रावास की नीव का पत्थर रखते हुए शाहूजी महाराज ने कहा था कि– "जातिवाद का अंत ज़रूरी है, जाति को समर्थन देना अपराध है। हमारे समाज की उन्नति में सबसे बड़ी बाधा जाति है। जाति आधारित संगठनों के निहित स्वार्थ होते हैं। निश्चित रूप से ऐसे संगठनों को अपनी शक्ति का उपयोग जातियों को मजबूत करने के बजाय इनके खात्मे में करना चाहिए।"

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के हिंदू कोड बिल से तो हम सभी परिचित हैं, लेकिन 11 नवंबर 1920 को ही शाहूजी महाराज ने भी एक हिंदू कोड बिल पास किया था, यह शायद ही किसी को पता है। इस बिल के माध्यम से उन्होंने संपत्ति के उत्तराधिकार के संदर्भ में मिताक्षरा न्याय सिद्धांत को समाप्त कर दिया। मिताक्षरा याज्ञवल्क्य स्मृति पर विज्ञानेश्वर की टीका है। इसकी मूल बात यह है कि स्त्री को संपत्ति उत्तराधिकार में नहीं मिल सकती, इस पर तरह–तरह की शर्तें और प्रतिबंध लगाए गये हैं।

छत्रपति शाहूजी महाराज ने कोल्हापुर की नगरपालिका के चुनाव में अछूतों के लिए भी सीटें आरक्षित किया था। यह पहला मौका था कि राज्य नगरपालिका का अध्यक्ष अस्पृश्य जाति से चुन कर आया था। उन्होंने हमेशा ही सभी जाति वर्गों के लोगों को समानता की नज़र से देखा। शाहूजी महाराज ने जब देखा कि अछूत–पिछड़ी जाति के छात्रों की राज्य के स्कूल–कॉलेजों में पर्याप्त संख्या हैं, तब उन्होंने 15 जनवरी 1919 के एक आदेश से इनके लिए खुलवाये गए पृथक स्कूल और छात्रावासों को बंद करा करवा दिया और उन्हें सामान्य व उच्च जाति के छात्रों के साथ ही पढ़ने की सुविधा प्रदान किया।

गंगाराम कांबले शाहूजी महाराज के कर्मचारियों के लिए बने क्वार्टर में रहते थे। एक बार राजमहल के भीतर बने तालाब के पास एक मराठा सैनिक संताराम और ऊंची जाति के कुछ लोगों ने गंगाराम कांबले को बुरी तरह पीटा, उनका कहना था कि दलित गंगाराम ने तालाब का पानी छूकर उसे अपवित्र कर दिया था। उस वक्त शाहूजी महाराज कोल्हापुर में नहीं थे, जब वे लौटकर आए तो गंगाराम ने रोते–रोते अपनी पूरी बात उन्हें बताया। इस पर शाहूजी बहुत नाराज़ हुए और उन्होंने संताराम को घोड़े के चाबुक से पीटा और नौकरी से निकाल दिया। इसके बाद उन्होंने गंगाराम से कहा कि मुझे दुःख है कि मेरे राजमहल के भीतर ऐसी घटना हुई। उन्होंने गंगाराम कांबले से कहा कि तुम्हें अपना काम शुरू करना चाहिए। कोल्हापुर के महाराजा छत्रपति शाहूजी ने अपने दलित सेवक गंगाराम कांबले की चाय की दुकान खुलने पर वहाँ चाय पीने जाने का फ़ैसला किया, पिछली सदी के शुरुआती वर्षों में यह कोई मामूली बात नहीं थी। उन्होंने कांबले से पूछा, "तुमने अपनी दुकान के बोर्ड पर अपना नाम क्यों नहीं

लिखा है?" इस पर कांबले ने कहा कि "दुकान के बाहर दुकानदार का नाम और जाति लिखना कोई ज़रूरी तो नहीं।" महाराजा शाहूजी ने चुटकी ली, "ऐसा लगता है कि तुमने पूरे शहर का धर्म भ्रष्ट कर दिया है।" कांबले की दुकान पर महाराजा के चाय पीने की ख़बर कोल्हापुर शहर में जंगल की आग की तरह फैल गई। इस अद्‌भुत घटना को अपनी आँखों से देखने के लिए बड़ी संख्या में लोग जुटे। शाहूजी महाराजा ने भारी भीड़ की मौजूदगी में कांबले की चाय का आनंद लिया, उनमें से कई लोगों को शायद मालूम नहीं था कि चाय की दुकान खोलने के लिए कांबले को शाहूजी ने ही पैसे दिए थे। चाय पीने के बाद महाराजा ने गंगाराम कांबले से कहा कि "सिर्फ़ चाय ही नहीं, बल्कि सोडा बनाने की मशीन भी खरीद लो।" राजर्षि महाराज के नाम से मशहूर शाहूजी ने कांबले को सोडा मशीन के लिए भी पैसे दिए।

कोल्हापुर के दत्तोबा पवार व दत्तोबा दलवी के सहयोग से भीमराव अम्बेडकर का छत्रपति शाहूजी महाराज से प्रत्यक्ष परिचय हुआ। उन्होंने अश्पृश्यों में जनजागृति पैदा करने हेतु अम्बेडकर द्वारा एक पाक्षिक अखबार की शुरूआत करने के लिए शाहूजी महाराज से आर्थिक सहायता करने की विनती किया। इस अखबार के लिए महाराज ने ढाई हजार रूपये की आर्थिक सहायता किया। 31 जनवरी 1920 को भीमराव अम्बेडकर ने 'मूकनायक' पाक्षिक की शुरूआत किया। दलित हितैषी कोल्हापुर नरेश ने 21 तथा 22 मार्च 1920 में मनमाड में प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग संस्था का सम्मेलन कराया। जिसका अध्यक्ष उन्होंने भीमराव अम्बेडकर को बनाया। उन्होंने इस दलितों की विशाल सभा में सगर्व घोषणा करते हुए कहा था कि –'मुझे लगता है आंबेडकर के रूप में तुम्हे तुम्हारा मुक्तिदाता मिल गया है। मुझे उम्मीद है वो तुम्हारी गुलामी की बेड़ियाँ काट डालेंगे। ये एक दिन बड़े नेता बनेंगे और न केवल आपका बल्कि सारे देश का उद्धार करेंगे। इतना ही नहीं मुझे पूरा भरोसा है कि भारत के महान नेताओं की श्रेणी में इका विशिष्ट स्थान रहेगा।' उन्होंने दलितों के मुक्तिदाता की महज जुबानी प्रशंसा नहीं की बल्कि उनकी अधूरी पड़ी विदेशी शिक्षा पूरी करने के लिए धन उपलब्ध कराया तथा उनका दलित–मुक्ति के लिए राजनीति को हथियार बनाने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान दिया।

ऐसे वंचित पिछड़े–दलितों के उद्धारक शाहूजी का शासन–काल सिर्फ 28 वर्ष ही रहा। वे मात्र 48 वर्ष की उम्र में 6 मई 1922 को बम्बई में उनका निर्वाण हो गया। उनका समाज के किसी भी वर्ग से किसी भी प्रकार का द्वेष नहीं था। शाहूजी महाराज के मन में दलित वर्ग के प्रति गहरा लगाव था। उन्होंने सामाजिक परिवर्तन की दिशा में जो क्रान्तिकारी कार्य किए थे, वे इतिहास में सदा सदा के लिए अमर हो गए।

संदर्भ सूची -

1. सिंह, डॉ विपिन कुमार, छत्रपति शाहूजी महाराज सिंहावलोकन, मोहन पब्लिकेशंस, आगरा, 2021
2. सिंह, श्याम सुंदर, छत्रपति शाहूजी महाराज संघर्ष और इतिहास, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016
3. त्रिशरण, डॉ. विजय कुमार, छत्रपति शाहूजी महाराज, गौतम बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2018
4. वासनिक, विनय कुमार, शाहूजी महाराज के ऐतिहासिक भाषण, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2020
5. डॉ. विमलकीर्ति, शाहू छत्रपति – समाज परिवर्तन के नायक, सम्यक प्रकाशन, 2023

मो॰- 8889092801

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 147-150
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

संजीव (राम संजीवन प्रसाद) के कहानियों में चित्रित स्त्री-पुरुष : मानसिक संबंध

शिवराजकुमार कल्लूर, शोधार्थी,
डॉ. प्रभुसेन डी, शोध निदेशक एवं विभागाध्यक्ष,
हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग,
कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसुरु - ५७०००६

मुख्यशब्द : संजीव (राम संजीवन प्रसाद), कहानी, स्त्री-पुरुष संबंध, मानसिक संबंध, 'बाढ़', 'गली के मोड़ पर सूना सा कोई दरवाजा', 'खबर'

सारलेख : संजीव की कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंधों की मानसिकता और समाज की जटिलताओं का गहन चित्रण मिलता है। इन कहानियों में प्रेम, यौन भावनाएं, और सामाजिक दबाव के कारण व्यक्त न हो पाने वाली इच्छाओं का विश्लेषण किया गया है।

'बाढ़' कहानी में तिरबेनी काका के अविवाहित जीवन और उनके मन में दबी यौन भावनाओं का चित्रण किया गया है। सामाजिक बंधनों और व्यक्तिगत परिस्थितियों के कारण, वे अपने प्रेम और इच्छाओं को केवल कल्पनाओं में जीते हैं।

'गली के मोड़ पर सूना सा कोई दरवाजा' कहानी में कथाकार की किशोरावस्था की कल्पनाएँ और प्रेम भावनाओं को दर्शाया गया है। वह बस में और अपने आस-पड़ोस की लड़कियों के प्रति आकर्षण महसूस करता है, लेकिन सामाजिक सीमाओं और अंततः लड़की की मृत्यु से उसके सपने टूट जाते हैं।

'खबर' कहानी में रामप्रसाद उर्फ गीत कुमार गीता नामक एक लड़की के प्रति आकर्षण महसूस करता है। वह अपने मन में प्रेम और यौन भावनाओं को जीता है, लेकिन वास्तविकता में वह अपने विचारों को कभी साकार नहीं कर पाता।

भूमिका : संजीव की कहानियों में आधुनिक समाज में प्रेम, विवाह, और यौन संबंधों की बदलती परिभाषाओं को प्रस्तुत किया गया है। मानसिक जुड़ाव, असफल प्रेम, और सामाजिक दबावों के कारण उत्पन्न घुटन को प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। विवाहेतर संबंधों, युवाओं की बदलती जीवनशैली, और स्त्री-पुरुष संबंधों की दुविधाओं को उनकी कहानियों में यथार्थवादी रूप में प्रस्तुत किया गया है।

स्त्री-पुरुष मन ही मन किसी से प्रेम करते हैं। मन में हम किसी के बारे में सोचते हैं, सपने देखते हैं, कल्पना करते हैं। अपनी कल्पना में उसके साथ सेक्स करते रहें. लेकिन डर, नैतिकता, सामाजिक दबाव आदि के कारण वे अपने प्यार का इजहार नहीं कर पाते। प्यार करने वाले प्यार का इजहार नहीं कर पाते. इस प्रकार की स्थिति को मानसिक संबंध कहा जाता है। स्त्री का उन्मुक्त व्यवहार युवा मन में यौन भावनाएँ जगाता है और वह उसके बारे में अपने ढंग से सोचता है। ऐसा मानसिक जुड़ाव संजीव की कहानियों में दर्शाया गया है।

'बाढ़' कहानी में तिरबेनी काका अविवाहित हैं। युवावस्था में एक अच्छा लड़का बनें. रिश्तेदार शादी के लिए आए थे, लेकिन युद्ध, आपराधिक गतिविधियों और अदालती मामलों से कोई राहत नहीं मिलने पर, भाइयों ने शादी करने वाले दो छोटे भाइयों की संपत्ति जब्त करने के लिए तिरबेनी क्रो के गले में एक बाल ब्रह्मचारी का कॉलर बांध दिया। बाल ब्रह्मचारी होते हुए उसके मामा उसकी शादी कैसे कर सकते थे? तो मन ही मन उसे गांव की लड़कियों से प्यार होने लगता है, "शिवकुमारी ने... अपने मांसल कसाव में लेकर उन्हें इतना जोरो से भीच दिया है कि उनकी पसलियाँ तक पिरोने लगी है। सहसा शिवकुमारी से छुटकर वे सोभागी देवी के गोद में जा गिरे हैं। बारी-बारी से वे सन्ता, सुनैना और जाने कैसी-कैसी औरतों की गोद में छोटे बच्चे की तरह डोल रहे हैं । औरतें ही औरतें... औरतें उनको झुला झुला रही है, खाना खिला रही है, पंखा झला रही है, सेज बिछा रही है, पाँव दबा रही है, गुदगुदी लगा रही है।1 संता, सुनैना, फूला, चुड़िहारिन, नजमा, वे सभी औरतें या लड़कियाँ जिनसे तीरबेनी काका ने समय-समय पर गहरा प्रेम किया था, वे सब चली गयीं और उनकी जगह उनकी बेटियों और बहुओं ने ले ली है। थोड़ी देर के लिए उमर चला गया, लेकिन उसके मन के किसी कोने में एक औरत की उम्मीद बची रही।

'गली के मोड़ पर सूना सा कोई दरवाजा' कहानी में कथाकार एक संक्रमण काल से गुजरता है। उनका बचपन बीत चुका है और जवानी आने वाली है। उन्होंने कम उम्र में ही मैट्रिक पास कर लिया है और अब कॉलेज जा रहे हैं। वह कॉलेज की लड़कियों के बारे में कल्पना करता है और उनसे प्यार करने के सपने देखता है। बस में लड़कियों के सामने खड़े होकर उन्होंने अपनी नोटबुक और किताबें इस तरह रखीं कि लड़कियों को उनका नाम और क्लास दिखाई दे। कथावाचक अपनी उपलब्धियों को सीढ़ी बनाकर लड़कियों को पाना चाहता था। उनके शब्दों में, "मुझे लगता इस उपलब्धि को सीढ़ी बनाकर लड़कियों तक पहुँचा जा सकता था। मुझे लगता हर नज़र विस्मय से भर उठेगी और कोई-कोई बालिका तो मुझे आदर से लपेटकर कलेजे में रख लेगी 'इस्स ! ऐसा! देखो, देखो, कितना तेज लड़का है।"2 "उसे कई लड़कियाँ पसंद हैं, वह सिर्फ एक से नहीं बल्कि सभी से प्यार करना चाहता है, लेकिन एक भी लड़की उसे भाव नहीं देती।

इस असफलता ने उसे सड़क पर जी ब्लॉक की पांचवीं पंक्ति में तीसरे घर के दरवाजे पर लड़की की ओर आकर्षित किया, वह भी सुंदर, सुंदर और युवा थी। वह उससे चार-पाँच साल बड़ी भी होगी। वह हर दिन उस लड़की से मिलने जाता है और उसके प्यार भरे चेहरे से यह

अनुमान लगाता है कि वह भी उससे प्यार करती है। अब वह उस के सपनों में भी आने लगी। वह 24 घंटे उसके ख्यालों में रहता है। वह उससे अपने मन की बात भी कहती है। जब वह बराबर होता तो वह उससे पूछती, "थोडा टफ है न? बना लोगे?... इसे वैसे नहीं ऐसे बनाओ तो बन जाय।... राह चल रहा होता तो वह कदम दर कदम टोकती, जरा देख के चलो ... वह मुझे हर घड़ी हर पल नियंत्रित और संचालित करने लगी थी।... उसे डॉटना भी पड़ता काम नहीं करने दोगी क्या? लो करो। वह मुँह फूलाकर मेरी ओर पीठ करके बैठ जाती। लेकिन उसकी यह नाराजगी ज्यादा देर तक न रह पाती जैसे ही मैं उसे चिढ़ाता कब तक हुजूर रूठे रहोगे, भरके गुस्से में प्यार... वह मेरी पीठ पर आ चिपकती और झुला झूलने लगती।"3

एक दिन वह अचानक गायब हो जाती है। पूछने पर पता चला कि वह पांडे की बेटी है। उनके गांव के घर में आग लगने से उनकी मृत्यु हो गई। बेचारी लड़की गूंगी थी और चिल्ला भी नहीं सकती थी। महानायक के सारे सपने चकनाचूर हो गये।

'खबर' कहानी में राम प्रसाद उर्फ गीत कुमार को कॉलेज में गीता नाम की एक लड़की से बेहद प्यार हो जाता है "गीता नाम का जिक्र आते ही उसका चेहरा मक्खन सा पिघलकर लिबिर-लिबिर करने लगता, आँखों में खुमारी छाने लगती। हवा के रेशे-रेशे और देह और दिमाग के तन्तु-तन्तु तनाव में चटखने लगते। उसने दुर से बस उसकी एक झलक भर देखी थी। गोरी छरहरी लम्बोतरा मुख जयश्री इण्टर कॉलेज की छात्रा गीता।"4 उस कॉलेज में गीता नाम की चार लड़कियाँ थीं। वह तय नहीं कर पा रहा था कि उसे कौन सी गीता प्रिय है। फिर उसे पता चला कि गीता नाम की एक लड़की भी आशियाना कॉलोनी में रहती है और उसी कॉलेज में पढ़ती है। तब से, आशियाना कॉलोनी में कमरा सी 7/2 उनके शोध का केंद्र रहा है। वह उसे बेहतर तरीके से जानने के लिए कई प्रयोग करता है। गैस सेल्समैन, प्लंबर, एजेंट और कूरियर के रूप में पेश होकर, वह उसके दरवाजे तक जाता है, लेकिन कुछ भी काम नहीं करता है। वह अपने मन में गीता को लेकर सपने बुनता है। इसके बारे में सोचता रहता है।

निष्कर्ष : संजीव की कहानियाँ आधुनिक समाज में प्रेम, विवाह और यौन संबंधों की जटिलताओं को एक यथार्थवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं। इन कहानियों में, पात्रों के मनोवैज्ञानिक संघर्षों को बड़ी गहराई से उजागर किया गया है। कहानियों में पात्रों के मन में होने वाले प्रेम और यौन संबंधों को बड़ी बारीकी से चित्रित किया गया है। ये संबंध अक्सर सामाजिक दबावों, नैतिकता और डर के कारण अज्ञात ही रह जाते हैं। पात्रों को प्रेम में मिलने वाली असफलता और उसके परिणामों को बड़ी संवेदनशीलता से दिखाया गया है। समाज के पारंपरिक मूल्यों और अपेक्षाओं का पात्रों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को भी इन कहानियों में उजागर किया गया है। युवाओं में उठने वाली यौन भावनाओं को बिना किसी झिझक के प्रस्तुत किया गया है। कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलताओं को भी दिखाया गया है। आधुनिक युवाओं की बदलती जीवनशैली और उनके सामने आने वाली चुनौतियों को भी इन कहानियों में शामिल किया गया है।

संजीव की कहानियाँ आधुनिक युवाओं के लिए एक दर्पण की तरह हैं। ये कहानियाँ हमें हमारे समाज की उन समस्याओं से रूबरू कराती हैं जिनके बारे में हम अक्सर चुप रहते हैं। इन कहानियों के माध्यम से, लेखक ने प्रेम, विवाह और यौन संबंधों जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर एक गहन चर्चा को प्रेरित किया है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

01. संजीव की कथा यात्रा : पहला पड़ाव, संजीव, पृ.389

02. गली के मोड़ पे सुना-सा कोई दरवाजा, संजीव, पृ.178

03. वही, पृ. 182-183

04. झूठी है तेतरी दादी, संजीव, पृ.91

Mob : 8073466950 Email : sbkallur8@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 151-153
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

पत्रकारिता के क्षेत्र में हिंदी की भूमिका एवं रोजगार की संभावनाएं

मोनिका मेहता, शोधार्थी हिंदी पीएचडी,
सीएमआर विश्वविद्यालय बेंगलुरु
सहायक प्राध्यापक -आय.पी.एस एकेडमी इंदौर।

प्रस्तावना -हिंदी रोजगार के अवसर प्रदान करने वाली भाषा है। दुनिया की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा हिन्दी है। पत्रकारिता के क्षेत्र में हिंदी को ज्यादा प्रचलित करने का प्रयास किया गया है ।पत्रकारिता के माध्यम से हिंदी भाषा को लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। भारतीय भाषा के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय देशों में भी हिंदी का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। भारत देश के साथ-साथ विदेश में भी हिंदी पत्रकारिता को प्रकाशित किया जाने लगा है। हिंदी को लेकर रोजगार के कई क्षेत्र में अवसर प्रदान किए गए जाने लगे हैं। केंद्र सरकार, राज्य सरकारों के विभिन्न विभागों में हिंदी भाषा में काम करना अनिवार्य हो गया है।समाचार पत्र व समाचार चैनलों की निरंतर बढ़ती हुई संख्या के कारण आज पत्रकारिता के क्षेत्र में मांग बढ़ती जा रही है।आज के समय में हिंदी पत्रकारिता के रूप में संपादक,उपसंपादक, प्रूफ्रीडर, अनुवादक, शिक्षा, समाचार वाचक, अध्यापन का क्षेत्र आदि कई प्रकार के क्षेत्र में हिंदी रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

- **पत्रकारिता में हिंदी की भूमिका** हिंदी पत्रकारिता का आघार स्तंभ बनी। शुरुआती समय जो हिन्दी पत्रकारिता का स्वर्ण युग कहा गया। हिंदी को गौरवमयी स्थान दिलाने का प्रयास में पत्रकारिता की अहम भूमिका अदा की है। हिंदी पत्र-पत्रिकाएं का आरंभ प्रथम उत्थान (1826-1867) से माना है। दूसरा उत्थान (1868-1885), तृतीय उत्थान (1886-1900) तक माना है। इन तीनों उत्थानों में हिंदी पत्रिका के माध्यम से जनता में जागरण और सुधार की भावना, अन्याय का प्रतिकार, जाति-वर्ग के उत्थान, और धार्मिक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ हुआ। तीसरी उत्थान में राजनीतिक चेतना को उजागर करने का प्रयास किया है। द्विवेदी युग, छायावाद, स्वातंत्र्योत्तर युग, आदि में हिंदी पत्रकारिता का विकास होने लगा। सन 1900 में प्रकाशित सरस्वती पत्रकारिता की परम्परा को

समृद्ध तथा परिष्कृत किया है। सामाजिक सांस्कृतिक चेतना ने हिंदी साहित्य को नई दिशा दी।1908 में केसरी पत्र का संस्करण "**हिंदीकेसरी**" नाम से प्रकाशित हुआ।

'सरस्वती पत्रिका' ने भाषा तथा साहित्य दोनों क्षेत्र में नए युग का निर्माण किया। 1947 जब देश आजाद हुआ तब पत्रकारिता ने एक नया मोड़ लिया जिसमें औद्योगीकरण एवं पूंजीवाद और व्यापारिक स्वार्थ निष्ठा के साथ विकास होने लगा। हिंदी में प्रतीक, समीक्षा, नवलेखन, आलोचना, आदि पत्रिकाओं का हिंदी में विकास हुआ।

- **विदेशों में हिंदी पत्रकारिता** - आज के युग में भारत के साथ-साथ विदेश में भी हिंदी भाषा तथा हिंदी पत्रिकाओं का चलन बढ़ गया है। विदेशों में भी हिंदी पत्रिका को लेकर रोजगार बढने का प्रयास भारत के साथ-साथ विदेश में भी बढ़ गया है।जैसे बांग्लादेश, नेपाल, जापान, चीन, यूरोप, रूस, ब्रिटेन, अफ्रीका आदि कई देश है जहां पत्रकारिता तथा समाचारों को बढ़ावा दिया गया है। फिजी, कनाडा, में हिंदी पत्रकारिता तथा रोजगार की संभावनाएं बढ़ती जा रही है। विदेशों में हिंदी की मान्यता को बढ़ावा देने के कारण वहां के विश्वविद्यालय में भी हिंदी का अध्यापन कार्य प्रारंभ हुआ।
- **रोजगार की संभावनाएं** -हिंदी भाषा को लेकर आज के इस नवीन युग में कई विभिन्न प्रकार की रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। जीवन में सफलता के लिए हिंदी भाषा में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।
- हिंदी पत्रकारिता में रोजगार
- राजभाषा अधिकारी बनकर हिंदीं की सेवा
- हिंदी में अध्यापन काक्षेत्र
- हिंदी भाषा के अनुवादक
- हिंदी में समाचार वाचक
- हिंदी में रचनात्मक लेखन

1 हिंदी पत्रकारिता में रोजगार - हिंदी पत्रकारिता में रोजगार प्राप्त करना एक आकर्षक अवसर है। जो प्रतिभावान छात्र-छात्राओं ओर युवाओं के लिए है। युवाओं हिंदी भाषा को लेकर उत्साहित होते हैं वह हिंदी को लेकर रोजगार प्राप्त करने में सक्षम है। हिंदी भाषा का ज्ञान तथा वाचन प्रकिया से रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

2 राजभाषा अधिकारी बनकर हिंदीं की सेवा - हिंदी को राजभाषा के रूप में सरकार ने घोषित किया है। राज्य में सरकारी कार्यालय एवं केंद्रीय संस्थानों में हिंदी के लिए अधिकारी नियुक्त किए जाते हैं। हिंदी भाषा से कामकाज को सरल करने के लिए सभी सरकारी कार्यालय में हिंदी अधिकारी के रूप में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

3 हिंदी में अध्यापन काक्षेत्र- हिंदी भाषा में अध्यापन का सबसे अच्छा तथा सुगम क्षेत्र है। हिंदी भाषा में व्यक्ति उच्च शिक्षा प्राप्त करके हिंदी भाषा में रोजगार प्राप्त कर सकता है। अध्यापन के

क्षेत्र में कई विभिन्न परीक्षा पास करके विद्यालय तथा महाविद्यालय में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

4 हिंदी भाषा के अनुवादक - अनुवाद का अर्थ किसी एक भाषा के विचार दूसरी भाषा में परिवर्तित करना अनुवाद कहलाता है। इस क्षेत्र में व्यक्ति अपनी सामर्थ्य के बल पर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। देश-विदेश, मीडिया संस्थान, राजनीतिक तथा पर्यटन से जुड़े संस्थान पर हिंदी भाषा में रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

5 हिंदी में समाचार वाचक - हिंदी में समाचार वाचक का काम कर सकते हैं। दशकों समाचार तथा मनोरंजन के रुप में भी समाचार पढ़कर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। देश-विदेश की जानकारी जो अन्य भाषा में होती है उसे रूपांतरण करके हिंदी में बताने का अवसर से रोजगार प्राप्त कर सकते हैं।

6 हिंदी में रचनात्मक लेखन - हिंदी भाषा को लेकर रचनात्मक लेखन जो स्वतंत्र और सृजनात्मक लेखन से रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। हिंदी भाषा में रोजगार प्राप्त करने के अच्छे अवसर भारत के कई ऐसे स्थान जहां हिंदी में रोजगार प्राप्त कर सकते हैं। जिसमें महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश,नई दिल्ली, उत्तरप्रदेश, तमिलनाडु, आंधप्रदेश, ऐसे कई देश के संस्थान में रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

निष्कर्ष - हिंदी भाषा में बढ़ते रोजगार तथा विदेशों में हिंदी भाषा का बढ़ता चलन से रोजगार की संभावना बढ़ती जा रही है। व्यक्ति अपनी रुचि योग्यता और क्षमता के अनुसार रोजगार का चुनाव में हिंदी भाषा में रोजगार के भरपूर अवसर प्राप्त होने लगे हैं।

सन्दर्भ सूची -

1 हिंदी भाषा में रोजगार के अवसर

2 हिंदी साहित्य का इतिहास

3 www.hindikunj.com

4 प्रो.माघुरी गोडबोले

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 154-156
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

श्रीमद्भागवत में यात्रा विज्ञान

Prince kumar, Research scholar,
hindi dept. Patna university, Patna

श्रीमद् भागवत का भारतीय ज्ञान परंपरा में शीर्षस्थ स्थान है। इसे भारतीय वांडमय का मुकुटमणि भी माना जाता है। भारतीय धर्म ग्रंथो में इसे " वेदोपनिषदां साराज्जाता भागवत कथा" कह कर सम्मान दिया गया है।

सामान्य जन में श्रीमद् भागवत को सिर्फ एक धर्म ग्रंथ माना जाता है। इसके सुधी पाठक जन भी इसे वेद समान समझकर सम्मान देकर खुद को इति श्री कर लेते हैं। कुछ बुद्धिजीवियों के लिए यह एक मिथक कोश है, जिसका वर्तमान में कोई उपयोगिता नहीं है। इन सब से हटकर मैं आपका ध्यान इसका एक गुमनाम गुमनाम पहलू की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जिस पर आज तक संभवतः किसी ने ध्यान नहीं दिया है, वह है - यात्रा विज्ञान।

यात्रा विज्ञान यात्रा + विज्ञान दो शब्दों का मेल है। यात्रा सिर्फ भौगोलिक दूरियों को मापने का ही नाम नहीं है। भौगोलिक क्षेत्र का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक चित्रण का ही नाम नहीं है बल्कि किसी अवधारणा को तथ्य तक ले जाने का सफर को भी यात्रा कहते है। इस ग्रंथ में भौगोलिक यात्राओं के साथ-साथ इस सृष्टि के उत्पत्ति से लेकर मानव का जन्म तक की यात्रा भी वर्णित है।

सबसे पहले भौगोलिक यात्रा की बात करें तो इसमें हमारा देश और विश्व की भौगोलिक स्थितियों के बारे में आश्चर्यजनक वर्णन किया गया है। भारत जो कि जंबूदीप में स्थित है वह सात दीपों में सबसे भीतर स्थित है। इसका विस्तार एक लाख योजन है, जो कमल पत्र के समान गोलाकार है। इसमें नौ नौ हजार योजन वाले नौ वर्ष हैं, जिसे आठ पर्वत विभाजित करते हैं। इसके बीच में इलावृत नमक दसवां वर्ष है, जहां मेरु पर्वत है। इलावृत वर्ष के उत्तर में क्रमशः नील श्वेत शृंगवान नामक पर्वत है। पूर्व से पश्चिम तक खारे पानी के समुद्र फैले हुए हैं। इलावृत के दक्षिण में निषाद, हेमकूट और हिमालय नाम के तीन पर्वत है। यह पूर्व के पश्चिम की ओर फैले हुए है, जो दस हजार योजन ऊंचे है।

बिना यात्रा के भारत के भूगोल की इतनी सटीक जानकारी देना असंभव है। इतना ही नहीं, चारों दिशाओं में किस-किस तरह के फल वनस्पति फूल उगते है, किस क्षेत्र में कौन सी नदियां प्रवाहित होती है, किस क्षेत्र का जल मीठा होता है, कहां का जलवायु सेहतमंद होता है, वहां की खेती पर भी सटीक जानकारियां मिलती है। हमारे पूर्वजों ने बिना साधन के भारत तथा विश्व की यात्रा कैसे की होगी यह भी ताजुब्ब का विषय है। भारत के अलावा पूरे विश्व की भौगोलिक स्थितियों की भी चर्चा की गई है।

भौगोलिक स्थितियों के अलावा इसमें ब्रह्मांड की गति पर भी प्रकाश डाला गया है। सूर्य तथा उसकी गति का वर्णन किया गया है। इसमें वर्णित है कि सूर्य अपने ताप से तीनों लोको को तपाते और प्रकाशित करते हैं। वह उत्तरायण, दक्षिणायन और विषुवत नामावली क्रमशः मंद,शीघ्र और समान गति से चलते हुए समय अनुसार मकरादी राशियों में उंचे नीचे और सामान्य स्थानो में जाकर दिन रात को बड़ा, छोटा या समान करते हैं। जब सूर्य तुला राशि पर आते हैं तब दिन रात समान होते है। दक्षिणायन आरंभ होने तक दिन बढ़ते हैं और उत्तरायण लगने तक रात।

आप सोच सकते हैं कि अंतरिक्ष विज्ञान की इतनी जानकारी हमारे पूर्वजों को कहां से आई? इतना ही नहीं इसमें भिन्न-भिन्न ग्रहों की, नक्षत्रों की स्थितियां और उनकी गतियों का भी वर्णन किया गया है। बिना विज्ञान के प्रत्येक ग्रह तथा उनकी गतियो के बारे में बतलाना असंभव है।

इसमें समय पर भी अद्भुत वर्णन किया गया है। कुछ पंक्तियां निम्नलिखित है जिसे पढ़कर आप दंग रह जाएंगे। दो परमाणु मिलकर एक अणु होता है। तीन अणु के मिलने से एक त्रसरेणु होता है, जो झरोखे में से होकर आई हुई सूर्य की किरणो को आकाश में उड़ता हुआ देखा जाता है। ऐसे तीन त्रसरेणु को पार करने में सूर्य को जितना समय लगता है उसे त्रुटि कहते है्। इससे सौ गुना काल वेध कहलाता है। तीन वेध का एक लव होता है, तीन लव को एक निमेष, तीन निमेष को एक क्षण, पांच क्षण को एक काष्ठा,पंद्रह काष्ठा को एक लघु, पंद्रह लघु को एक दंड कही जाती है। दो दंड का एक मुहूर्त, छह मुहूर्त को एक प्रहर कहा जाता है। चार-चार पहर के दिन रात होते हैं तथा पंद्रह पंद्रह दिन रात का एक पक्ष होता है। शुक्ला और कृष्ण पक्ष मिलकर एक महीना जो कि पितरों का एक दिन होता है। दो महीना का एक ऋतु, छह महीने का एक आयण ...आदि।

इस प्रकार एक परमाणु से लेकर ब्रह्मांड की आयु बताई गई है। इन सबके अलावा सृष्टि का विस्तार का विवरण है जिसे आज का बिग बैंग थ्योरी मिलती-जुलती है। ऐसे ही अन्य पहलू मौजूद है। बिना विज्ञान तथा यात्रा के इतनी जानकारियां हो ही नहीं सकती है। यात्रा करने से विज्ञान का उन्मेष होता है तथा विज्ञान से यात्रा जगत बहुआयामी होता है।

संदर्भ सूची

1. सुधा सागर, गीताप्रेस गोरखपुर 69 वा संस्करण
2. श्रीमद् भागवत, सुधा सागर, गीताप्रेस गोरखपुर 69 वां संस्करण

3. वही, तृतीय स्कंद
4. वही,11 अध्याय
5. वही,12 अध्याय
6. वही, पंचम स्कंद
7. वही,19 वा अध्याय
8. वही, 20 वां अध्याय
9. वही, 21 वा अध्याय
10.वही, 22 वां अध्याय
11. वही, 24 अध्याय

Mob. 9471947431 Email. - rajupsc21@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com **Bohal Shodh Manjusha** **ISSN: 2395-7115**
Impact Factor:7.523 **December 2024** **Page No. : 157-161**
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण

डॉली प्रजापति, शोधार्थी,
हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, म.प्र.

सार

विष्णु प्रभाकर, हिंदी साहित्य के एक प्रतिष्ठित लेखक हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से समाज और जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया है। उनकी यात्रा वृत्तों में प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने अपनी यात्राओं के दौरान प्रकृति के विभिन्न रूपों को बड़ी संवेदनशीलता और गहराई के साथ चित्रित किया है। विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्रकृति का चित्रण केवल बाहरी सौंदर्य तक ही सीमित नहीं रहता, बल्कि वे प्रकृति को एक जीवंत इकाई के रूप में प्रस्तुत करते हैं। वे प्रकृति के साथ मानव के संबंध को भी गहराई से उजागर करते हैं। उनके वृत्तों में हम पहाड़ों की ऊंचाइयों, नदियों के प्रवाह, जंगलों की शांति और समुद्र की विशालता को महसूस कर सकते हैं। विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों ने हिंदी साहित्य में यात्रा साहित्य की एक नई परंपरा की शुरुआत की। उन्होंने प्रकृति के सौंदर्य को शब्दों में बांधने का एक नया तरीका विकसित किया। उनके वृत्तों ने पाठकों को प्रकृति के प्रति जागरूक किया और उन्हें प्रकृति के संरक्षण के लिए प्रेरित किया। विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण हिंदी साहित्य का एक अनमोल खजाना है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रकृति के प्रति हमारे दृष्टिकोण को बदल दिया है। उनके वृत्त आज भी प्रासंगिक हैं और हमें प्रकृति के महत्व को समझने में मदद करते हैं।

मुख्य शब्द

यात्रा, प्राकृतिक, सौन्दर्य

भूमिका

विष्णु प्रभाकर ने अपने यात्रा वृत्तों में प्रकृति का वर्णन करते हुए उसकी विविधता को उजागर किया है। उन्होंने पहाड़ों की ऊंचाई, नदियों की धारा, जंगलों की हरियाली और समुद्र की लहरों का बड़ा ही सुंदर चित्रण किया है। उनकी लेखनी में प्रकृति की हर छोटी-छोटी चीज, जैसे कि पत्तों की सरसराहट, पक्षियों का चहचहाना और फूलों की खुशबू, जीवंत हो उठती है।

विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में हिमालय पर्वत का वर्णन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे हिमालय को एक पवित्र स्थल मानते हैं और उसकी प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन करते हुए वे मानव जीवन के मूल्यों और आदर्शों से भी जोड़ते हैं। वे हिमालय की ऊंचाइयों को आत्मिक उन्नति का प्रतीक मानते हैं।

विष्णु प्रभाकर ने अपने यात्रा वृत्तों में प्रकृति और मानव जीवन के बीच के गहरे संबंध को भी दिखाया है। उन्होंने बताया है कि कैसे प्रकृति मनुष्य को शांति और सुकून देती है। उन्होंने यह भी बताया है कि कैसे प्रकृति मनुष्य को प्रेरणा देती है और उसे जीवन के सत्य को समझने में मदद करती है।

विष्णु प्रभाकर प्रकृति के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। उनके लेखन में प्रकृति के प्रति प्रेम और सम्मान झलकता है। उन्होंने प्रकृति के दोहन के खतरों की ओर भी ध्यान दिलाया है। विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्रकृति का एक महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने यात्रा वृत्तों के माध्यम से पाठकों को प्रकृति की सुंदरता से रूबरू कराया है और उन्हें प्रकृति के प्रति जागरूक बनाया है। उन्होंने पहाड़ों की ऊंचाई, नदियों की धारा, जंगलों की हरियाली, फूलों के रंग और सुगंध, पक्षियों के कलरव और जानवरों के आवाजों को बड़े ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। उनके वर्णन में प्रकृति का प्रत्येक तत्व एक जीवंत रूप धारण कर लेता है।

विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्रकृति केवल एक सुंदर दृश्य नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन से गहराई से जुड़ी हुई है। उन्होंने प्रकृति के साथ मानव के संबंधों को बड़े ही सूक्ष्म ढंग से चित्रित किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे प्रकृति मानव को शांति और सुकून देती है, कैसे प्रकृति की गोद में मानव अपनी समस्याओं को भूल जाता है और कैसे प्रकृति मानव को प्रेरणा देती है। विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों से यह स्पष्ट होता है कि वे प्रकृति के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। उन्होंने प्रकृति के साथ छेड़छाड़ के खतरों को भी उजागर किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे मानवीय गतिविधियां प्रकृति को नुकसान पहुंचा रही हैं और कैसे हमें प्रकृति का संरक्षण करना चाहिए।

विष्णु प्रभाकर ने अपने यात्रा वृत्तों में सरल और सहज भाषा का प्रयोग किया है। उनकी भाषा में भावुकता और मार्मिकता का सम्मिश्रण है। उन्होंने अपने वर्णनों में कई तरह के अलंकारों का प्रयोग किया है, जिससे उनके वर्णन और भी अधिक प्रभावशाली हो गए हैं।

- विवरणात्मक शैली: विष्णु प्रभाकर अपनी यात्राओं के दौरान देखे गए दृश्यों का अत्यंत विस्तृत वर्णन करते हैं। वे प्रकृति के रंगों, आकारों और ध्वनियों को शब्दों में बांधने में माहिर हैं।
- प्रतीकात्मकता: वे प्रकृति को अक्सर मानवीय भावनाओं और अनुभवों का प्रतीक बनाते हैं। उदाहरण के लिए, पहाड़ों को वे दृढ़ता और स्थिरता का प्रतीक मानते हैं, जबकि नदियों को जीवन का प्रवाह।

- प्रकृति और मानव का संबंध: वे प्रकृति और मानव के बीच गहरे संबंध को दर्शाते हैं। वे बताते हैं कि कैसे प्रकृति मानव को शांति और सुकून देती है और कैसे मानव प्रकृति को नुकसान पहुंचा रहा है।

विष्णु प्रभाकर के यात्रा वृत्तों में प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण

विष्णु प्रभाकर, एक प्रतिष्ठित यात्री और लेखक, ने अपने यात्रा वृत्त में जमुना-गंगा के तैहर के प्राकृतिक सौन्दर्य का अद्भुत चित्रण किया है। उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से इस क्षेत्र की प्राकृतिक सुंदरता को इतने जीवंत तरीके से चित्रित किया है कि पाठक स्वयं उस मनोरम दृश्य को देख पाते हैं।

प्रभाकर ने जमुना और गंगा नदियों के प्रवाह को बड़े ही भावुकता से चित्रित किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे ये नदियां अपनी धीमी गति से प्रवाहित होती हुई, चारों ओर शांति का वातावरण बनाती हैं। नदियों के किनारे लगे वृक्षों की छाया और पानी में तैरते हुए पक्षियों की चहचहाहट, इस शांति को और भी गहरा बना देती है।

प्रभाकर ने इस क्षेत्र की विविधतापूर्ण वनस्पति का भी वर्णन किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे विभिन्न प्रकार के वृक्ष, झाड़ियां और फूल इस क्षेत्र को रंग-बिरंगा बनाते हैं। उन्होंने इनकी सुगंध और सुंदरता का भी वर्णन किया है। जमुना-गंगा के तैहर में पशु-पक्षियों की एक विस्तृत विविधता पाई जाती है। प्रभाकर ने इन पशु-पक्षियों का भी वर्णन किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे ये पशु-पक्षी अपने प्राकृतिक आवास में स्वतंत्र रूप से विचरण करते हैं।

प्रभाकर ने इस क्षेत्र के प्राकृतिक सौंदर्य और मानवीय जीवन के बीच के संबंध को भी उजागर किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे स्थानीय लोग इस प्राकृतिक सौंदर्य से जुड़े हुए हैं और इसका लाभ उठाते हैं। प्रभाकर ने इस क्षेत्र के प्राकृतिक सौंदर्य के संरक्षण की आवश्यकता पर भी जोर दिया है। उन्होंने बताया है कि कैसे बढ़ती हुई जनसंख्या और औद्योगीकरण इस क्षेत्र के प्राकृतिक सौंदर्य को खतरे में डाल रहे हैं।

विष्णु प्रभाकर का यात्रा वृत्त, जमुना-गंगा के तैहर के प्राकृतिक सौंदर्य का एक अद्भुत चित्रण है। उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से इस क्षेत्र की सुंदरता को इतने जीवंत तरीके से चित्रित किया है कि पाठक स्वयं उस मनोरम दृश्य को देख पाते हैं। यह यात्रा वृत्त हमें प्रकृति के प्रति प्रेम और सम्मान करने के लिए प्रेरित करता है।

प्रभाकर ने अपने वृत्त में जमुना-गंगा के संगम स्थल को एक ऐसे स्थान के रूप में चित्रित किया है जहां प्राकृतिक सौंदर्य अपने चरम पर है। उन्होंने नदियों के निर्मल जल, हरे-भरे वृक्षों, रंग-बिरंगे फूलों और विभिन्न प्रकार के पक्षियों का विस्तृत वर्णन किया है। उन्होंने इस स्थान की शांति और एकांत को भी उजागर किया है, जो पाठक को इस स्थान की यात्रा करने के लिए प्रेरित करता है।

विष्णु प्रभाकर ने 'ज्योतिपुंज हिमालय' में हिमालय की प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन करते हुए कई पहलुओं पर प्रकाश डाला है। उन्होंने हिमालय की ऊंची चोटियों, घने जंगलों, झरनों, नदियों और झीलों का इतना सुंदर वर्णन किया है कि पाठक स्वयं को हिमालय की गोद में बैठे हुए महसूस करता है। लेखक ने हिमालय के विभिन्न मौसमों का भी बड़ा ही मनोहारी वर्णन किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे हिमालय में हर मौसम में प्रकृति एक नया रूप धारण करती है।

विष्णु प्रभाकर ने हिमालय की सुंदरता को चित्रित करने के लिए शब्दों का जादू बिखेरा है। उन्होंने सरल और सहज भाषा का प्रयोग करते हुए हिमालय की प्राकृतिक सुंदरता को इतने सटीक शब्दों में व्यक्त किया है कि पाठक उसके वर्णन को अपने मन में बसा लेते हैं। लेखक ने हिमालय के विभिन्न दृश्यों को चित्रित करने के लिए उपमाओं और रूपकों का भी खूब प्रयोग किया है। उन्होंने हिमालय की चोटियों को श्वेत कमलों से, घने जंगलों को हरे-भरे कालीन से और झरनों को मोती के हार से तुलना की है।

विष्णु प्रभाकर ने 'ज्योतिपुंज हिमालय' में प्रकृति के साथ एकात्मता का भाव व्यक्त किया है। उन्होंने हिमालय को केवल एक भौगोलिक स्थल नहीं, बल्कि एक जीवंत प्राणी के रूप में चित्रित किया है। लेखक ने हिमालय की शांति, एकांत और निर्मलता को महसूस किया है और पाठकों को भी इस भावना से जोड़ने का प्रयास किया है।

विष्णु प्रभाकर ने 'ज्योतिपुंज हिमालय' के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश भी दिया है। उन्होंने हिमालय की बढ़ती हुई प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाली क्षति पर चिंता व्यक्त की है। लेखक ने पाठकों से अपील की है कि वे हिमालय की सुंदरता को बनाए रखने के लिए प्रकृति का संरक्षण करें।

विष्णु प्रभाकर का 'ज्योतिपुंज हिमालय' एक ऐसा यात्रा वृत्त है, जो हिमालय की प्राकृतिक सुंदरता को शब्दों के माध्यम से जीवंत कर देता है। लेखक ने अपनी रचना में हिमालय के विभिन्न पहलुओं को बड़े ही मार्मिक ढंग से चित्रित किया है। यह पुस्तक उन सभी लोगों के लिए एक अनमोल उपहार है, जो प्रकृति से प्रेम करते हैं और हिमालय की सुंदरता का अनुभव करना चाहते हैं।

विष्णु प्रभाकर, हिंदी साहित्य के एक प्रतिष्ठित लेखक हैं, जिन्होंने अपनी यात्रा वृत्तों के माध्यम से पाठकों को भारत के विभिन्न कोनों की यात्रा कराई है। उनकी कृति 'हँसते निर्झर दहकती मट्टी' एक ऐसा ही यात्रा वृत्त है, जिसमें उन्होंने प्रकृति के सौंदर्य को अत्यंत मार्मिक और चित्रात्मक ढंग से चित्रित किया है।

विष्णु प्रभाकर ने इस पुस्तक में प्रकृति के विभिन्न रूपों को बड़ी ही खूबसूरती से चित्रित किया है। उन्होंने हरे-भरे खेतों, ऊँचे पहाड़ों, बहते हुए नदियों, खिलते हुए फूलों और विभिन्न प्रकार के जीव-जंतुओं को अपने शब्दों से जीवंत कर दिया है। लेखक ने प्रकृति के साथ अपने भावनात्मक

जुड़ाव को भी बड़ी खुलकर व्यक्त किया है। उन्होंने प्रकृति को माँ के समान बताया है और उसके सानिध्य में उन्हें मिलने वाले शांति और सुकून को शब्दों में पिरोया है।

'हँसते निर्झर दहकती मट्टी' में लेखक ने भारत की भौगोलिक विविधता को भी उजागर किया है। उन्होंने हिमालय की बर्फीली चोटियों से लेकर दक्षिण भारत के उष्णकटिबंधीय जंगलों तक की यात्रा कराई है। उन्होंने हर जगह की प्राकृतिक विशेषताओं को बड़ी बारीकी से चित्रित किया है। चाहे वह हिमालय की घाटियों में बहने वाली नदियाँ हों या फिर रेगिस्तान में उगने वाले पौधे, लेखक ने हर चीज़ को बड़ी ही संवेदनशीलता के साथ देखा है।

विष्णु प्रभाकर ने इस पुस्तक में मानवीय जीवन और प्रकृति के बीच के संबंध को भी गहराई से उजागर किया है। उन्होंने बताया है कि कैसे मानव जीवन प्रकृति पर निर्भर है और प्रकृति मानव जीवन को कैसे प्रभावित करती है। उन्होंने प्रकृति के दोहन के खतरों की ओर भी इशारा किया है और प्रकृति संरक्षण की आवश्यकता पर बल दिया है।

विष्णु प्रभाकर की भाषा सरल और सहज है, जिससे आम पाठक भी उनके विचारों को आसानी से समझ सकते हैं। उन्होंने अपनी भाषा में कई मुहावरे और लोकोक्तियाँ का प्रयोग किया है, जिससे उनकी भाषा और भी अधिक प्रभावशाली बन गई है। लेखक की शैली चित्रात्मक है और उनके वर्णन इतने सजीव हैं कि पाठक खुद को उस दृश्य में महसूस करते हैं।

'हँसते निर्झर दहकती मट्टी' एक ऐसा यात्रा वृत्त है, जो प्रकृति प्रेमियों के लिए एक खजाने से कम नहीं है। इस पुस्तक को पढ़कर पाठक न केवल भारत की प्राकृतिक विविधता से परिचित होंगे, बल्कि प्रकृति के प्रति उनके प्रेम में भी वृद्धि होगी। विष्णु प्रभाकर ने अपनी इस कृति के माध्यम से प्रकृति संरक्षण का संदेश भी दिया है।

निष्कर्ष

विष्णु प्रभाकर, हिंदी साहित्य के एक प्रतिष्ठित लेखक हैं, जिन्होंने अपने यात्रा वृत्तों के माध्यम से प्राकृतिक सौंदर्य का एक अद्भुत चित्रण किया है। उन्होंने अपनी यात्राओं के दौरान प्रकृति के विभिन्न रूपों को बारीकी से देखा और अपने शब्दों से उन्हें जीवंत किया है। उनके यात्रा वृत्तों में प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन करते हुए उन्होंने न केवल प्रकृति की सुंदरता को उजागर किया है, बल्कि उससे जुड़े मानवीय भावों और अनुभवों को भी गहराई से चित्रित किया है।

संदर्भ

1. विष्णु प्रभाकर, हँसते निर्झर दहकती भट्टी, 1966, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली पृ-5
2. विष्णु प्रभाकर, जमना गंगा के नैहर में, 1964, सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ-76
3. विष्णु प्रभाकर हँसते निर्झर दहकती भट्टी, 1966, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृ-6
4. अज्ञेय, अरे यायावर रहेगा याद, 1975, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृष्ठ-81-82
5. विष्णु प्रभाकर, ज्योतिपुंज हिमालय, 1982, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ-15
6. विष्णु प्रभाकर, हिम शिखरों की छाया में, 1988, राजपाल एंड संस, दिल्ली

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 162-166
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

अरस्तु का राजनीति-विज्ञान में योगदान

कैलाश चन्द सैनी, सहायक आचार्य राजनीति विज्ञान,
राजकीय महाविद्यालय, बनेड़ा जिला शाहपुरा ।

अरस्तु का जीवन परिचय :-
नाम- अरस्तु
जन्म - 384 ईसा पूर्व
जन्मस्थान - यूनानी उपनिवेश स्टेगीरा में
मृत्यु - 322 ईसा पूर्व
मृत्यु स्थान - यूकिया द्वीप में स्थित कैल्सिस नगर मे
पिता का नाम- निकोमाचस
माता का नाम- पेरिक्टोन
अरस्तु का मूल नाम - स्टेगीरा का अरस्तु
गुरु का नाम - प्लेटो
पत्नी का नाम - हपिलिस
शिक्षा - एथेन्स में प्लेटो की अकादमी में
प्रसिद्ध रचना - राजनीति' The Politics
उपलब्धि - राजनीति-विज्ञान के जनक

व्यक्तित्व- अरस्तु एक महान लेखक थे। राजनीति के अलावा आध्यात्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र ,सौन्दर्य शास्त्र तथा प्राकृतिक विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं पर अपने युग के सन्दर्भ में गम्भीर व प्रभावशाली लेखन कार्य किया। अरस्तु एक महान शिक्षक था उसने एथेंस में 'लाइसियम' नामक अकादमी की स्थापना की। लगभग 12 साल तक अरस्तु इसका अध्यक्ष रहा। शिक्षा अरस्तु के लिए नैतिकता की कसौटी है। उसके अनुसार सद्गुण, बुद्धि और खुशी शिक्षा के माध्यम से हासिल की जा सकती है। जीने की कला सीखने की चीज है। अरस्तु ने शिक्षा के राजनीतिक उद्देश्यों पर बल देते हुए कहा कि "शिक्षा का अर्थ नागरिकों को संविधान के अनुसार जीवन-पद्धति मे शामिल करना है।"

अरस्तु की रचनाएँ :-

अरस्तु एक महान लेखक व दार्शनिक ग्रन्थ लिखे। राजनीतिक विषयों की दृष्टि से उसकी सर्वोत्तम रचना 'राजनीतिक ' (Politics) है। फोस्टर इस इस रचना को प्राचीन यूनानी राज-दर्शन का सर्वोत्तम प्रतिनिधित्व करने वाला ग्रन्थ माना है। जेलर इसे सर्वाधिक मूल्यवान 'निधि' मानता है | 'राजनीति' के अलावा एथेनी पॉलिटी', नीतिशास्त्र, जैसे ग्रन्थों की रचना भी अरस्तु ने की।

अरस्तु का राजनीति-विज्ञान मे योगदान - अरस्तु के सम्पूर्ण राजनीतिक दर्शन में अनेक महत्वपूर्ण तत्व है जो अरस्तु के युग से आधुनिक समय तक अपना विशेष महत्व रखते हैं | ऐसे तत्वों को ही अरस्तु के चित्र में निहित शाश्वत या फिर सार्वभौमिक तत्व कहा हैं। अरस्तु के राजनीतिक विज्ञान में योगदान को निम्न बिन्दुओं में स्पष्ट किया जा सकता है |

कानून की सर्वोच्यता का प्रतिपादन :- अरस्तु ने अपने गुरु प्लेटो के विपरीत जाते हुए कानून के शासन को महत्व दिया। अरस्तु के अनुसार कानून में सामूहिक विवेक तथा सार्वभौमिकता का तत्व पाया जाता है। उसके अनुसार श्रेष्ठ व्यक्ति की तुलना में कानून का शासन सही होता है, क्योंकि यह शासक वर्ग के अनावश्यक अहंकार को रोकता है, शासन-सत्ता के दुरुपयोग को रोकता है। कानून के शासन का सिद्धान्त, अरस्तु की एक ऐसी सबसे महत्वपूर्ण देन जो उसने आगामी पीढ़ियों को प्रदान की है अरस्तु अनेक बार इस बात को दोहराया है कि शासन तो कानून का ही होना चाहिए, किसी व्यक्ति विशेष का नहीं ।

सम्प्रभुता का अग्रगामी :- अरस्तु ने ऐसी सर्वोच्च शक्ति' का उल्लेख किया, जिसका विकसित रूप सम्प्रभुता की आधुनिक अवधारणा को कहा जा सकता है अरस्तु के अनुसार विधि में सर्वोच्च शक्ति निहित होती है | और शासक वर्ग इस सर्वोच्च शक्ति का प्रयोग कर्ता होता है। अरस्तु के इन सर्वोच्च शक्ति सम्बंधी विचारों को जोन ओस्टिन की सम्प्रभुता के सिद्धान्त का अग्रगामी माना जा सकता है |

मध्यम मार्ग का सिद्धान्त :- अरस्तु के अनुसार, सभी प्रकार के अतिवाद बुरे होते हैं सभी प्रकार के राजनीतिक अतिवाद, का विरोध करते हुए राजनीतिक क्षेत्र में मध्यम मार्ग का समर्थन किया। इसीलिए केटलीन अरस्तु को मध्यम वर्ग दार्शनिक कहता है।

अरस्तु ने सभी प्रकार के शासनों का विरोध करते हुए मध्यम वर्ग के संवैधानिक तंत्र ('संयत) प्रजातंत्र का समर्थन किया | उसके अनुसार संवैधानिक तंत्र' सभी प्रकार के अतिवाद से मुक्त है! इसलिए अरस्तु मध्यम वर्ग के शासन संवैधानिक तंत्र को मध्यम वर्ग का सबसे अच्छा तथा व्यावहारिक शासन मानता है। अरस्तु आर्थिक क्षेत्र में भी सम्पति की सीमित मात्रा का समर्थन करता है।

आधुनिक व्यक्तिवाद का जनक :- अरस्तु के दर्शन में ऐसे अनेक तत्व है, जो उसे आधुनिक व्यक्तिवाद का जनक सिद्ध करते हैं जैसे- अरस्तु ने प्लेटो की तरह राज्य को एक सावयव माना

है, परन्तु उसने राज्य को निरंकुश सत्ता को नहीं सौंपा। उसने राज्य को सत्ता देते हुए भी राज्य को साध्य और व्यक्ति को साधन नहीं माना है |

अरस्तु के अनुसार राज्य का उद्देश्य केवल व्यक्ति के जीवन की रक्षा करना नहीं है, बल्कि सुखी जीवन प्रदान करना भी है। यहां भी अरस्तु ने राज्य को व्यक्ति के सुख में वृद्धि करने का साधन माना है। अरस्तु का यह विचार आधुनिक उपयोगिता वाद तथा। लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणाओं का पूर्वगामी है।

अरस्तु 'ने राज्य की बहुलवादी प्रकृति का समर्थन किया। अनेक समुदायों में से राज्य को अरस्तु ने एक समुदाय माना है। वह राज्य की एकता के विचार का विरोध करता है और राज्य द्वारा व्यक्तियों व अन्य समुदायों पर पूर्ण नियंत्रण का विरोध करता है। अरस्तु व्यक्तियों व समुदायों के व्यक्तित्व को राज्य से स्वतंत्र तथा भिन्न मानता है। इस प्रकार अरस्तु में आधुनिक, बहुलवादी विचारधारा के लक्षण विद्यमान है।

संविधान सम्बंधी विचार:- संविधान सम्बंधी विचार भी अरस्तु के मौलिक है। उसने अपने ग्रन्थ (पालिटिक्स) में संविधान सम्बंधी समस्या पर गहन विचार किया है। अरस्तु ने यूनानी नगर राज्यों के 158 संविधानों का अध्ययन किया तथा संविधानों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया | उसका संविधानों का वर्गीकरण का विचार लम्बे समय तक मान्य रहा है। अरस्तु द्वारा प्रस्तुत संविधानों के वर्गीकरण से आगे आने वाले अनेक विद्वानों ने प्रेरणा ग्रहण की। बाकर के अनुसार " संविधान का अध्ययन आधुनिक राजनीति का प्रमुख विषय है और सारा राजनीति शास्त्र इसके लिए अरस्तु का ऋणी है।"

स्वतंत्रता व समानता सम्बंधी विचार :- अरस्तु को इस बात के लिए भी याद किया जाता है कि उसने स्वतंत्रता व समानता में सन्तुलन स्थापित करने की कोशिश की है। इस दृष्टि से वह निरंकुश - दार्शनिक शासक की जगह संवैधानिक तंत्र की स्थापना का समर्थन करता है | वस्तुतः स्वतंत्रता और समानता में सन्तुलन स्थापित करने का विचार आधुनिक युग में भी लोकप्रिय है |

शासन के तीन वर्ग तथा शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त :-

अरस्तु को आधुनिक शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का भी पूर्वगामी माना जाता है। अरस्तु ने शासन के तीन अंगों का उल्लेख किया है।

ये तीन क्रमश: :- 1. सभा 2. प्रशासक 3. न्यायकर्ता ।

वस्तुत शासन के यह तीन अंग आज के आधुनिक युग में व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के लगभग समान है। अरस्तु ने आज के शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त की तरह तीनों अंगों के अलग-अलग कार्य भी बताइए है | इसी विवरण के आधार पर माना जाता है कि वह आधुनिक शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का भी पूर्वगामी है।

राजनीति व आर्थिक वर्गों का सम्बन्ध :- अरस्तु ही वह प्रथम राजनीतिक विचारक है जिसने सर्वप्रथम राजनीतिक संस्थाओं की क्रियाओं पर आर्थिक वर्गों के प्रभाव का अध्ययन किया है।

अरस्तू बताता है कि सम्पन्न वर्ग तथा निर्धन वर्ग अपने स्वार्थी तथा वर्गीय हितों के अनुसार शासन का संचालन करते है। जब कि किसी राज्य में इन विपरीत वर्गों के आर्थिक हितों में विरोध उत्पन्न हो जाता है तब शासन की स्थिरता को नुकसान पहुंचता है। अरस्तु के अनुसार गम्भीर आर्थिक असमानता क्रान्ति को जन्म देती हैं। इसीलिए वह राज्य में राजनीतिक स्थिरता के लिए विशाल मध्यम वर्ग की उपस्थिति को आवश्यक मानता है | और मध्यम वर्ग के शासन संवैधानिक, तंत्र का समर्थन करता है।

तुलनात्मक पद्धति :- अरस्तु ही प्रथम विचारक है जिसने राजनीति शास्त्र के क्षेत्र में तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया है। उन्होंने तत्कालीन नगर राज्यों की समस्याओं का विश्लेषण करने के लिए विश्व के 158 संविधानों का अध्ययन किया। उसके निष्कर्ष तुलनात्मक होने के कारण वैज्ञानिक और सही है। अतः राजनीति विज्ञान के जनक के रूप में अरस्तु की पदवी राजनीतिक घटनाओं के अध्ययन में उनके तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किए जाने के कारण है |

ऐतिहासिक दृष्टिकोण :- अरस्तु ने वैज्ञानिक दृष्टि के साथ-साथ ऐतिहासिक दृष्टिकोण का भी प्रयोग किया है। उसने राज्य परिवार का विकसित रूप बताया है। उसने व्यक्ति से परिवार, परिवार से गाँव तथा गाँव से राज्य बनने तक के ऐतिहासिक दृष्टिकोण को ही अपनाया है। इसीलिए अरस्तु को सार्वभौमिक ऐतिहासिक पद्धति का जनक माना जाता है |

शिक्षा का सिद्धान्त :- अरस्तु ने राजनीतिक व्यवस्था की स्थापना के लिए शिक्षा को एक महत्वपूर्ण साधन माना है जो वर्तमान युग में भी प्रासंगिक हैं। शिक्षा ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करके उसे अच्छा और सच्चा नागरिक बनाती है। शिक्षा से मानव सही मानव बनता है। शिक्षा ही व्यक्ति के आत्मिक पक्ष का विकास करती है |

राज्य के पूर्ण सिद्धान्तों का क्रमबद्ध निरूपण :- राज्य का पूर्ण सैद्धांतिक वर्णन करने वाला पहला विचारक अरस्तु ही है | राज्य के जन्म ओर विकास से लेकर उसके स्वरूप निर्माण, संविधान रचना, ओर सरकार का निर्माण , नागरिकता की व्याख्या और कानून की सर्वोच्चता आदि महत्वपूर्ण विषयों पर अरस्तु ने लिखा है। अरस्तु के ये सभी विषय राज्य के लिए सामग्री सिद्धान्तों, इनका क्रमबद्ध विवेचन अन्य के विचारों में दिखाई नहीं देता है। इसी प्रकार अरस्तु ने मनुष्य को एक राजनीतिक प्राणी बताकर राजनीति शास्त्र को ऋणी बना दिया है।

राजनीति का नीतिशास्त्र से पृथक्करण :- अरस्तु ने सर्वप्रथम राजनीति शास्त्र को नीतिशास्त्र से अलग करके उसे एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में प्रतिष्ठित किया। उसके अनुसार नीतिशास्त्र का सम्बंध उद्देश्यों से है जबकि राजनीति शास्त्र का सम्बंध उन साधनों से हैं जिनके द्वारा उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है। अरस्तु ने राजनीति को नीतिशास्त्र से अलग करते हुए सर्वोच्च विज्ञान माना है। राजनीति सिद्धान्तों मैं अरस्तु की सबसे बड़ी महानता इस बात में निहित है कि उसने राजनीति शास्त्र को स्वतंत्र विज्ञान का स्वरूप प्रदान किया है।

उदारवादी लोकतंत्र का समर्थन :- अरस्तु ने अपना सर्वोत्तम संविधान 'संवैधानिक तंत्र' को बताया है, जो अपने मूल लक्षणों में आधुनिक उदारवादी लोकतंत्र के निकट है। अरस्तु ने शासन के क्षेत्र में विशेषज्ञों की राय की तुलना में बहुसंख्यकों की सामान्य-बुद्धि को महत्वपूर्ण माना | अरस्तु के अनुसार बहुसंख्यकों द्वारा यह निर्णय किया जाना चाहिए कि शासन का अधिकार किन व्यक्तियों को दिया जाये। उसके ये तर्क जनमत तथा लोकतंत्र के समर्थक माने जाते हैं।

निष्कर्ष :- अरस्तु की विचारधारा में शाश्वत या सार्वभौमिक तत्व निहित है। उसने अपने बाद के प्रत्येक युग को पर्याप्त रूप से प्रभावित किया है | मध्ययुगीन ईसाई विचारक सेण्ट थॉमस एक्वीनास अरस्तु को 'दार्शनिक' कहता है। आधुनिक युग के प्रारम्भ के प्रमुख विद्वान मैकियावली की पुस्तक 'द प्रिंस' पर अरस्तु के विचारों का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि इस ग्रंथ को अरस्तु के क्रांति संबंधी विचारों का विस्तार माना जाता है। आधुनिक युग में जीन बोदा, लॉक, रूसो , मांटेसक्यु , बर्क , कार्ल मार्क्स आदि ऐसे विचारक है जो किसी ने किसी रूप में अरस्तु के विचारों से प्रभावित है | अरस्तु के प्रभाव को देखते हुए ब्राउन ने अरस्तु को युगों का दार्शनिक कहा है |

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. श्रीराम वर्मा, प्रमुख राजनीतिक विचारक, परितोष वर्धन जैन C.BC- जयपुर

2. शर्मा डॉ. प्रभु दत्त - पाश्चात्य विचारों का इतिहास

3. ओ० पी० गाबा - पाश्चात्य राजनीतिक विचारक, मयूर पेपर बैग

4. डॉ अरुण चतुर्वेदी, मनोज कुमार बहरवाल, अभिमन्यु सिंह चौहान - पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन एवं विचारधाराएँ |

5. डॉ. बी. एल. फड़िया - आधुनिक राजनीतिक चिन्तन का इतिहास

6. डॉ एस० सी० सिंघल : पाश्चात्य राजनीतिक चिन्तन ।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 167-171
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

नाट्य कला का कॉलेज शिक्षा में महत्व

लीलाधर सहू, सहायक आचार्य
(विद्या संबल योजना) राजकीय महाविद्यालय पाटोदी

नाटक का अर्थ

जैसा की नाटक नाम से ही स्पष्ट हो जाता है की नाटक शब्द नट् से बना है जिसका अर्थ है अभिनय करना । नाटक के बारे में सर्वप्रथम आचार्य धनजय ने परिभाषा दी कि "अवस्थानुकृतिनाट्यम" अर्थात किसी अवस्था के अनुकरण को ही नाटक कहते हैं । भारतीय विद्वान नाट्यशास्त्र के प्रणेता आचार्य भरत मुनि ने नाटक के बारे में कहा है कि "देवताओं के द्वारा प्रार्थना करने पर ब्रह्मा जी ने ऋग्वेद से पाठ ,सामवेद से गान ,यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर नाटक नामक पंचम वेद की रचना की"। इस नाटक नामक पंचम वेद के लिए आचार्य विश्वकर्मा ने रंगमंच का निर्माण किया।

पाश्चात्य विद्वान पिशेल ने "कठपुतलियों के खेल व नाच से नाट्य साहित्य की उत्पत्ति मानी है" हम सभी यह जानते हैं कि रंगमंच विभिन्न ललित कलाओं का समायोजन है किसी विशेष स्थान या किसी मंच पर वास्तविक रूप से अपने अनुभवों को दर्शकों के सामने प्रस्तुत करना ही कलाकार की उपलब्धि होती है आज हमारे सामने छात्र-छात्राओं में व्यावहारिक ज्ञान का अभाव होने लगा है व्यवहारिक ज्ञान हमें अनुभव से प्राप्त होता है न की किसी किताबों से ।अपने जीवन को कुशल बनाने के लिए हमें व्यावहारिक होना पड़ेगा। किसी भी व्यक्ति एवं वस्तुओं के बारे में जब हम सोचते हैं, विचार और चिंतन करते हैं तभी हम उसकी उपयोगिता को समझ सकते हैं इन सब की जानकारी हमें कला और रंगमंच से प्राप्त हो सकती है क्योंकि रंगमंच या कोई कला का हमारे व्यक्तित्व एवं समाज पर बहुत ही व्यापक प्रभाव पड़ता है।

प्रमुख शब्द: नाट्य शास्त्र, उपयोगिता, मूल्यांकन, सुरक्षित, विनम्रता, सर्वांगीण, आलोचना, रमणीय, संवेदनशील, आत्मनिर्भर, अभिव्यक्ति आदि।

रंगमंच की उपयोगिता

रंगमंच इंसान को इंसान बनने के लिए प्रेरित करती है उसके अंदर छुपी हुई प्रतिभा को निखारती है स्वयं को अन्वेषण करने का मौका देती है मनुष्य को स्वाभाविक निर्णय लेने की

क्षमता को विकसित करने का कार्य रंगमंच करता है। रंगमंच या नाटक एक दर्पण के समान है जिसमें हम अपनी प्रतिभा का मूल्यांकन कर सकते हैं एवं मानव व्यवहार तथा भावनाओं को गहराई से समझ सकते हैं रंगमंच जीवन के सत्य को प्रकट करती कहानियों के द्वारा उन पर विभिन्न समय और सांस्कृतिक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करते हुए हमारे दृष्टिकोण को उच्च बनाती है।

रंग विमर्श में वरिष्ठ रंगकर्मी श्रीपाद जोशी ने कहा कि **नाट्य** विधा का वर्तमान समय में सबसे ज्यादा महत्व है नाट्य ही समाज को नई दिशा देने का काम करता है इसके द्वारा हम समाज को शिक्षा के साथ भारतीय संस्कृति के बारे में बताते हैं भारतीय संस्कृति और परंपराओं को बताने के लिए रंगमंच एक सशक्त माध्यम है। नाटक के माध्यम से छात्र अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकते हैं आक्रामकता और तनाव को एक सुरक्षित नियंत्रित वातावरण में जारी करने में नाटक उपयोगी है नाटक से प्रेरणा बढ़ती है और तनाव कम होता है।

नाट्यकला

नाट्य शिक्षण से शिक्षण प्रक्रिया में सरलता एवं विनम्रता आती है विद्यार्थियों में अभिनय कला की प्रवृत्ति का अवसर मिलता है साथ-साथ ही इस विधा से विद्यार्थियों में मानसिक और बौद्धिक विकास भी संतुलित होता है नाट्य शिक्षण से दृश्य साधनों का प्रयोग कर शिक्षक को रोचक बनाने का सर्वोत्तम तरीका माना गया है इस प्रक्रिया के तहत नाटक के द्वारा किसी भी घटना या चरित्र को रंगमंच के माध्यम से आसानी से समझाया जा सकता है विद्यार्थियों में श्रवण कौशल को विकसित करने के लिए नाट्य संवाद महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है नाटक के संवाद विद्यार्थियों को उचित हाव-भाव, आरोप - प्रत्यारोप, लय- गति , मौखिक अभिव्यक्ति का प्रशिक्षण प्राप्त होता है यह विद्यार्थियों को अपना भविष्य निर्धारित करने में भी मदद करता है विद्यार्थियों को भाषा ज्ञान वृद्धि करने में भी नाटक सहायक होते हैं छात्रों को नाटक के माध्यम से नए नए शब्दों एवं उनके वाक्य में उचित स्थान पर प्रयोग कर मुहावरों एवं लोकोक्तियां के उचित प्रयोग एवं विचार या वार्तालाप करने के ढंग का ज्ञान होता है नाटक आजकल छात्रों को विपरीत परिस्थितियों का सामना करना भी सिखाती है जिसे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी समर्थन बने रहने का हौसला देता है। विद्यार्थियों में मनुष्य जीवन के विविध पक्षों का बखूबी ज्ञान होता है इसी शिष्टाचार के साथ शिक्षा और अपने देश की सभ्यता संस्कृति से परिचित होने का अवसर मिलता है यह विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करता है छात्रों के सभी अलग-अलग पहलुओं पर कार्य करता है जिसे विद्यार्थियों में विषय के प्रति अरुचि विकसित होती है और साथ ही साथ नई रचनात्मक शक्तियों का विकास होता है ।

स्कूली शिक्षा की दृष्टि से नाटक शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्रों का मनोरंजन करना तथा उचित हावभाव-, स्वाध्याय, उतार चढ़ाव को निर्देशित करना-है माध्यमिक स्तर पर छात्रों को इन उद्देश्यों के साथ साथ मानव जीवन-केविभिन्न पक्षों से परिचित कराना एवं सही गलत की

साथ विद्यार्थियों में रचनात्मक -पहचान करना है वही उच्चशिक्षा में इन तमाम उद्देश्यों के साथ कौशल, निर्णय लेने की शक्ति, स्वस्थ अभिवृतियों का विकास, समीक्षात्मक आलोचना एवं नाटक पठन में रुचि, रंगमंच का समाज पर प्रभाव शिक्षण का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

नाटक का सामान्य परिचय तथा नाटक के तत्व

प्रमुख रूप से नाटक का प्रयोग काव्य या रंगमंच के लिए होता है काव्य के दो रूप होते हैं दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य। दृश्य और श्रव्य दोनों का सम्मिलित रूप का ही नाटक में प्रयोग होता है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र ,अग्निपुराण और साहित्य दर्पण रचना में नाटक की विस्तृत जानकारी मिलती है नाटक में स्थान - स्थान पर विलास, हर्ष ,शोक आदि गुणों का समावेश एवं सुखदुख आदि की अनुभूति होनी चाहिए।- नाटक को रूपक भी कहा जाता है नाटक में 5 से 10 तक अंक या भाग हो सकते हैं समाज में आजकल प्रचलित रूप नाटक का लोक नाट्य या नुक्कड़ नाटक है जिसे समाज,आम जनता, विद्यार्थी को उचित एवं सही मार्गदर्शन की प्राप्ति होती है।

'काव्येषु नाटक्म रम्यम:' अर्थात रमणीय विद्या होने के कारण नाटक दर्शकों को आनंद तो प्रदान करता ही है इसके साथसाथ मानव जीवन के विविध पक्षों का ज्ञान भी देता है हम - यह देखते हैं कि साहित्य की सभी विधाओं में नाटक का स्थान सर्वोपरि है क्योंकि नाटक से पाठक , श्रोता या दर्शक तक सुगमता से अपनी बात को प्रकट करने का अवसर मिलता है गद्य की हर विधा के तत्व होते हैं उसी प्रकार नाटक के भी तत्व होते हैं जैसे कथावस्तु, पात्र - चरित्र, कथोपकथन, देशकाल वातावरण, भाषा शैली, उद्देश्य, अभिनेयता आदि।

कथावस्तु :कथावस्तु से तात्पर्य नाटक के विवरण या कथा से है जो पाठकों के लिए रुचिकर होनी चाहिए कथावस्तु का आधार पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सर्वसाधारण में प्रचलित को ही समाज के लिए हितकर माना गया है।

पात्र-चरित्र :नाटक का मुख्य पात्र नायक कहलाता है नायक ही नाटक को उच्च शिखर पर ले जाता है नायक में भी अलगअलग श्रेणियां होती है : जैसे धीरोदात-, धीरप्रशांत, धीर ललित आदि।

कथोपकथन या संवाद: यह नाटक का प्राण तत्व कहलाता है इसके माध्यम से एक पात्र दूसरे पात्र से बातचीत करता है, संवाद करता है जिससे उसके मन के विचारों को व्यक्त किया जा सके।

देशकाल और वातावरण: देशकाल और वातावरण के द्वारा तात्कालिक परिवेश को प्रकट किया जाता है नाटककार को संकलन त्रय (स्थान, कार्य और समय) का विशेष ध्यान रखना पड़ता है।

भाषा शैली: नाटक के कथानक को भाषा एवं शैली प्रसिद्धि तक ले जाती है पात्रानुकूल भाषा का ध्यान रखा जाता है भाषा सरल, सुबोध एवं लालित्य पूर्ण होनी चाहिए और माधुर्य और प्रसाद गुणों से युक्त भाषा दर्शकों को अपनी और आकर्षित करती है।

उद्देश्य: नाटक उद्देश्य प्रधान होना चाहिए जिससे दर्शक, श्रोता एवं पाठक नाटक से शिक्षा ग्रहण कर सके एवं उद्देश्य को ध्यान में रखकर उचित फल की प्राप्ति हो सके।

अभिनेयता :नाटक का प्रधान गुण अभिनय होता है जिसका अर्थ है प्रदर्शन करने की क्षमता। इसके अभाव में नाटक की कथा उपन्यास एवं कहानी बनकर रह जाती है।

नुक्कड़ नाटक

यह किसी सड़क ,गली, चौराहे या किसी संस्थान के गेट अथवा किसी भी सार्वजनिक स्थल पर खेला जाता है इसकी तुलना सड़क किनारे ' माजम' लगाकर तमाशा दिखाने वाले मदारी के खेल से भी की जा सकती है भारत में आधुनिक नुक्कड़ नाटक को लोकप्रिय बनाने का श्रेय 'सफदर हाशमी' को जाता है उनके जन्म दिवस अप्रैल को देशभर में 12'राष्ट्रीय नुक्कड़ नाटक दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

नुक्कड़ नाटक के विषय: जन सामान्य से जुड़ी समस्याओं और उनका निराकरण नुक्कड़ नाटकों के लोकप्रिय विषय में से है यह राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक हो सकते हैं गलत व्यवस्था का विरोध कर सकते हैं और उसके समानांतर एक आदर्श व्यवस्था पर ही नुक्कड़ नाटक की धूरी टिकी हुई है आज बड़ी-बड़ी व्यावसायिक, व्यापारिक कंपनियां अपने उत्पादन के प्रचार-प्रसार के लिए नुक्कड़ नाटकों का प्रयोग कर रही है सरकारी तंत्र अपनी नीतियों निर्देशों के प्रचार के लिए नुक्कड़ नाटक जैसे माध्यम का सहारा लेते हैं राजनीतिक दल चुनाव के दिनों में अपने प्रचार प्रसार के लिए इस विधा का प्रयोग करते हैं।

रविंद्र नाथ टैगोर का विचार: टैगोर जी ने नाट्य कला को भारतीय संस्कृति और शिक्षा के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में देखा, उन्होंने नाट्य कला को शिक्षा के विभिन्न पहलुओं का एक माध्यम माना था जो ज्ञान और भावनाओं की संवेदनशील अभिव्यक्ति कर सके।

विद्यार्थी और हमारे जीवन में नाटक का उपयोग:

नाटक के द्वारा हमारे अंदर रचनात्मक और सोच कौशल का विकास होता है जिसके कारण हम गहराई से किसी भी विषय के हर पहलू के बारे में सोच सकते हैं नाटक से दूसरे व्यक्ति या वस्तु के बारे में जानने की जागरूकता का विकास होता है हम किसी व्यक्ति या समूह के साथ विचार विनिमय करते हैं तो उसकी कुशलता हमें नाटक से प्राप्त होती है नाटक से संचार अभिव्यक्ति में सुधार होता है नाटक में भाग लिए हुए व्यक्ति और नही लिए व्यक्ति में आत्मविश्वास का अंतर मिलता है रंगमंच पर पहुंचा हुआ व्यक्ति आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है बच्चों में अन्वेषण या अनुसंधान करने की विचारधारा नाटक से ही आती है तो नाटक से बच्चों में खोज करने या प्रयोग करने के अवसर प्राप्त होते हैं नाटक से बच्चा कल्पना करने की आजादी प्राप्त कर लेता है भाषा सीखने का प्रभावी माध्यम नाटक को माना जाता है अर्थात भाषा सीखने के लिए संवाद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है समाज को नई दिशा देने का काम भी नाटक करता है क्योंकि नाटक का प्रमुख प्रभाव नाटककार पर ही पड़ता है नाटक मनोरंजन

का कार्य करता है प्रमुख रूप से माने तो नाटक मनुष्य के भौतिक और मानसिक विकास को प्रकट करता है।

उपसंहार:

हमें स्कूली शिक्षा और कॉलेज शिक्षा दोनों में नाटकों को अनिवार्य विषय के रूप में शामिल करना चाहिए जिससे बच्चों का मानसिक, सामाजिक, भाषिक, लौकिक विकास तीव्र गति से हो सके। बच्चों में रोजगार में जाने या किसी कार्य को करने की ललक उत्पन्न होनी आवश्यक है इन सब का विकास नाटक या रंगमंच से ही संभव है आज कॉलेज शिक्षा में आकर बच्चे अपने आप को असुरक्षित महसूस करते हैं बच्चे मंच पर आकर बोल नहीं सकते , किसी भी कार्य में भाग नहीं ले सकते । अतः बच्चों को रोजगार उन्मुख बनाने के लिए या आत्मनिर्भर बनाने के लिए नाटक या रंगमंच का प्रयोग प्रत्येक विद्यार्थी के लिए एक अनिवार्य विषय के रूप में लागू होना चाहिए। कॉलेज शिक्षा में बच्चों में किसी भी प्रकार की समस्या नहीं आएगी।नाटक एक कला ही नहीं है जीवन जीने का तरीका और अपने आप को प्रकट करने या उच्च बुद्धि क्षमता विकसित करने का सुनहरा अवसर है बच्चों को नाटक या रंगमंच का प्रयोग ज्यादा से ज्यादा करवाया जाए जिससे इनके आत्मविश्वास में, कार्य करने की क्षमता में तीव्र वृद्धि हो सके।

नाटक के माध्यम से बच्चों में जिज्ञासाएं, स्वगत सीखने की कला, रचनात्मकता को सुनिश्चित करने में कामयाबी मिलती है। नाटक को एक औजार के रूप में शिक्षकों को दिया जाए जिससे वे एक निर्भीक और रचनात्मक सीखने का वातावरण तैयार कर सकने में सक्षम हो सके। पाश्चात्य देश के शिक्षा जगत में एक शिक्षामित्र, कलाकार और बाल मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षा में नाटक और कला की भूमिका को एक नजरिया से देखना शुरू किया।

शिक्षा में नाटक का मतलब कतई यह नहीं है कि महीने दो महीने लगाकर एक नाटक की तैयारी कराया जाए बल्कि इसका तात्पर्य यह है की नाटक की इस तकनीक को अपने शिक्षण में प्रयोग कर उसे और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके। करके सीखना होने से बच्चों में निर्भीकता और स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं स्वयं निर्णय लेने में सक्षम हो सकेगा इस प्रकार शिक्षक गतिविधियों में शिल्प कार्य एक कौशल के रूप में स्वीकार्य हो। इसलिए यह आवश्यक है कि हमारी शिक्षा पद्धति में नाटक जोड़ा जाना चाहिए।

संदर्भ सूची:

1 हिंदी नाटक उद्भव और विकास - डॉ. दशरथ ओझा

2 हिंदी नाट्य साहित्य का विकास - डॉ. सोमनाथ गुप्त

3 हिंदी साहित्य का वृहद इतिहास- डॉ. नागेंद्र

फोन :9667146221   Gmail :leeladharsahusa1990@gmail.com

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 172-174
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

डॉ. शेर सिंह बिष्ट के कुमाउनी साहित्य में संस्कृति विमर्श

रेवा महरा, शोधार्थी हिंदी विभाग,
सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय अल्मोड़ा, (उत्तराखण्ड)

सारांश

बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी डॉ. शेर सिंह बिष्ट ने कुमाउनी साहित्य, संस्कृति की समृद्धि में अपना उल्लेखनीय योगदान दिया है। ग्रामीण परिवेश में पले–बड़े डॉ. बिष्ट के जीवन की संपूर्ण छाप हमें उनकी साहित्यिक कृतियों में दिखाई देती है। डॉ. शेर सिंह बिष्ट ने कुमाउनी भाषा में साहित्य सृजन करके साहित्य सेवा के साथ–साथ कुमाउनी भाषा संस्कृति को सुसज्जित करने में अपना अमूल्य योगदान दिया है। बिष्ट जी कुमाउनी साहित्यकारों में अग्रणी एवं आदरणीय हैं। उन्होंने कुमाउनी भाषा में गद्य व पद्य दोनों विधाओं में रचना की है। उनकी कृतियों में हमें संस्कृति विमर्श देखने को मिलता है उन्हें कुमाउनी भाषा संस्कृति से प्रेम था इसीलिए उन्होंने आजीवन कुमाउनी भाषा संस्कृति को सजाने व संवारने का प्रयास किया। डॉ. बिष्ट का संस्कृति प्रेम का एक उदाहरण दृष्टव्य हैः–

''योई मेरी जनम भूमि
योई मेरी करम भूमि
योई म्यर सरग–नरक
योई म्यर भार–भरम''

इसी प्रकार उनके सम्पूर्ण कुमाउनी साहित्य में हमें दुद्बोली (कुमाउनी भाषा) की सुगन्ध तथा कुमाउनी संस्कृति के विविध रूप देखने को मिलते हैं। वे इस बात से भी चिंतित हैं कि वर्तमान युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति से दूर होती जा रही है। इसीलिए वे कुमाउनी संस्कृति उपादेयता को समझाते हुए आने वाली पीढ़ी को अपनी संस्कृति को बचाये रखने के लिए प्रेरित करते हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र में डॉ. शेर सिंह बिष्ट के कुमाउनी साहित्य में संस्कृति विमर्श पर चर्चा की गयी है।

मुख्य शब्द – सुसज्जित, उल्लेखनीय

प्रस्तावनाः– मनुष्य के सामने जब भी कोई समस्या आती है वह उसके निवारण हेतु सदैव प्रयत्नशील रहा है। समस्या निवारण हेतु किया गया चिंतन मनन ही विचार विमर्श कहलाता है। जब कोई व्यक्ति व्यक्तिगत समस्या निवारण हेतु चिंतन करता है तो वह उस विषय में विचार प्रकट करता है जबकि उसी विषय को अगर वह दूसरों के साथ चर्चा करता है, तो वह विमर्श कहलाता है। विमर्श का अर्थ किसी विषय में गम्भीर रूप से चिंतन मनन करना होता है। यह विषय जाति, क्षेत्र, व्यक्ति, विशिष्ट स्थिति, समाज आदि हो सकता है। विमर्श का प्रयोग अस्मिता के लिए किया जाता है जिसकी पहचना पर संकट हो। पहचान बनाये रखने के लिए उस विषय पर विमर्श किया जाता है। हिन्दी साहित्य में अनेक प्रकार के विमर्श हैं, जैसे दलित विमर्श, युवा विमर्श, संस्कृति विमर्श आदि।

प्रस्तुत शोध पत्र का विषय संस्कृति विमर्श है। वर्तमान में हम अपनी संस्कृति को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति को अपना रहे हैं। हमारे रीति–रिवाज, परम्परायें, आस्थायें, जीवन शैली हमसे पीछे छूटती जा रही है। इसी विषय पर डॉ. बिष्ट ने गम्भीर चिंतन मनन किया है जो उनके साहित्य में हमें देखने को मिलता है। बिष्ट जी को अपनी जन्मभूमि व वहाँ की भाषा संस्कृति में विशेष लगाव था। यहीं

कारण है कि उन्होंने हिंदी लेखन के साथ–साथ कुमाउनी में भी लेखन कार्य किया। उनका कुमाउनी साहित्य में योगदान सदैव चिरस्मरणीय रहेगा। उन्होंने कुमाउनी भाषा में साहित्य लेखन करके पाठकों को कुमाउनी भाषा व संस्कृति से जोड़ने का प्रयास किया है साथ ही आज की पलायन करती युवा पीढ़ी जो अपनी भाषा संस्कृति को भूलती जा रही है के ह्रदय में संस्कृति प्रेम जगाने का प्रयास किया है।

कुमाउनी भाषा लेखन में डॉ.बिष्ट की बचपन से ही रूची थी इसीलिए उन्होंने इस पर्वतीय क्षेत्र की सुंदरता को यहाँ की संस्कृति को कविताओं के माध्यम से अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है एक उदाहरण दृष्टव्य हैः–

''वीकी अन्वार, कुरकाति हंसि
नी भुलीणें!
हँसणैं कि– फूल झड़नई
ह्युँवें है रै, मोत्यूँ फोकीनई''

डॉ. बिष्ट के सम्पूर्ण कुमाउनी साहित्य में हमें कुमाउँ की संस्कृति देखने को मिलती है। वे इस बात से भी चिंतित हैं कि वर्तमान पीढ़ी अपनी भाषा संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य भाषा संस्कृति को अपना रही है। इसलिए वे आज की भटकती युवा पीढ़ी से आग्रह करना चाहते हैं कि अपने जड़ों से कभी दूर नहीं जाना चाहिए। हमें अपनी अस्मीता कभी नहीं खोनी चाहिए। वर्तमान युग भूमंडलीकरण का युग है जिसके अन्तर्गत लोगों के बीच विचारों, भाषाओं, सांस्कृतिक मान्यताओं का आदान–प्रदान होता है लेकिन किसी दूसरी संस्कृति के विचारों, मान्यताओं को ग्रहण करते हुए हमें अपनी संस्कृति की अस्मिता को संकट में नहीं डालना चाहिए। डॉ. बिष्ट के निबंधों में हमें संस्कृति विमर्श देखने को मिलता है जिसमें हमर पहाड़, कुमाउनी साहित्य, म्यर गौं, कुमाउनी लोक साहित्य में ॠतु चित्रंण, न्यायकर्ता द्याप्त, कुमाउँ कि पछ्याण आदि निबन्ध हैं जिसमें कुमाउनी संस्कृति को डॉ. बिष्ट पाठकों के समक्ष रखते हैं। उनके निबन्ध जहाँ जनमानस में जनजागृति पैदा करते हैं वहीं जीवनमूल्य व हमारे आदर्शों को समाज के समक्ष रखते हैं। संस्कृति की झलक तो उनकी प्रत्येक निबन्ध में दिखई देती है। जहाँ ''भारतक भविष्य'' में उनको वर्तमान के भारत की चिन्ता हो रही है, जो बुराइयों से भरा पड़ा है, वहीं ''माँ दूर्गा नौर्त'' निबन्ध में माँ दूर्गा की सुन्दर प्रतिमा देखने को मिलती है। इसमें हमें नौ दिनों तक की जाने वाली माँ दूर्गा की पूजा में कुमाउनी संस्कृति के रंग देखने को मिलते हैं। डॉ. बिष्ट के निबन्धों में सुन्दर स्पष्ट कुमाउनी भाषा का प्रयोग हुआ है। ''हमर पहाड़'' निबन्ध का एक उदाहरण प्रस्तुत है – ''कती गौंक च्वा्व बदल हैगो। घर–घर कणि बिजुलिक करंट पुजि गो, सड़कोंक जाल बिछी गो''

प्रस्तुत उदाहरण में परिवर्तित होती पहाड़ों की जीवन शैली को दिखाने का प्रयास किया गया है। डॉ. बिष्ट को लोक साहित्य से बेहद प्रेम था, जिसका वर्णन उन्होंने साहित्य लेखन में किया है। उन्होंने विलुप्त होते लोक साहित्य का एक पहचान दिलाई तथा इस संस्कृति को जन–जन तक पहुँचाया है। इसका उदारहण हमें उनकी कविताओं व निबन्धों में देखने को मिलता है। न्यायकर्ता द्याप्त में उन्होंने ग्वैल देवता, गंगनाथ व सेम देवता का वर्णन किया है। वहीं अजब प्रेम की गजब कहानी निबन्ध में राजुला व मालूशाही की प्रेमगाथा का वर्णन किया है।

डॉ. बिष्ट की कुमाउनी कवितायें, कुमाउनी साहित्य में उस फूलों के गुलदस्ते के समान हैं जिससे साहित्य का पूरा बगिया महकता है। उन्होंने कविताओं के माध्यम से प्रकृति की सुंदर छटा का वर्णन किया है। भारत माता कविता संग्रह में संकलित ॠतु वर्णन उसका प्रमुख उदाहरण है। इस कविता में उन्होंने बारहमास ॠतुओं का वर्णन किया है। ॠतुओं के साथ–साथ बदलते खान–पान, पहनावा, रीति–रिवाज, लोक त्यौहार का वर्णन भी इस कविता में देखने को मिलता है। संस्कृति विमर्श को दिखाती हुई उन्होंने ''पैराव बदली गौ'' नामक कविता लिखी, जिसमें दिखाया गया है कि वर्तमान में लोग फैशन और आधुनिकता के नाम पर किस तरह अर्द्धनग्न कपड़े पहनते हैं वे कहते हैं आधुनिकता हमारे विचारों से आती है, कपड़ों से नहीं आती है। प्राचीन समय में जब लागों के पास तन ढ़कने को कपड़े नहीं होते तब हमारे पूर्वज पत्तों से अपना तन ढकते थे लेकिन आज सब कुछ होते हुए भी फैशन के नाम पर अर्द्धनग्न कपड़े पहनते हैं–

''सभ्यता संस्कृतिक खाल उतरि गे
लौटिबेर, आजि फिरि बणै कै न्हे गे।

इस प्रकार डॉ बिष्ट ने अपने साहित्य के माध्यम से विलुप्त होती भाषा संस्कृति को पाठकों के समक्ष रखके साहित्य जगत में अविस्मरणीय कार्य किया है। वे संस्कृति को बचाये रखने के लिए सदैव चितंन–मनन करते रहे हैं। डॉ. बिष्ट साहित्य जगत में ऐसे चमकता सितारा हैं जो युग–युगान्तर चमकते रहेंगे।

संन्दर्भ ग्रंथ –

1. बिष्ट, प्रो. शेर सिंह, भारत माता, साहित्य–पूर्वा 3/11 हाइडिल कालौनी, बिजनौर– 246701 (उत्तर प्रदेश), पृष्ठ नं. 34
2. बिष्ट, प्रो. शेर सिंह, भारत माता, साहित्य–पूर्वा 3/11 हाइडिल कालौनी, बिजनौर– 246701 (उत्तर प्रदेश), पृष्ठ नं. 73
3. बिष्ट, प्रो. शेर सिंह, भारत माता, साहित्य–पूर्वा 3/11 हाइडिल कालौनी, बिजनौर– 246701 (उत्तर प्रदेश), पृष्ठ नं. 16
4. बिष्ट, प्रो. शेर सिंह, भारत माता, साहित्य–पूर्वा 3/11 हाइडिल कालौनी, बिजनौर– 246701 (उत्तर प्रदेश), पृष्ठ नं. 89

ई–मेलः mehrareva500@gmail.com मो.नः 9997073094

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 175-177
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

राजनैतिक नेता समर्थन हासिल करने के लिए बयानबाजी का उपयोग कैसे करते हैं

हरसुख, सहायक आचार्य राजनीति विज्ञान (वी.एस.वाई.)
राजकीय बालिका कॉलेज, पोखरण (जैसलमेर) |

सारांश (Abstract) :-

राजनीतिक नेताओं द्वारा जनता का समर्थन प्राप्त करने के लिए बयानबाजी (Rhetoric) का उपयोग एक प्रभावशाली उपकरण है। यह शोध पत्र विश्लेषण करता है कि कैसे नेता प्रभावशाली भाषण, सांस्कृतिक और भावनात्मक अपील, और रणनीतिक संदेशों के माध्यम से जनता को प्रभावित करते हैं। यह शोध विभिन्न देशों और संदर्भों में नेताओं द्वारा उपयोग किए गए बयानबाजी तकनीकों पर आधारित है।

परिचय (Introduction) :-

राजनीति में बयानबाजी का उपयोग प्राचीन काल से प्रभावी रहा है। प्लेटो और अरस्तू ने बयानबाजी को एक कला माना, जो विचारों और भावनाओं के माध्यम से जनता को प्रेरित करने का माध्यम है। वर्तमान समय में, नेताओं द्वारा बयानबाजी का उपयोग विशेष रूप से चुनाव अभियानों, आंदोलनों, और नीतिगत बहसों में देखा जाता है।

यह शोध यह जांचने का प्रयास करेगा कि:-

1. किस प्रकार के बयानबाजी उपकरण (जैसे कि नीतिगत वादे, सांस्कृतिक अपील, या विरोधियों की आलोचना) का उपयोग किया जाता है।
2. बयानबाजी के प्रभाव को जनता पर कैसे मापा जा सकता है।

बयानबाजी के तत्व (Elements of Rhetoric):-

राजनीतिक बयानबाजी को मुख्य रूप से तीन तत्वों में विभाजित किया जा सकता है:

1. पैथोस (Pathos): भावनात्मक अपील।

उदाहरण: राष्ट्रीयता, धर्म, या जातीयता जैसे विषयों पर भावनात्मक भाषण।

2. लोगोस (Logos): तार्किक अपील।

उदाहरण: आर्थिक डेटा, विकास योजनाओं और नीतिगत तर्क।

3. एथोस (Ethos): विश्वसनीयता।

उदाहरण: नेता का व्यक्तिगत चरित्र, उनकी ईमानदारी, और जनता से जुड़ाव।

नेताओं द्वारा उपयोग की जाने वाली रणनीतियाँ (Strategies Used by Leaders) :-

1. वादों की राजनीति :-

नेताओं द्वारा रोजगार, शिक्षा, और स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार के वादे।

उदाहरण: चुनाव अभियानों में घोषणापत्र।

2. भावनात्मक और सांस्कृतिक अपील :-

धार्मिक, जातीय, या राष्ट्रीय प्रतीकों का उपयोग।

उदाहरण: "भारत माता की जय" जैसे नारे।

3. विरोधियों की आलोचना :-

विरोधियों की गलतियों को उजागर करना।

उदाहरण: भ्रष्टाचार या नीतिगत विफलताओं की चर्चा।

4. सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म का उपयोग :-

ट्विटर, फेसबुक और यूट्यूब के माध्यम से सीधा संवाद।

वायरल वीडियो और हैशटैग अभियानों का उपयोग।

5. आम जनता से जुड़ाव :-

जनसभाओं और रोड शो के माध्यम से सीधा संपर्क।

नेता का "साधारण व्यक्ति" की छवि प्रस्तुत करना।

बयानबाजी के प्रभाव (Impact of Rhetoric) :-

1. चुनाव परिणामों पर प्रभाव :-

बयानबाजी के कारण जनता का झुकाव।

2. समाज पर सांस्कृतिक प्रभाव :-

सांप्रदायिक एकता या विभाजन।

3. नीतिगत बहसों पर प्रभाव :-

आर्थिक और सामाजिक मुद्दों पर जनता की राय।

चुनौतियाँ और आलोचनाएँ (Challenges and Criticisms) :-

1. भ्रामक जानकारी का प्रसार :-

झूठे वादों और अतिरंजित दावों का उपयोग।

2. ध्रुवीकरण :-

भावनात्मक अपील के कारण समाज में विभाजन।

3. दीर्घकालिक परिणामों की अनदेखी :-

बयानबाजी के कारण जनता का ध्यान वास्तविक मुद्दों से हट सकता है।

उपसंहार (Conclusion) :-

राजनीतिक बयानबाजी जनता को प्रभावित करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है, लेकिन इसका सही और नैतिक उपयोग आवश्यक है। नेताओं को चाहिए कि वे बयानबाजी का उपयोग केवल जनसमर्थन प्राप्त करने के लिए नहीं, बल्कि समाज की वास्तविक समस्याओं का समाधान करने के लिए करें।

यह शोध पत्र राजनीतिक नेतृत्व और बयानबाजी के जटिल संबंधों को समझने में सहायक होगा।

संदर्भ (References) :-

1. Aristotle, "The Art of Rhetoric."
2. Lakoff, George. "The Political Mind: Why You Can't Understand 21st-Century Politics with an 18th-Century Brain."
3. विभिन्न समाचार और भाषणों का विश्लेषण।

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 178-183
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਪ੍ਰਸੰਗਿਕਤਾ

ਡਾ. ਨੈਨਸੀ ਸ਼ਰਮਾ
ਪੋਸਟ ਡਾਕਟਰ ਫੈਲੋ,
ਗੁਰੂ ਗੋਬਿੰਦ ਸਿੰਘ ਧਰਮ ਅਧਿਐਨ ਵਿਭਾਗ,
ਪੰਜਾਬੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ, ਪਟਿਆਲਾ

ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਇਹ ਸ਼ਬਦ ਆਪਣੇ ਆਪ ਵਿਚ ਬਹੁਤ ਹੀ ਵਿਆਪਕ ਫ਼ਲਕ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਉਹ ਮਾਧਿਅਮ ਹੈ ਜਿਸ ਰਾਹੀਂ ਇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਜਾਣਨ ਵਾਲਾ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸਾਹਿਤ, ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾਂ, ਸ਼ਾਸਤਰਾਂ ਆਦਿ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹ ਕੇ ਉਸ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਮੂਲ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤ ਆਦਿ *ਚ ਵਰਣਿਤ ਕਦਰਾਂ—ਕੀਮਤਾਂ, ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ, ਸਭਿਆਚਾਰ ਨੂੰ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਮਝ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਸੁਖਾਲਾ ਰਾਹ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੈ ਜਿਸ ਵਿਚ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ, ਮੰਨ ਲਉ ਹਿੰਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਅੱਖਰਾਂ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਅੱਖਰਾਂ ਵਿਚ ਬਦਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ - श्रीमद्भगवद्गीता & ਸ਼੍ਰੀਮਦਭਗਵਦਗੀਤਾ ਅਤੇ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਅੱਖਰਾਂ ਜਿਵੇਂ ਕਿ 'ਸ਼੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਜੀ' ਅਤੇ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸ਼ਬਦ ਨੂੰ ਜੇਕਰ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਵਿਚ ਲਿਖਣਾ ਹੋਵੇ ਤਾਂ ਅਸੀਂ **श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी ਅਤੇ ਗੁਰਬਾਣੀ ਸ਼ਬਦ ਲਿਖਾਂਗੇ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਸਮੇਂ ਅਸੀਂ** ਪੰਜਾਬੀ ਵਰਣਮਾਲਾ ਦੇ ਵਿਅੰਜਣ 'ਣ' ਲਈ ਹਿੰਦੀ ਵਰਣਮਾਲਾ ਦੇ 'ण' ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ। ਜਿਹੜੀ ਕੀ ਪੰਜਾਬੀ ਅਤੇ ਹਿੰਦੀ ਲਿਪੀ ਦੀ ਧੁਨੀਆਤਮਕ ਸਮਾਨਤਾ ਦਾ ਪ੍ਰਗਟਾਵਾ ਹੈ। ਇਥੇ ਅਸੀਂ ਦੇਖ ਸਕਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਜਿਹੜਾ ਵਿਅਕਤੀ ਹਿੰਦੀ ਨਹੀਂ ਜਾਣਦਾ, ਉਹ ਵੀ ਗੁਰਮੁਖੀ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਰਾਹੀਂ ਭਾਰਤੀ ਪਰੰਪਰਾ ਦੇ ਮਹਾਨ ਗ੍ਰੰਥ ਗੀਤਾ ਦਾ ਨਾਂ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਪੜ੍ਹ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਵਰਤਮਾਨ ਸਮਾਂ ਜਿਸ ਨੂੰ ਤਕਨੀਕੀ ਅਤੇ ਵਿਗਿਆਨਕ ਯੁੱਗ ਦੇ ਨਾਮ ਨਾਲ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਮਸ਼ੀਨੀ ਹੋਣ ਕਾਰਨ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਅਨੇਕਾਂ ਹੀ ਆਤਮਿਕ ਅਤੇ ਸਰੀਰਕ ਸੱਸਮਿਆਵਾਂ ਨੂੰ ਸਹਿਣਾ ਪੈ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਅਜਿਹੇ ਅਖੌਤੀ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦਾ ਮਹੱਤਵ, ਜਿਹੜਾ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਉਤਪੱਤੀ ਦੇ ਸਮੇਂ ਤੋਂ ਹੀ ਹੈ, ਹੋਰ ਵੀ ਦਿਨੋ ਦਿਨ ਵੱਧ ਰਿਹਾ ਹੈ ਅਤੇ ਭਵਿੱਖ ਵਿਚ ਹੀ ਇੰਝ ਹੀ ਬਣਿਆ ਰਹੇਗਾ। ਅੱਜ ਦੇ ਸਮੇਂ ਨੂੰ ਲੋੜ ਹੈ ਕਿ ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾਂ, ਸਾਹਿਤ ਆਦਿ ਵਿਚ ਦਰਜ਼ ਮਹਾਂਪੁਰਖਾਂ ਦੇ ਉਪਦੇਸ਼, ਸੰਦੇਸ਼ ਨੂੰ ਸਮਾਜ ਰਾਹੀਂ ਹਰੇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਪਹੁੰਚਾਇਆ ਜਾਵੇ ਤਾਂ ਕਿ ਹਰੇਕ ਧਰਮ ਅਤੇ ਹਰੇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਮਨੁੱਖ ਵਿਸ਼ਵ ਦੀ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤੀ ਅਤੇ ਕਦਰਾਂ—ਕੀਮਤਾਂ ਤੋਂ ਜਾਣੂ ਹੋ ਸਕੇ। ਸੋ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਜਿਥੇ ਇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਨੂੰ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਬਦਲਣਾ ਹੈ, ਉਥੇ ਹੀ ਵਿਸ਼ਵ ਭਾਈਚਾਰੇ ਨੂੰ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨ ਲਈ ਅਹਿਮ ਦਿਸ਼ਾ ਅਤੇ ਮਾਰਗ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਸਮੇਂ ਮੂਲ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਉਚਾਰਣ ਅਤੇ ਲੇਖਨ ਰੂਪ ਨੂੰ ਪੂਰੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸੁਰੱਖਿਅਤ ਰੱਖਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਲੋਕ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਰਚਿਤ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਦਾ, ਸਾਹਿਤਕ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਅਤੇ ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਅਤੇ ਹੋਰ ਕਿਸੇ ਵੀ ਅਨੁਸ਼ਾਸਨ ਦਾ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਕਿਉਂਕਿ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦਾ ਮੂਲ ਉਦੇਸ਼ ਕਿਸੇ ਵਿਵਹਾਰਕ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਦੂਜੀ ਵਿਵਹਾਰਕ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਬਦਲਣਾ ਹੈ ਤਾਂ ਕਿ ਉਸ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਉਚਾਰਣ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਸਿੱਖਿਆ ਜਾ ਸਕੇ। ਇਥੇ ਜ਼ਿਕਰ ਯੋਗ ਹੈ ਕਿ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ *ਚ ਕੇਵਲ ਅੱਖਰਾਂ ਦਾ ਸਰੂਪ ਹੀ ਬਦਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਪਰੰਤੂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਮੂਲ

ਅਰਥ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਲਈ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੇ ਨਾਲ—ਨਾਲ ਅਨੁਵਾਦ ਅਤੇ ਵਿਆਖਿਆ ਵੀ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ ਤਾਂ ਹੀ ਅਸੀਂ ਕਿਸੇ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਮੂਲ ਸਰੂਪ ਅਤੇ ਪ੍ਰਭਾਵ ਨੂੰ ਜਾਣ ਸਕਾਂਗੇ।

ਸੋ ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ, ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਗਿਆਨ ਦੀ ਮੁਢਲੀ ਅਧਿਐਨ ਇਕਾਈ 'ਧੁਨੀ' ਕੇਂਦਰਤ ਕਾਰਜ ਹੈ। ਜਿਸ ਵਿਚ ਸਰੋਤ ਲਿਪੀ **(source script)** ਤੋਂ ਉਦੇਸ਼ ਲਿਪੀ **(target script)** ਵਿਚ ਰੂਪਾਂਤਰਨ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਵਿਦਿਆ ਦੋ ਪਖੀ/ ਦਿਸ਼ਾਵੀ ਹੈ- ਇਕ ਪਾਸੇ ਤਾਂ ਇਹ ਨਿਯਮਾਂ ਦਾ ਪ੍ਰਬੰਧ **(the system of rules)** ਹੈ. ਦੂਜੇ ਪਾਸੇ ਇਹ ਇਕ ਲਿਪੀ ਦੇ ਅਖਰਾਂ ਨੂੰ ਕਿਸੇ ਦੂਜੀ / ਹੋਰ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਉਲਥਾਉਣ ਦੀ ਕਿਰਿਆ ਹੈ। ਇਹ ਲਿਖਤ ਪ੍ਰਬੰਧਾਂ **(writing systems/ orthographical forms)** ਦੇ ਧੁਨੀ ਮੁਲਾਂ **(sound values)** ਨੂੰ ਸੁਰਖਿਅਤ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਕਲਾਤਮਿਕ -ਕਿਰਿਆ ਹੈ। ਇਉਂ ਇਹ ਆਪਣੇ 'ਦਰਪਣ' ਰਾਹੀਂ ਕੋਈ ਦੂਜਾ ਪਾਠ ਪੜ੍ਹਨ ਵਾਲੀ ਵਿਦਿਆ ਹੈ. ਜਾਂ ਕਹੋ ਕਿ ਆਪਣੀ ਭਾਸ਼ਾ-ਲਿਪੀ ਦੀ ਐਨਕ ਰਾਹੀਂ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ/ ਲਿਪੀ ਦੇ ਪਾਠ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਨ ਵਾਲੀ ਵਿਦਿਆ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ ਅਤੇ ਅਨੁਵਾਦ ਵਿਚ ਬੁਨਿਆਦੀ ਅੰਤਰ ਇਹ ਹੈ ਕਿ ਜਿਥੇ ਅਨੁਵਾਦ ਭਾਸ਼ਾ/ਪਾਠ ਦਾ ਅਰਥ ਕੇਂਦਰਤ ਜਾਂ ਕਹੋ ਕਿ ਆਤਮਾ ਦਾ ਪਰਿਵਰਤਨ ਹੈ, ਓਥੇ ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ ਸਰੀਰ ਪਰਿਵਰਤਨ ਹੈ। ਧਿਆਨ ਯੋਗ ਹੈ ਕਿ ਸਰੀਰ ਪਰਿਵਰਤਨ ਦੇ ਬਹੁਤ ਗੰਭੀਰ ਨਿਯਮ ਹਨ, ਹਰੇਕ ਲਿਖਤ ਦਾ ਆਪਣਾ ਸਰੀਰ ਅਤੇ ਢਾਂਚਾ ਹੈ।

ਅੰਗਰੇਜੀ ਵਿਚ ਇਕ ਪਦ **transcription** ਵੀ ਹੈ, ਜਿਸ ਦੇ ਸਮਾਨਾਂਤਰ ਅਸੀਂ ਲਿਪੀਅੰਕਨ ਪਦ ਵਰਤ ਸਕਦੇ ਹੈ। ਧਿਆਨਵਤ ਹੈ ਕਿ ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ/ਬੋਲੀਆਂ ਕੋਲ ਆਪਣੀਆਂ ਲਿਪੀਆਂ ਨਹੀਂ ਹਨ, ਜਿਵੇਂ ਕਬੀਲਿਆਂ ਦੀਆਂ ਬੋਲੀਆਂ : ਮੁੰਡਾ, ਗੋਦੇ, ਆਦਿ। ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਲਿਖਤੀ ਰੂਪ ਦੇਣ ਦੀ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਨੂੰ 'ਲਿਪੀਅੰਕਨ' ਕਿਹਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਕਨ **(transcription)** ਤਹਿਤ ਬੋਲੇ ਗਏ ਬੋਲਾ ਨੂੰ ਲਿਪੀ-ਵਿਸ਼ੇਸ਼ (ਜਿਵੇਂ ਰੋਮਨ) ਵਿਚ ਅੰਕਿਤ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਇਹ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਉਨ੍ਹਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ/ ਬੋਲੀਆਂ ਲਈ ਦਰੁਸਤ ਹੈ, ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਦੀਆਂ ਲਿਪੀਆਂ ਨਹੀਂ ਹਨ। ਇਸ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਵਿਚ ਮੌਖਿਕਤਾ ਨੂੰ ਤਰਜੀਹ ਦਿਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਕਨ ਵਧੇਰੇ ਕਰਕੇ ਖੇਤਰੀ ਤੇ ਰਜਿਸਟਰ ਧੁਨੀਆ/ਬੋਲਾਂ ਅਧਾਰਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ; ਜਦਕਿ ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ ਲਿਖਤੀ ਮੂਲਪਾਠ ਉਤੇ ਅਧਾਰਿਤ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ **(transliteration)** ਤਹਿਤ ਇਕ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਲਿਖੀ ਲਿਖਤ ਨੂੰ ਹੂ-ਬ-ਹੂ ਦੂਜੀ ਲਿਪੀ ਦੀ ਲਿਖਤ ਵਿਚ ਕਾਇਆ ਪਲਟੀ ਕੀਤੀ ਜਾਦੀ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ ਗੁਰਬਾਣੀ (ਗੁਰਮੁਖੀ) ਦੀ ਰੋਮਨ, ਨਾਗਰੀ, ਉਰਦੂ ਆਦਿ ਵਿਚ ਕਾਇਆ ਪਲਟੀ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਜਿਵੇਂ ਗੁਰਬਾਣੀ ਜਾਂ ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਰੋਮਨ, ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਅਤੇ ਉਰਦੂ ਆਦਿ ਵਿਚ ਕਾਇਆ ਪਲਟੀ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਅਸੀਂ ਅਗਾਂਹ ਵੇਖਾਂਗੇ, ਗੁਰਬਾਣੀ ਉਤੇ ਲਿਪੀਅੰਕਨ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਲਾਗੂ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਹਵਾਲੇ ਵਿਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ ਪ੍ਰਕਿਰਿਆ ਹੀ ਸੰਭਵ ਅਥਵਾ ਦਰੁਸਤ ਹੈ।

''ਇਤਿਹਾਸਕ ਪੱਖੋਂ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਸੰਬੰਧੀ ਇਹ ਤੱਥ ਉੱਭਰ ਦੇ ਸਾਹਮਣੇ ਆਉਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਯੂਰਪ ਅਤੇ ਅਮਰੀਕਾ ਵਿਚ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਗਿਆਨਕ ਅਧਿਐਨ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਜਦੋਂ ਸਿਖਰ 'ਤੇ ਸੀ ਤਾਂ ਉਸ ਸਮੇਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਧੁਨੀਆਂ ਆਦਿ ਨੂੰ ਸੰਬੰਧੀ ਲਿਪੀਅੰਕਣ ਅਤੇ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਵਰਗੀ ਸਮੱਸਿਆ ਦਾ ਸਾਹਮਣਾ ਕਰਨਾ ਪਿਆ। ਇਸ ਸਮੱਸਿਆ ਦੇ ਸਮਾਧਾਨ ਵਜੋਂ ਅਨੇਕਾਂ ਹੀ ਲਿਖਣ ਪ੍ਰਣਾਲੀਆਂ ਹੋਂਦ ਵਿਚ ਆਈਆਂ। ਜਿਨ੍ਹਾਂ ਰਾਹੀਂ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਵੱਖ ਵੱਖ ਸੰਕੇਤਾਂ ਰਾਹੀਂ ਸੰਸਾਰ ਦੀਆਂ ਸਾਰੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਅਤੇ ਬੋਲੀਆਂ ਨੂੰ ਲਿਖਣ ਲਈ ਸਮਰਥ ਬਣਾਉਣ ਦਾ ਯਤਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਇਸ ਪ੍ਰਕ੍ਰਿਆ ਦੌਰਾਨ 1920 ਈ. ਵਿਚ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਗਿਆਨੀ ਇਸ ਨਤੀਜੇ 'ਤੇ ਪਹੁੰਚੇ ਕਿ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਧੁਨੀ ਵਿਵਸਥਾ ਵਿਚ ਸਭ ਤੋਂ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਤੱਤ ਉਸ ਦੀ ਕਾਰਜਕਾਰੀ ਇਕਾਈ 'ਧੁਨੀਆਂ ਦੀ ਪ੍ਰਾਪਤੀ ਅਤੇ ਆਪਸੀ ਸੰਬੰਧਾਂ ਦੀ ਅਸਲ ਖੋਜ ਹੈ ਨਾ ਕਿ ਧੁਨੀ ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਦਾ ਸੂਖਮ ਅਧਿਐਨ। 1920 ਤੋਂ ਲੈ ਕੇ ਲਗਭਗ 1935 ਈ. ਤੱਕ ਹਿੰਦੀ, ਉਰਦੂ, ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ, ਗੁਜਰਾਤੀ, ਮਰਾਠੀ, ਬੰਗਾਲੀ, ਉੜੀਆ, ਤਮਿਲ, ਤੇਲਗੂ ਮਲਿਆਲਮ ਅਤੇ ਕੱਨੜ ਆਦਿ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਨੂੰ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਲਿਖਣ ਦੇ ਯਤਨ ਕੀਤੇ ਗਏ। ਇਸ ਸੰਬੰਧੀ 1935 ਈ. ਵਿਚ ਕਲਕੱਤਾ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ ਤੋਂ 'ਡਿਪਾਰਟਮੇਂਟ ਆਫ਼ ਲੇਟਰਜ਼' ਭਾਗ 27 ਵਿਚ 'ਭਾਰਤ ਲਈ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਸਿਰਲੇਖ ਅਧੀਨ ਇਕ ਖੋਜ ਪੱਤਰ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ ਹੋਇਆ। 1942 ਵਿਚ ਪ੍ਰੋ. ਡੇਨਿਯਲ ਜੌਨਜ਼ ਦੁਆਰਾ ਇਕ ਲੇਖ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ

ਕੀਤਾ ਗਿਆ ਜਿਸ ਦਾ ਸਿਰਲੇਖ ਸੀ – ਰਾਸ਼ਟਰੀ ਲਿਪੀ ਦੀ ਸਮੱਸਿਆ (The Problem of a National Script for India)। ਇਸ ਲੇਖ ਵਿਚ ਲੇਖਕ ਦੁਆਰਾ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਭਾਰਤ ਦੀ ਰਾਸ਼ਟਰ ਲਿਪੀ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਨ ਦੀ ਸਿਫ਼ਾਰਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਗਈ। ਪੁਸਤਕ ਦੇ ਆਖਰੀ ਪੰਨੇ 'ਤੇ ਜਵਾਹਰਲਾਲ ਨਹਿਰੂ ਦੇ ਭਾਸ਼ਣ 'ਜ਼ਬਾਨ ਦਾ ਮਸਲਾ' ਨੂੰ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਿਤ ਕਰਕੇ ਇਸ ਨੂੰ ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ ਪੇਸ਼ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਬੀਤਦੇ ਸਮੇਂ ਨਾਲ 26 ਜਨਵਰੀ 1950 ਨੂੰ ਭਾਰਤੀ ਸੰਵਿਧਾਨ ਲਾਗੂ ਹੋਇਆ । ਜਿਸ ਵਿਚ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਲਿਖੀ ਹਿੰਦੀ ਨੂੰ ਭਾਰਤ ਦੀ ਰਾਜਭਾਸ਼ਾ ਸਵੀਕਾਰ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਜਿਸ ਦਾ ਪ੍ਰਭਾਵ ਇਹ ਹੋਇਆ ਕਿ ਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਦੀ ਚਰਚਾ ਬੰਦ ਹੋ ਗਈ ਅਤੇ ਸਾਰੇ ਦੇਸ਼ ਲਈ ਸਾਧਾਰਨ ਲਿਪੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਦੇ ਸਮਰਥਨ ਅਤੇ ਸਵੀਕਾਰ ਦੀ ਲੋੜ ਮਹਿਸੂਸ ਹੋਣ ਲੱਗੀ। ਇਸ ਦੇ ਲਈ 10,11,12, ਅਗਸਤ 1961 ਨੂੰ ਵੱਖ ਵੱਖ ਰਾਜਾਂ ਦੇ ਮੁੱਖਮੰਤਰੀ ਅਤੇ ਕੇਂਦਰੀ ਮੰਤਰੀ ਦਾ ਸੰਮੇਲਨ ਦਿੱਲੀ ਵਿਚ ਹੋਇਆ। ਇਸ ਸੰਮੇਲਨ ਵਿਚ ਸਰਬ ਸਹਿਮਤੀ ਨਾਲ ਸਲਾਹ ਦਿੱਤੀ ਗਈ ਕਿ ਸਾਰੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਲਈ ਇਕ ਸਾਧਾਰਨ ਲਿਪੀ ਦਾ ਹੋਣਾ ਬਹੁਤ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੈ । ਕਿਉਂਕਿ ਇਹ ਲਿਪੀ ਭਾਰਤੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚਾਲੇ ਇਕ ਪੁੱਲ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰੇਗੀ ਅਤੇ ਇਸ ਕਾਰਜ ਨਾਲ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਏਕਤਾ ਪੈਦਾ ਹੋਵੇਗੀ।

> ਸੋ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਅਖਿਲ ਭਾਰਤੀ ਲਿਪੀ ਦਾ ਸਰੂਪ ਅਤੇ ਸਮਰੱਥਾ ਦੇਣ ਦੇ ਉਦੇਸ਼ ਤੋਂ ਇਸ ਵਿਚ ਹਿੰਦੀਤਰ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਧੁਨੀਆਂ ਲਈ ਨਵੇਂ ਪ੍ਰਤੀਕਾਂ ਨੂੰ ਸ਼ਾਮਲ ਕਰਨਾ ਲੋੜੀਂਦਾ ਸੀ। ਇਸ ਕਾਰਜ ਲਈ **1961** ਈ. ਵਿਚ ਭਾਰਤ ਸਰਕਾਰ ਵੱਲੋਂ ਇਕ ਭਾਸ਼ਾਵਿਦ ਸਮਿਤੀ ਦਾ ਗਠਨ ਕੀਤਾ ਗਿਆ। ਇਸ ਸਮਿਤੀ ਨੇ ਆਪਣੀਆਂ ਸਿਫ਼ਾਰਸ਼ਾਂ ਸਰਕਾਰ ਕੋਲ ਭੇਜੀਆਂ ਅਤੇ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਸਿਫ਼ਾਰਸ਼ਾਂ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਵੀ ਕੀਤਾ।
>
> ਮਾਨਕ ਦੇਵਨਾਗਰੀ (ਜਿਸ ਵਿਚ ਹਿੰਦੀ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਧੁਨੀਆਂ ਵੀ ਸ਼ਾਮਿਲ ਹਨ) ਅਤੇ ਸਾਰੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਲਈ ਸਾਧਾਰਨ ਰਾਸ਼ਟਰ ਲਿਪੀ ਪਰਿਵਰਧਿਤ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਨਾਮਕ ਦੋ ਕਿਤਾਬਾਂ ਨਵੰਬਰ **1966** ਵਿਚ ਭਾਰਤ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਛਾਪੀਆਂ ਅਤੇ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਕੁਝ ਪ੍ਰਸਿੱਧ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਸਭਾ ਬੁਲਾ ਕੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਸਹਿਮਤੀ ਲਈ। ਦੂਜੀ ਪੁਸਤਕ ਵਿਚ ਸਰਕਾਰ ਨੇ ਆਪਣੇ ਫੈਸਲਿਆਂ ਦੀ ਵਿਵਹਾਰਕਤਾ ਦਰਸਾਉਣ ਲਈ ਭਾਰਤ ਦੇ ਸੰਵਿਧਾਨ ਦੀ ਅਠਵੀਂ ਅਨੁਸੂਚੀ ਵਿਚ ਦਰਜ਼ 14ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਲਿਖੀ ਧਾਰਾ **351** ਦਾ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ।''[1]

ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਲੋੜ ਕਿਉਂ ਹੈ

ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਉਚਾਰਣ ਨੂੰ ਸਿੱਖਣ ਦਾ ਸਭ ਤੋਂ ਸੁਖਾਲਾ ਰਾਹ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਆਰੰਭ ਤੋਂ ਹੀ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਲੋੜ ਸਮਾਜ ਨੂੰ ਰਹੀ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਰਾਹੀਂ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤਕ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤਕ, ਧਾਰਮਿਕ, ਨੈਤਿਕ ਲੈਣ-ਦੇਣ ਕਰਨਾ ਸਹਿਜ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿਉਂਕਿ ਭਾਰਤੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਜ਼ਿਆਦਾਤਰ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਧੁਨੀਆਂ ਵਿਚ ਸਮਾਨਤਾ ਪਾਈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਥੇ ਇਹ ਵੀ ਧਿਆਨ ਰੱਖਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ ਕਿ ਭਾਰਤੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਬਜਾਇ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਕਰਨਾ ਜ਼ਿਆਦਾ ਆਸਾਨ ਹੈ ਅਤੇ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਰਾਹੀਂ ਭਾਰਤੀ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਜਾਂ ਕਿਸੇ ਵੀ ਅਨੁਸ਼ਾਸਨ ਦੀ ਏਕਤਾ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। "ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਸਮੇਂ ਵਿਚ ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਅਸੀਂ ਜਾਣਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਪੜ੍ਹਨ-ਪੜ੍ਹਾਉਣ ਦੀ ਪਰੰਪਰਾ ਰਹੀ ਹੈ । ਇਸ ਕਰਕੇ ਜ਼ਿਆਦਾਤਰ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਵਰਣਮਾਲਾ ਸੰਸੰਕ੍ਰਿਤ ਧੁਨੀਆਂ 'ਤੇ ਹੀ ਆਧਾਰਿਤ ਹੈ ਪਰੰਤੂ ਕਈ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਉਸ ਨੂੰ ਪ੍ਰਗਟਾਉਣ ਲਈ ਲਿਪੀ ਚਿਨ੍ਹ ਵੱਖੋ-ਵੱਖਰੇ ਹਨ। ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਹਿੰਦੀ ਭਾਸ਼ੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਿੱਖਣ ਦਾ ਆਰੰਭ अ, आ, ई ਤੋਂ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਉਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਤੇਲਗੂ ਭਾਸ਼ੀ ਵੀ ਇਨ੍ਹਾਂ ਧੁਨੀਆਂ ਤੋਂ ਆਪਣੀ ਸਿੱਖਿਆ ਅਰੰਭ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਅੰਤਰ ਇਹ ਤਾਂ ਬਸ ਇਹੋ ਕਿ ਹਿੰਦੀ ਭਾਸ਼ੀ ਉਸ ਨੂੰ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਲਿਖਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਤੇਲਗੂ ਭਾਸ਼ੀ ਤੇਲਗੂ ਲਿਪੀ ਵਿਚ।

ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਅੰਤਰ ਹੋਣ ਕਰਕੇ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਸੰਰਚਨਾ ਸੰਬੰਧੀ ਜਿਹੜੇ ਸਮਾਨ ਤੱਤ ਪਾਏ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਉਸ ਤੋਂ ਇਕ ਭਾਸ਼ੀ ਅਣਜਾਣ ਰਹਿ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਸੰਰਚਨਾ ਅਤੇ ਸਰੂਪ ਨੂੰ ਸਮਝਣ ਲਈ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵਧੀਆ ਮਾਧਿਅਮ ਹੈ। ਭਾਸ਼ਾ ਪੜ੍ਹਨ ਦੀ ਸੁਵਿਧਾ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰੱਖਦੇ ਹੋਏ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਦੁਆਰਾ ਵੱਖ ਵੱਖ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੇ ਸਾਹਿਤ 'ਚ ਦਰਜ਼ ਸਮੱਗਰੀ ਨੂੰ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਰਾਹੀਂ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਹਰ ਕੋਨੇ ਤੱਕ ਪਹੁੰਚਾਇਆ ਗਿਆ ਹੈ। "ਮਾਨਤਾ ਹੈ ਕਿ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਭਾਰਤ ਦੀ ਸਭ ਤੋਂ ਵੱਧ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਲਿਪੀ ਹੈ। ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ, ਹਿੰਦੀ ਅਤੇ ਮਰਾਠੀ ਆਦਿ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਇਸੇ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਲਿਖੀਆਂ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਬੰਗਾਲੀ (ਉੜੀਆ ਅਤੇ ਅਸਮੀ) ਪੰਜਾਬੀ (ਗਰਮੁਖੀ) ਅਤੇ ਗੁਜਰਾਤੀ ਲਿਪੀਆਂ ਇਸ ਨਾਲ ਬਹੁਤ ਮਿਲਦੀਆਂ ਜੁਲਦੀਆਂ ਹਨ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੇ ਅੱਖਰਾਂ ਅਤੇ ਵਿਅੰਜਣਾਂ ਦਾ ਧੁਨੀ ਪ੍ਰਬੰਧ ਬਹੁਤ ਸਮਾਨਤਾ ਰੱਖਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਕਰਕੇ ਹਿੰਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ ਅਤੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਹਿੰਦੀ ਵਿਚ ਸਰਲਤਾ ਨਾਲ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਕੀਤਾ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ।"[2]

ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦਾ ਮਹੱਤਵ ਇਸ ਕਰਕੇ ਵੀ ਵੱਧ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਕਿ ਬਹੁਤ ਸਾਰੇ ਲੋਕੀ ਮੌਖਿਕ ਰੂਪ ਤੋਂ ਤਾਂ ਅਨੇਕਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਜਾਣਦੇ ਹਨ, ਬੋਲਦੇ ਹਨ ਪਰੰਤੂ ਲਿਪੀ ਦੀ ਭਿੰਨਤਾ ਕਾਰਨ ਉਸ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਪੜ੍ਹਦੇ ਸਮੇਂ ਮੁਸ਼ਕਲ ਅਨੁਭਵ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਅਜਿਹੀਆਂ ਕਠਿਨ ਪਰਿਸਥਿਤੀਆਂ ਵਿਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੀ ਉਹ ਸਹਿਜ ਮਾਰਗ ਹੈ, ਜਿਹੜਾ ਵੱਖ ਵੱਖ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੇ ਸਾਹਿਤ ਵਿਚ ਨੇੜਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਕੇ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਨੈਤਿਕ, ਸਭਿਆਚਾਰਕ, ਧਾਰਮਿਕ ਏਕਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਆਪਣੀ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਬਗੈਰ ਕਿਸੇ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਗਿਆਨ ਨਾ ਹੁੰਦੇ ਹੋਏ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਿੱਖਣ, ਸਾਹਿਤ ਅਧਿਐਨ ਅਤੇ ਅਨੁਵਾਦ ਕਰਨ ਲਈ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੀ ਪ੍ਰੇਰਨਾ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਕਿਸੇ ਵੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਸਿੱਖਣ ਦੀ ਦ੍ਰਿਸ਼ਟੀ ਤੋਂ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਵਿਸ਼ੇਸ਼ ਉਪਯੋਗੀ ਸਿੱਧ ਹੋ ਸਕਦਾ ਹੈ। ਸੋ "ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਭਾਰਤ ਵਰਗੇ ਬਹੁਭਾਸ਼ੀ ਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਭਾਸ਼ਾ ਬੋਲਣ ਵਾਲਿਆ 'ਚ ਭਾਵਨਾਤਮਕ ਅਤੇ ਸਾਹਿਤਕ ਏਕਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੀ ਹੈ ਅਤੇ ਵਿਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿਚ ਭਾਸ਼ਾਈ ਕਠਿਨਾਈਆਂ ਨੂੰ ਦੂਰ ਕਰਕੇ ਅੰਤਰਰਾਸ਼ਟਰੀ ਸੰਚਾਰ ਨੂੰ ਆਸਾਨ ਬਣਾਉਂਦਾ ਹੈ। ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਹੀ ਕਿਸੇ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਨੂੰ ਦੂਜੀ ਲਿਪੀ (ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਤੋਂ ਰੋਮਨ) ਵਿਚ ਧੁਨੀਆਤਮਕ ਰੂਪ ਵਿਚ ਬਦਲਦੇ ਹੋਏ ਉਚਾਰਣ ਅਤੇ ਸਮਝ ਨੂੰ ਵਿਵਸਥਤ ਕਰਦਾ ਹੈ ਅਤੇ ਵਿਦੇਸ਼ਾਂ ਵਿਚ ਰਹਿ ਰਹੇ ਭਾਰਤੀਆਂ ਲਈ ਰੋਮਨ ਨੂੰ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਅਤੇ ਗੁਰਮੁਖੀ ਆਦਿ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਦੀ ਲਿਪੀ ਵਿਚ ਬਦਲਕੇ ਵਿਸ਼ਵੀਕਰਣ ਸਥਾਪਿਤ ਕਰਨ ਵਿਚ ਪੁੱਲ ਦਾ ਕੰਮ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਡਾ. ਰਾਮਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਕਸੈਨਾ ਅਨੁਸਾਰ, ''ਇਸ ਤੋਂ ਇਲਾਵਾ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਲੋੜ ਨੂੰ ਅਸੀਂ ਹੇਠ ਲਿਖੀਆਂ ਪਰਿਸਥਿਤੀਆਂ ਅਨੁਸਾਰ ਵੰਡ ਸਕਦੇ ਹਾਂ[3]-

ਜਦੋਂ ਕੋਈ ਲਿਖਤੀ ਭਾਸ਼ਾ ਸਮਾਜਿਕ, ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਜਾਂ ਧਾਰਮਿਕ ਕਾਰਨਾਂ ਕਰਕੇ ਕਿਸੇ ਦੂਜੀ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਅਪਣਾਉਂਦੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਇਹ ਸਥਿਤੀ ਕਈ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੀ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿੱਚ, ਹੇਠ ਲਿਖੀਆਂ ਗੱਲਾਂ ਸੰਭਵ ਹੋ ਸਕਦੀਆਂ ਹਨ-

(ੳ) ਕੋਈ ਭਾਸ਼ਾ ਆਪਣੇ ਪਰਿਵਾਰ ਦੀ ਆਪਣੇ ਨੇੜੇ ਬੋਲੀ ਜਾਣ ਵਾਲੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਲਿਪੀ ਅਪਣਾ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਜੇਕਰ ਇਹ ਲਿਖੀ ਹੋਈ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, 'ਭੀਲੀ ਭਾਸ਼ਾ' ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਅਪਣਾ ਸਕਦੀ ਹੈ, ਕਿਉਂਕਿ ਭੀਲੀ ਵਰਤਮਾਨ ਵਿੱਚ ਇੱਕ ਆਰੀਅਨ ਭਾਸ਼ਾ ਹੈ (ਕੁਝ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਦਾ ਮੰਨਣਾ ਹੈ ਕਿ ਇਸਦੀ ਮੂਲ ਭਾਸ਼ਾ ਇੱਕ ਗੈਰ-

ਆਰੀਅਨ ਭਾਸ਼ਾ ਹੋ ਸਕਦੀ ਹੈ), ਅਤੇ ਮੱਧ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ (ਜਿੱਥੇ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਆਬਾਦੀ ਬਹੁਤ ਜ਼ਿਆਦਾ ਹੈ) ਵਿੱਚ ਇਸਦੇ ਆਲੇ ਦੁਆਲੇ ਦੀ ਮਾਨਕ ਭਾਸ਼ਾ ਹਿੰਦੀ ਹੈ, ਜੋ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

(ਅ) ਇਹ ਵੀ ਸੰਭਵ ਹੈ ਕਿ 'ਗੌਂੜੀ' ਇੱਕ ਦ੍ਰਾਵਿੜ ਭਾਸ਼ਾ ਹੈ, ਜਿਹੜੀ ਹਿੰਦੀ ਅਤੇ ਮਰਾਠੀ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਬੋਲੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਜਿੱਥੇ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਵਰਤੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਅਜਿਹੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿੱਚ, ਗੌਂੜੀ ਲਈ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਅਪਨਾਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।

(ੲ) ਕਈ ਵਾਰੀ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਕਾਰਨਾਂ ਕਰਕੇ, ਕਿਸੇ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਬੋਲਣ ਵਾਲੇ ਲੋਕੀ ਵਿਦੇਸ਼ੀ ਲਿਪੀ ਅਪਣਾਉਣਾ ਚਾਹ ਸਕਦੇ ਹਨ। ਨਾਗਾਲੈਂਡ ਦੇ ਲੋਕ ਆਪਣੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਲਈ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਕਰਨਾ ਪਸੰਦ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਹਾਲਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਜ਼ਿਆਦਾਤਰ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਅਨੁਸਾਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ:

(1) ਜੇਕਰ ਦੋਵਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ (ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਹਿੰਦੀ ਅਤੇ ਭੀਲੀ) ਦੀ ਧੁਨੀ ਪ੍ਰਣਾਲੀ ਵਿਚ ਜ਼ਿਆਦਾ ਅੰਤਰ ਨਹੀਂ ਹੈ, ਤਾਂ ਅਣਲਿਖਤ ਭਾਸ਼ਾ ਲਿਖਤੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਚੰਗੇ-ਮਾੜੇ ਸਾਰੇ ਪ੍ਰਭਾਵਾਂ ਨੂੰ ਅਪਣਾ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, ਭੀਲੀ ਵਿੱਚ 'ਬਾਤ੍ਰ ਸ਼ਬਦ ਵਰਤਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਸ ਲਈ, ਇਹ **100%** ਸੰਭਾਵਨਾ ਹੈ ਕਿ ਭੀਲੀ ਭਾਸ਼ਾ ਇਸ ਸ਼ਬਦ ਨੂੰ 'ਬਾਤ੍ਰ ਦੀ ਬਜਾਏ 'ਬਾਤਾ' ਲਿਖਿਆ ਜਾਵੇਗਾ।

(2) ਦੂਜੇ ਪਰਿਵਾਰਾਂ ਦੀਆਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਲਿਖਣ ਲਈ, ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਕੁਝ ਸੋਧਾਂ ਕਰਨੀਆਂ ਜ਼ਰੂਰੀ ਹੋਣਗੀਆਂ, ਜਿਵੇਂ ਕਿ ਛੋਟੇ 'आ, ए, ओ ' ਆਦਿ ਲਈ ਨਵੇਂ ਲਿਪੀ ਚਿੰਨ੍ਹ।

(3) ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੀ ਸਥਿਤੀ ਵਿਚ ਦੂਜੇ ਵਾਂਗ ਵਿਵਹਾਰ ਹੋਣ ਦੀਆਂ ਸੰਭਾਵਨਾਵਾਂ ਹਨ। ਇਹਨਾਂ ਹਾਲਾਤਾਂ ਵਿੱਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਨ ਕੋਈ ਸਮੱਸਿਆ ਨਹੀਂ ਹੈ। ਅਜਿਹੀਆਂ ਸਥਿਤੀਆਂ ਜਿੱਥੇ ਕੋਈ ਭਾਸ਼ਾ ਇੱਕ ਵੱਖਰੀ ਲਿਪੀ ਅਪਣਾਉਂਦੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਅਨੁਸਾਰ ਸੰਭਵ ਹੈ ਕਿ **:-**

(ੳ) ਕਈ ਵਾਰੀ ਸਮਾਜਿਕ ਜਾਂ ਰਾਜਨੀਤਿਕ ਕਾਰਨਾਂ ਕਰਕੇ, ਕੋਈ ਭਾਸ਼ਾ ਆਪਣੀ ਮੌਜੂਦਾ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਛੱਡ ਸਕਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਇੱਕ ਨਵੀਂ ਲਿਪੀ ਅਪਣਾ ਸਕਦੀ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, ਤੁਰਕੀ ਨੇ ਅਰਬੀ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਛੱਡ ਦਿੱਤਾ ਹੈ ਅਤੇ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਅਪਣਾ ਲਿਆ ਹੈ।

(ਅ) ਜਦੋਂ ਕੋਈ ਭਾਸ਼ਾ ਅਤੇ ਉਸਦੀ ਲਿਪੀ ਪੁਰਾਣੀ ਜਾਂ ਖਤਮ ਹੋਣ ਦੀ ਕਗਾਰ ਤੇ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਤਾਂ ਪੂਰੀ ਭਾਸ਼ਾ ਨੂੰ ਇੱਕ ਪ੍ਰਚਲਿਤ ਕਿਸੇ ਨਵੀਂ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖ ਲਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, ਇਜਿਪਸ਼ਿਅਨ, ਅਕਾਦਿਯਨ ਅਤੇ ਸੁਮੇਰੀਅਨ ਸ਼ਿਲਾਲੇਖਾਂ ਨੂੰ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਲਿਪੀ ਦਾ ਅਰਥ ਨੂੰ ਸਮਝਣ **(decipher)** ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਪੀਬੱਧ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

(ੲ) ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੀ ਸਿੱਖਿਆ ਵਿੱਚ, ਵਿਦਿਆਰਥੀਆਂ ਦੀ ਸਹੂਲਤ ਲਈ ਮੂਲ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਉਨ੍ਹਾਂ ਦੀ ਪਹਿਲਾਂ ਸਿੱਖੀ ਗਈ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਕੀਤਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਉਦਾਹਰਣ ਵਜੋਂ, ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਸ਼ੁਰੂ ਵਿੱਚ ਅੰਗਰੇਜ਼ੀ ਬੋਲਣ ਵਾਲਿਆਂ ਨੂੰ ਹਿੰਦੀ ਸਿਖਾਉਣ ਲਈ ਕੀਤੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। ਜਦੋਂ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਯੂਰਪ ਪਹੁੰਚੀ, ਤਾਂ ਉੱਥੋਂ ਦੇ ਲੋਕ ਦੇਵਨਾਗਰੀ, ਬ੍ਰਾਹਮੀ, ਆਦਿ ਲਿਪੀਆਂ ਨਹੀਂ ਜਾਣਦੇ ਸਨ। ਇਸ ਲਈ, ਰੋਮਨ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਦਾ ਅਧਿਐਨ ਸਿਖਾਇਆ ਜਾਂਦਾ ਸੀ।

(ਸ) ਤੁਲਨਾਤਮਕ ਆਦਿ ਅਧਿਐਨਾਂ ਲਈ, ਖੋਜਕਰਤਾ ਲਕਸ਼ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਆਪਣੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਕਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਪਹਿਲੀਆਂ ਦੋ (ਅ ਅਤੇ ਆ) ਦੂਜੀ (ੲ ਅਤੇ ਈ) ਤੋਂ ਇਸ ਪੱਖੋਂ ਵੱਖਰੀਆਂ ਹਨ ਕਿ ਪਹਿਲੀ ਵਿੱਚ, ਪੁਰਾਣੀ ਲਿਪੀ ਨੂੰ ਛੱਡ ਦਿੱਤਾ ਗਿਆ ਹੈ, ਭਾਵ ਇਹ ਸਿਰਫ਼ ਇਤਿਹਾਸਕ ਮਹੱਤਵ ਨੂੰ ਬਰਕਰਾਰ ਰੱਖਦੀ ਹੈ। ਦੂਜੇ ਵਿਚ ਦੋਵੇਂ

ਲਿਪੀਆਂ ਦੀ ਵਰਤੋਂ ਜਾਰੀ ਹੈ। ਕਈ ਵਾਰ, ਇੱਕੋ ਭਾਸ਼ਾ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਖੇਤਰਾਂ ਵਿੱਚ ਵੱਖ-ਵੱਖ ਲਿਪੀਆਂ ਵਿੱਚ ਲਿਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਭਾਰਤ ਵਿੱਚ, ਪੰਜਾਬੀ ਭਾਸ਼ਾ ਗੁਰਮੁਖੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ, ਅਤੇ ਪਾਕਿਸਤਾਨ ਵਿੱਚ, ਇਹ ਅਰਬੀ-ਫ਼ਾਰਸੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖੀ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਪ੍ਰਾਚੀਨ ਸਮੇਂ ਵਿੱਚ, ਸੰਸਕ੍ਰਿਤ ਭਾਰਤ ਦੇ ਉੱਤਰ-ਪੱਛਮੀ ਖੇਤਰ ਵਿੱਚ ਖਰੋਸ਼ਠੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਅਤੇ ਕਿਤੇ ਹੋਰ ਬ੍ਰਾਹਮੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖੀ ਜਾਂਦੀ ਸੀ। 16ਵੀਂ ਅਤੇ 18ਵੀਂ ਸਦੀ ਦੇ ਵਿਚਕਾਰ, ਮਰਾਠੀ ਸਾਹਿਤ ਦੇਵਨਾਗਰੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਉਪਲਬਧ ਹੈ, ਅਤੇ ਮਰਾਠੀ ਦਸਤਾਵੇਜ਼ (Documents) 'ਮੋੜੀ' ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਉਪਲਬਧ ਹਨ।

- ਜਦੋਂ ਇੱਕ ਭਾਸ਼ਾ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿੱਚ ਵਰਤੇ ਜਾਂਦੇ ਨਾਂਵ ਅਤੇ ਹਵਾਲੇ ਆਪਣੀ ਲਿਪੀ ਵਿੱਚ ਲਿਖਦੀ ਹੈ।
- ਜਦੋਂ ਕੋਈ ਭਾਸ਼ਾ ਆਗਤ ਸ਼ਬਦਾ (ਅਤੇ ਆਗਤ ਮਿਸ਼ਰਤ ਸ਼ਬਦਾਂ) ਨੂੰ ਲਿਖਦੀ ਹੈ।

ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦੇ ਉਕਤ ਫਾਇਦੇ ਅਜੋਕੇ ਯੁੱਗ ਨੂੰ ਦੇ ਵਿਦਵਾਨਾਂ ਨੂੰ ਹਰੇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ **ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਧਰਮ ਗ੍ਰੰਥਾਂ ਨੂੰ ਵੱਖ ਵੱਖ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਵਿਚ** ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਿਤ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਪਰ ਇਥੇ ਇਹ ਖਾਸ ਧਿਆਨ ਰੱਖਣ ਦੀ ਲੋੜ ਹੈ ਕਿ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਦਾ ਉਦੇਸ਼ ਅਤੇ ਸ਼ਬਦਾਂ ਦੀ ਸੰਰਚਨਾ, ਬਨਾਵਟ ਦੇ ਮੂਲ ਰੂਪ ਨੂੰ ਸੁਰੱਖਿਅਤ ਰੱਖਣਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਭਾਵੇਂ ਅਜਿਹਾ ਕਰਦੇ ਸਮੇਂ ਦੂਜੀ ਭਾਸ਼ਾ ਵਿਚ ਮੂਲ ਭਾਸ਼ਾ ਦਾ ਉਚਾਰਣ ਚੰਗੀ ਤਰ੍ਹਾਂ ਨਾ ਹੋ ਸਕੇ। ਸੋ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਅੱਖਰ ਦੇ ਅਰਥ ਨੂੰ ਬਦਲੇ ਬਗੈਰ ਹੀ ਸ਼ਬਦਾਂ ਜਾਂ ਵਰਣਮਾਲਾ ਦਾ ਧੁਨੀਆਤਮਕ ਉਚਾਰਣ ਹੀ ਪੇਸ਼ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਸ਼ਬਦਾਂ ਰਾਹੀਂ ਬਣੇ ਵਾਕਾਂ ਦਾ ਅਰਥਬੋਧ ਤਾਂ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਅਨੁਵਾਦ ਜਾਂ ਵਿਆਖਿਆ ਰਾਹੀਂ ਹੀ ਸਮਝਿਆ ਜਾ ਸਕਦਾ ਹੈ। **ਸੋ ਭਾਸ਼ਾਈ ਪੱਧਰ 'ਤੇ ਵਿਸ਼ਵੀ ਏਕਤਾ ਪੈਦਾ ਕਰਨ ਵਿਚ ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਇਕ ਵੱਡਮੁੱਲਾ ਅਤੇ ਸਹਾਇਕ ਸਰੋਤ ਸਿੱਧ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਰਾਹੀਂ ਅਨੇਕਾਂ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਜਿਵੇਂ ਬੰਗਾਲੀ, ਮਰਾਠੀ, ਹਿੰਦੀ, ਪੰਜਾਬੀ ਅਤੇ ਰੋਮਨ ਦੀ ਭਾਸ਼ਾ ਦੇ ਸੰਰਚਨਾਤਮਕ ਸਰੂਪ ਦੀ ਜਾਣਕਾਰੀ ਤਾਂ ਪ੍ਰਾਪਤ ਹੁੰਦੀ ਹੈ ਨਾਲ ਹੀ ਇਕ ਭਾਸ਼ਾ ਤੋਂ ਵੱਧ ਭਾਸ਼ਾਵਾਂ ਸਿੱਖਣ ਪ੍ਰਤੀ ਰੁਚੀ ਦਾ ਵਿਕਾਸ ਵੀ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਜੋ ਗਿਆਨ ਖੇਤਰ ਦੇ ਵਿਸਥਾਰ 'ਚ ਬਹੁਤ ਹੀ ਸਹਾਇਕ ਸਿੱਧ ਹੁੰਦਾ ਹੈ।**

ਸੰਦਰਭ

1. ਡਾ. ਰਾਮਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਕਸੈਨਾ, ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਸਿਧਾਂਤ ਅਤੇ ਪ੍ਰਯੋਗ, ਵੈਭਵ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਰਾਇਪੁਰ, ਪੰਨਾ. 75-80
2. ਗੂਗਲ ਤੋਂ ਲਿਆ ਗਿਆ।
3. (ਡਾ. ਰਾਮਪ੍ਰਕਾਸ਼ ਸਕਸੈਨਾ, ਲਿਪੀਅੰਤਰਣ ਸਿਧਾਂਤ ਅਤੇ ਪ੍ਰਯੋਗ, ਵੈਭਵ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਰਾਇਪੁਰ, ਪੰਨਾ. 75-81)

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 184-188
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

मिथक एवं समकालीन चेतना का अंत:संबंध

अमित कौर
शोधार्थी,
कलकत्ता विश्वविद्यालय

मिथक और समकालीनता एक सिक्के के दो पहलू हैं। वेदों, पुराणों व अन्य धर्मग्रंथों से उद्धरण लेकर पौराणिक कथावृत्तों के सहारे अनेक आधुनिक कथाकारों ने मिथक को आधुनिक संदर्भों में देखने का प्रयास किया तथा मिथकों को एक नया वैचारिक आलोक देकर उसकी महत्ता को बढ़ा दिया। कथाकारों ने प्राचीन भारतीय मिथकों, प्रतीकों को आधुनिक संदर्भों में इस्तेमाल कर उन्हें समकालीन जीवन से जोड़कर प्रस्तुत किया।

रामायण एवं महाभारत ही नहीं पुराण साहित्य, योग वशिष्ट, अध्यात्म रामायण एवं भारतीय जनमानस में प्रचलित विभिन्न कथाएं प्रकारांतर से किसी-न-किसी रूप में समाज सापेक्ष हैं। भिन्न-भिन्न समयावधि में रचनाकार इसमें परिवर्तन कर इसे उस काल-विशेष की समकालीनता से जोड़कर प्रस्तुत करने के प्रयास में इन मिथकों में नवीन अर्थबोध का सृजन कर देते हैं। इस प्रकार के प्रयोग मिथकों के प्राणवान बने रहने के लिए भी अपरिहार्य हैं। कारण, हर युग का अपना परिवेश तथा अपनी समस्याएं होती हैं। साहित्यकार का समाज के प्रति दायित्वबोध भी होता है और जवाबदेही भी। अपने परिवेशबोध, युगबोध के प्रति सजग साहित्यकार मिथकों को समकालीन संदर्भ में प्रयुक्त कर स्वस्थ साहित्य का निर्माण करते हैं, जिससे समकालीन जीवन और भावबोध लाभान्वित हो सके।

पुराणों तथा प्राचीन ग्रंथों में व्याप्त घटनाओं तथा कथाओं से तत्कालीन समकालीन यथार्थ का बोध होता है। एक तरफ मिथकों के द्वारा हम हमारे अतीत से परिचित होते हैं, वहीं मिथक हमारे पौराणिक, सांस्कृतिक जीवन की अमूल्य धरोहर हैं, जिनसे हमारा समकालीन जीवन और समाज प्रभावित होता है। दामोदर धर्मानंद कोसम्बी की रचना **'मिथक और यथार्थ'** में एक उदाहरण है, ''जिस तरह का वर्णन मिलता है, अगर महाभारत का युद्ध सचमुच ही उतने बड़े पैमाने पर लड़ा गया हो तो दिल्ली और थानेश्वर के बीच के मैदान में 18 दिन के उस युद्ध में लगभग 50 लाख योद्धा एक-दूसरे से लड़ते हुए खेत रहे। लगभग 1,30,000 रथ (अश्वों सहित), उतने ही हाथी और उनके तिगुने घोड़े काम में लाए गए। इसका मतलब हुआ कि योद्धा रूप में कम से कम उतने ही लश्करी और परिचारक भी रहे होंगे। इतनी बड़ी सेना तब तक नहीं जुटाई जा सकती थी, जब तक कुल आबादी 20 करोड़ न हो, भारतीय जनसंख्या ब्रिटिश काल आने तक भी इस हद को नहीं पहुँची थी।''[1]

अत: दामोदर धर्मानंद कोसम्बी के कथनानुसार महाभारत के युद्ध में कुछ असंगत तथ्य हैं, जो तत्कालीन तथ्यों से मेल नहीं खाते, फिर भी द्वापर युग की इन सभी घटनाओं में कुछ तथ्यहीन बातें हों भी तो इस सत्य को

1 *कोसम्बी दामोदर धर्मानंद, मिथक और यथार्थ, प्रकाशक-दिल्ली ग्रेंड शिल्पी, संस्करण : 2001, पृष्ठ संख्या-14-15*

नजरअंदाज नहीं कर सकते कि महाभारत की कथा हमारे समकालीन जीवन को प्रभावित करती है। युद्ध की विभीषिका को श्री कृष्ण द्वारा रोके जाने का प्रयत्न, मानव समाज के लिए एक संदेश के साथ आता है कि युद्ध किसी भी युग और समाज के लिए मंगलकारी नहीं है। युद्ध की विभीषिका और युद्धोपरांत की स्थिति किसी भी युग और समाज में शोभनीय नहीं है।

पुराकालीन महाभारत युद्ध हो या 1945 में अमेरिका द्वारा जापान के हिरोशिमा, नागासाकी शहर पर परमाणु बम गिराया जाना अथवा हाल ही में 2022 में हुए रूस और यूक्रेन के बीच का युद्ध हो, ''अत: यूक्रेन में जारी युद्ध से अत्यधिक नागरिक क्षति हो रही है और लाखों लोग भोजन, पानी और अन्य आवश्यक आपूर्ति से वंचित हो रहे हैं। 24 फरवरी, 2022 से लगभग 23,000 लोगों की मौत के साथ निर्दोष नागरिकों को क्रूरतापूर्वक संघर्ष में फँसाया गया है। 8,000 से अधिक लोग मारे गये हैं, वास्तविक संख्या बहुत अधिक होने की संभावना है। 5.1 मिलियन से अधिक लोग आंतरिक रूप से विस्थापित हो गए।''[2]

2024 में इजराइल द्वारा गाजा पर 48 घंटों में 60 बार बमबारी की गई और हजारों रॉकेट एक साथ लॉन्च किए गए। *एन. एम. विकिपीकडिया* के अनुसार, ''इजराइली ऑपरेशन की शुरुआत के बाद से गाजा में 35,000 से अधिक फिलिस्तीनी मारे गए हैं। इनमें से संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि कम से कम 56% महिलाएँ और बच्चे हैं। 10,000 अन्य लापता हैं और माना जाता है कि वे मलवे में फँसे हैं। पट्टी की लगभग सभी 2.3 मिलियन फिलिस्तानी आबादी को जबरन विस्थापित कर दिया गया है और एक लाख से अधिक इसराइली आंतरिक रूप से विस्थापित हैं। 2024 की शुरुवात तक, इजराइली सेना ने गाजा के आधे से अधिक घरों को क्षतिग्रस्त या नष्ट कर दिया था। इसके कम से कम एक तिहाई पेड़ और खेत, इसके अधिकांश स्कूल और विश्वविद्यालय, जिसे 'स्कोलास्टिसाइड' कहा गया है, सैकड़ों सांस्कृतिक स्थल और दर्जनों कब्रिस्तान।''[3]

न्यूज यूएन ओराजी की रिपोर्ट के अनुसार, ''संयुक्त राष्ट्र के मानवीय सहायक कर्ताओं ने बताया है कि गाजा के सुदूर दक्षिण शहर 'रफा' में और इसके आसपास रात तक जारी इजराइली बमबारी के बीच सोमवार से अब तक 80,000 लोग 'रफा' छोड़ चुके हैं।''[4]

युद्ध की भयंकर स्थितियों के परिणाम स्वरूप हजारों, लाखों की संख्या में लोगों को अपने घरों से विस्थापित होना पड़ रहा है। *'जान' है तो जहान है'* के संदेश के साथ विस्थापन की पीड़ा को साथ लिए लोग ''वाहनों, ट्रकों, मोटरसाइकिलों और गधा गाड़ियों में जो कुछ भी ले जा सकते हैं, उसके साथ जा रहे है।''[5]

किसी भी युद्ध से सबसे ज्यादा नुकसान वैश्विक अर्थव्यवस्था को होता है। युद्ध अपने साथ बेकारी, बेरोजगारी, महँगाई, आर्थिक मंदी, विस्थापन के दर्द और पीड़ा को लेकर आता है। युद्ध की विभीषिका तब भी विनाशकारी थी और समकालीन देश और समाज के लिए भी युद्ध निंदनीय ही है। अत: यहां महाभारतकालीन युद्ध के तथ्यों को जाँचना-परखना मानव का उद्देश्य न होकर मिथक कथा के भीतर गूंजते सत्य से समकालीन चेतना का परिष्कार होना चाहिए।

मिथकों ने समय-समय पर अनेक प्रकार से हमारे समकालीन जीवन को प्रभावित किया है, फिर चाहे विज्ञान का क्षेत्र हो या हमारा सामाजिक जीवन। हमारे धर्मग्रंथों में वर्णित पुराकथा तथा मिथकीय कथाएं वक्त-बेवक्त हमारे

---

2 *https://www.rescue.org/article/ukraine-war-what-are-impacts-world-today.*

3 *http://en.m.wikipedia.org/wiki/ Israel/Hamas_war*

4 *http://news.un.org/en/story/2024/05/1149531*

5 *http://news.un.org/en/story/2024/ 05/1149531*

जीवन को प्रभावित करती हैं। उदाहरणार्थ 'श्रीमद्भागवत गीता' का एक श्लोक द्रष्टव्य है। गीता में श्री कृष्ण द्वारा भाग्य और कर्म का उल्लेख मिलता है। श्री कृष्ण कर्म को प्रधानता देते हैं और भाग्य को महत्व न देकर कर्म के महत्व को स्थापित करते हैं,

''कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफल हेतुर्भूमा ते सङ्.गोडस्त्व कर्मणि।।''[6]

श्री कृष्ण का कर्म-संदेश समकालीन निष्क्रियताबोध के लिए अत्यंत प्रासंगिक है। जैसा कि कहा ही गया है जब-जब निष्क्रियता बढ़ेगी, भाग्य रसातल की ओर जायेगा। अत: भाग्य के उन्नयन हेतु कर्म आवश्यक है। 'कामायनी' की श्रद्धा भी ***''कर्म का भोग, भोग का कर्म''***[7] कहकर जीवन को कर्ममय बनाने का संदेश ही देती है।

हमारे पुराणों में स्त्री को देवताओं के समान सम्मानीय व पूजनीय माना गया है, ***''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।''***[8]

समाज में स्त्रियों को सुदृढ़ व सम्यक स्थिति प्रदान करने के लिए ऐसी अनेकों मिथकीय कथाएं, जो पुराकाल से प्रचलित हैं, उनके प्रचार की आवश्यकता है। पौराणिक काल में समाज में स्त्री को जहां एक तरफ देवी तथा माँ स्वरूपा माना जाता था और माँ की संज्ञा दी जाती थी, वहीं परिवर्तित काल में नारी को ***'नारी नरक का द्वार'*** तथा ***'ताडन की अधिकारी'*** कहकर उसके सम्मान को क्षय किया गया। समकालीन समाज में भी स्त्री पूरी तरह स्वतंत्र नहीं है। कई तरह से उसके अधिकारों का हनन किया जाता है और उसे मात्र भोग की वस्तु, सौंदर्य संसाधनों से युक्त सौंदर्यमयी आकर्षक वस्तु के रूप में ही स्वीकार किया जाता है। संविधान में होने के बावजूद व्यावहारिक रूप से आज भी कई क्षेत्रों में लड़कियों को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार प्राप्त नहीं है और छोटी उम्र में ही उनका विवाह कर दिया जाता है। असल में समाज भयभीत है कि यदि स्त्रियाँ शिक्षित हो गईं तो वे अपने अधिकारों की मांग समाज से करने लगेंगी और पितृसत्तात्मक समाज में पुरुष वर्चस्व खतरे में पड़ जाएगा, इसलिए आज भी अपनी शिक्षा और समाज में ज्ञान के अधिकार हेतु उन्हें संघर्ष करना पड़ता है। ***'बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओ'*** आदि आज भी संसार के कई क्षेत्रों में मात्र नारा बनकर रह गया है। फिर भी समकालीन समाज में स्त्रियों ने समाज में प्रचलित इन मिथकों को तोड़ा है और अपने लिए नई जमीन तलाशी है, जहां से आकाश की अनंत ऊँचाइयों को छूते हुए चंद्रयान की सफलता के साथ चंद्रमा तक का सफर तय कर आई है।

समकालीन समाज को वेदों में वर्णित स्त्रियों से प्रेरणा ग्रहण करने की आवश्यकता है। वेदों में जिन स्त्री शक्तियों का वर्णन है, वे सचमुच शक्ति स्वरूपा थीं। चाहे वह ऋषि मुनि अगस्त्य की पत्नी 'लोपामुद्रा' हो, जिन्होंने अपने शिष्यों को सदैव अपने पुत्रों की भांति स्नेह किया या फिर 'अपाला' जिनका सारा ध्यान अपनी गृहस्थी के सुख, समद्धि के लिए था। 'गार्गी', 'मैत्रेयी' ऐसी ही शक्ति स्वरूपा नारियाँ थीं, जिनका वर्णन तथा जिनकी कथाएं समाज में स्त्रियों के चरित्र निर्माण के लिए बचपन से ही घरों तथा स्कूलों में पढ़ाई और सुनाई जानी चाहिए।

---

6 *कृष्णकृपामूर्ति, श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद : श्रीमद्भागवत गीता यथारूप, द्वितीय अध्याय, श्लोक 47, भक्ति वेदांत बुक ट्रस्ट, हरे कृष्ण धाम, मुंबई, संस्करण : 2017, पृष्ठ संख्या-102*

7 *प्रसाद जयशंकर, कामायनी, श्रद्धा सर्ग, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, संस्करण : 2015, पृष्ठ संख्या-56*

8 *मनु स्मृति 3/56।।*

मध्यकालीन संतों ने नारी को भले *ताड़न की अधिकारी* कहकर संबोधित किया, पर आज भी कई वैज्ञानिक आविष्करों के बावजूद वंश परंपरा की वृद्धि स्त्री के बिना असंभव है।

स्त्री की महत्ता समाज के हर क्षेत्र में, हर काल में देखने को मिलती है। यहां तक कि ईश्वरीय सत्ता सीताराम, राधेश्याम, पार्वती महेश, लक्ष्मीगणेश के नाम भी स्त्री के नाम के साथ जुड़कर ही पूर्ण होते हैं। वाल्मीकि कृत रामायण के अनुसार श्री राम का यज्ञ माता सीता की अनुपस्थिति में पूर्ण नहीं हो पाता इसलिए उन्हें माता सीता की मूर्ति की प्रतिष्ठा कर अपना यज्ञ पूर्ण करना पड़ता है।

इसी प्रकार शांतिनिकेतन में स्थापित 'विश्वभारती' विश्व धरोहर के रूप में विख्यात है। इस वटवृक्ष की शुरुवात रवींद्रनाथ ठाकुर ने 1901 में पाँच विद्यार्थियों और पाँच शिक्षकों के साथ 'बह्मचर्य आश्रम' नामक स्कूल की स्थापना के साथ की थी। आज उसी वटवृक्ष की शाखाएँ विश्व प्रांगण तक को अपनी छाया में शीतलता प्रदान कर रही है, जिसे हम 'विश्वभारती' के नाम से जानते हैं। विश्वभारती में स्थापित वट वृक्ष प्रथम 'ब्रह्मचर्य आश्रम' नामक स्कूल की जड़ निर्माण को वित्तपोषित करने के लिए रवींद्रनाथ ठाकुर की पत्नी 'मृणालिनी देवी' ने बीज रूप में अपनी शादी के अधिकांश गहने बेचकर उनकी सहायती की थी। पत्नी वास्तव में पति की अर्धांगिनी अर्थात् शरीर का आधा अंग होती है। अतः पत्नी के बिना पति वास्तव में अधूरा होता है।

आज भी स्त्री की उपस्थिति हर क्षेत्र में अनिवार्य है। देश के प्रसिद्ध उद्योगपति इनफोसिस के मालिक 'नारायण मूर्ति' ने भी अपनी कंपनी की शुरुवात अपनी पत्नी 'सुधाभूर्ति' से उधार लिए हुए 10000 रुपयों से की थी और आज वही इनफोसिस कंपनी इंजीनियरिंग के क्षेत्र में भारत में दूसरे स्थान पर है। अतः स्त्री ही मकान को घर बनाती है। बिना किसी काम के भी हम घर पहुँचकर पहले मां को खोजते हैं, 'मां कहां हो?, रक्षा बंधन के त्योहार में भाई की कलाई पर बंधे रक्षासूत्र में भी बहन का विश्वास तथा उसकी प्रार्थना ही भाई की रक्षा करती है। अत: स्त्री का होना जीवन का होना है, जिस घर में कोई स्त्री न हो, वह घर घर नहीं केवल मकान होता है। अत: वर्तमान में स्त्री को देवी स्वरूपा माना जाना मात्र एक मिथक बनकर रह गया है। वास्तव में उनकी स्थिति में ह्रास हुआ है। अत: पुराणों और मिथक कथाओं को समकालीन संदर्भ में प्रसंगानुरूप प्रस्तुत कर स्थिति में सुधार किया जा सकता है।

व्यक्ति का अहंकार ही उसके विनाश का मूल कारण होता है। हमारे समकालीन समाज में किसी व्यक्ति के पास अन्य कुछ हो न हो पर उसका अहंकार उसकी नाक पर होता है। आज भी व्यक्ति, समाज और देश के विनाश का मूल कारण उसका अहंकार ही होता है, इसका सर्वोत्तम उदाहरण रावण के रूप में समाज के समक्ष उपस्थित है। महाज्ञानी रावण अपने ज्ञान, धन और शक्ति में इस प्रकार अंधा हो गया कि श्री राम से शत्रुता कर अपने कुल के विनाश का कारण बना। यही स्थिति हम दुर्योधन के संदर्भ में भी देखते हैं। अत: इन मिथकीय कथाओं को समकालीन समाज में पूर्णत: प्रचारित करने की आवश्यकता है ताकि समाज में व्याप्त बुराइयाँ खत्म हो सकें और मानव का जीवन और व्यवहार भी परिष्कृत हो समकालीन समाज हेतु वंदनीय हो।

मिथकीय कथाएं तथा इन पर आधारित लौकिक मान्यताएं कई रूपों में हमारे समकालीन जीवन और समाज को प्रभावित करती हैं। हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में ही, जैसे घर से बाहर जाते समय किसी के द्वारा छींक देना या पीछे से आवाज देना, काली बिल्ली का रास्ता काटना, नवीन कार्य के शुभारंभ में टोक देना, कहीं जाने से पूर्व ईश्वर को प्रणाम करना, किसी भी परीक्षा से पूर्व दही-चीनी का सेवन करना, बड़े-बुजुर्गों को प्रणाम करके ही घर से बाहर निकलना इत्यादि पौराणिक काल से चली आ रही है और आज भी हमारे समकालीन जीवन और समाज को अच्छे-बुरे रूप में प्रभावित करती है।

प्रत्येक समाज में कुछ मान्यताएं रूढ़ हो जाती हैं। ऐसी ही एक मान्यता है एक मंडप में एक से अधिक विवाह नहीं कराने की, जो प्राचीन काल से चली आ रही है और वर्तमान समय में भी हमारे समकालीन समाज में यथावत बनी हुई है। आज के वैज्ञानिक युग में भी बड़े-बुजुर्गों का मानना है कि ऐसा करने से किसी भी विवाहित जोड़े का

जीवन सुखमय नहीं हो पाता। असल में यह मान्यता रामायण के मिथक से जुड़ी है, जहां चारों भाइयों राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न का विवाह एक ही मंडप में हुआ और चारों भाइयों में से किस का भी वैवाहिक जीवन सुखमय नहीं रहा।

पौराणिक काल में आरंभ से ही बहुविवाह करने की परंपरा थी। दशरथ ने भी कई विवाह किए और उसका परिणाम कैकयी के रूप में पाया। भीष्म के पिता शांतनु ने भी प्रौढ़ावस्था में सत्यवती से विवाह किया जिसका परिणाम महाभारत के युद्ध के रूप में देखने को मिलता है। आज समकालीन समाज में बहुविवाह की मान्यता नहीं है और इसे उत्तम नहीं माना जाता। इसके पीछे यही मिथकीय प्रसंग तथा उनके दुष्परिणाम हैं, जो समाज को शिक्षित करते हैं। ऐसा ही एक अन्य प्रसंग महाभारत में वर्णित है, ''दक्ष प्रजापति की 27 कन्याओं से विवाह होने पर भी चंद्रमा सर्वाधिक प्रेम रोहिणी से करता था, शेष 26 उपेक्षित पत्नियों के कष्ट से विचलित दक्ष ने चंद्रमा को क्षयग्रस्त होने का श्राप दिया। इसी कारण से चंद्रमा का घटना-बढ़ना प्रारंभ हुआ।''[9]

साहित्य चिंतन में साहित्यकार जब वस्तु वर्णन करता है तो मिथक उसके सहयोगी बनते हैं, किंतु यदि कथावस्तु की प्रासंगिक समझ को मिथक सही ढंग से समकालीन संदर्भ में अभिव्यक्त नहीं करते और स्वस्थ चिंतन-दृष्टि स्थापित नहीं करते तो मिथक का कोई महत्व नहीं है। हमारे समाज में ऐसी अनेक मिथकीय घटनाएं, कथाएं व कहानियाँ विद्यमान हैं, जो मानव के चिंतन अनुरूप समय-समय पर उनके जीवन को प्रभावित करती रहती हैं। मिथक को चाहे सच माने या झूठ परंतु एक बात तो स्पष्ट है कि प्रत्येक मनुष्य की आस्था इनसे जुड़ी हुई है, अत: मिथक को पूर्णत: झूठ या गल्प मानना एक वृहत्तर समाज की भावनाओं को ठेस पहुँचाना है, जहां हमारी संस्कृति हमें यही शिक्षा देती है कि सभी की भावनाओं का सम्मान करना चाहिए।

भारतीय काव्यशास्त्र में सभी रसों की परिणति आनंदमयी मानी गई है। इसी प्रकार मिथक भी नवीन रूपों तथा परिस्थितियों में ढलकर हर युग में आनंद की सृष्टि करते हैं। संदर्भों के बदल जाने से मिथक अपने मूल रूप से थोड़ा विच्छिन्न जरूर होते हैं, लेकिन बहुआयामी होने के कारण ये अपनी परंपरा तथा उसके अपने उत्स को और भी अधिक समृद्ध करते जाते हैं। मानव स्वभाव है कि वह प्राचीन काल से ही अमूर्त्त वस्तुओं को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए रंगों, रेखाओं अथवा शब्दों का माध्यम स्वीकार करता है अर्थात् रंग, रेखा, शब्द आदि के माध्यम से अपनी अनुभूतियों के अभिव्यक्तिकरण की चेष्टा करता है। अभिव्यक्तिकरण की इसी चेष्टा को मिथकवादी समीक्षक मिथक रचना की प्रक्रिया कहते हैं। मिथक वस्तुत: अनुभव, जातीय विश्वास एवं आस्थाओं की अभिव्यक्ति है। अत: इनमें वैज्ञानिकता या अधिक सत्य तलाशना अथवा इन्हें शास्त्रीयता के जटील नियमों में बांधना मिथक के साथ अन्याय होगा। अत: मिथक अपने भाव-संपदा, विचार-संपदा, काल्पनिकता एवं प्रभावोत्पादक शैली के कारण जीवन तथा समाज पर अपनी अमीट छाप छोड़ते हैं।

निष्कर्षत: लोग मिथक, स्वप्न और सत्य में एक साथ जीते हैं। लोक अपनी संवेदनाओं से लोककथाओं द्वारा ऐसे ही मिथकों को बुनता है, जो स्मृतियों में पीढ़ी- दर-पीढ़ी जमा रहते हैं। अत: कहा जा सकता है कि ''मिथक का संसार भावपूर्ण होता है और इसमें कुछ भी संभाव्य है- निर्जीव भी सजीव है और मानवीय भी।''[10]

---

9 *महाभारत, शाल्य पर्व, अध्याय-35*

10 *चातक गोविंद, संपूर्ण रंग नाटक, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण : 1998, पृष्ठ संख्या-7 (आमुख)*

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 189-193
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Artificial Intelligence and Voice Assistants in Daily Life

Aakanksha Khullar
Research Scholar,
Dr. Rekha Rani
Research supervisor, Assistant Professor,
SKD University, Hanumangarh

Abstract
Artificial Intelligence (AI) has emerged as one of the most transformative technologies of the twenty-first century, significantly influencing how individuals interact with digital systems in their everyday lives. Among the many applications of AI, voice assistants have become particularly prominent due to their ability to enable natural communication between humans and machines. Voice assistants use advanced technologies such as speech recognition, natural language processing, and machine learning to interpret spoken commands and provide relevant responses or perform specific tasks. These systems are now integrated into smartphones, smart speakers, home automation devices, and various digital platforms, making them an essential part of modern daily routines. This research paper explores the role of artificial intelligence and voice assistants in daily life, examining their technological foundations, applications, benefits, and challenges. The study highlights how voice assistants contribute to convenience, efficiency, and accessibility by assisting users with tasks such as information retrieval, communication, home automation, and personal organization. At the same time, the paper discusses important concerns related to privacy, security, technological dependence, and ethical implications. The research concludes that while AI-based voice assistants have the potential to significantly improve everyday life, their responsible development and use are essential to ensure that technological progress benefits society as a whole.

Introduction

The rapid advancement of digital technology has profoundly reshaped human lifestyles, communication patterns, and methods of accessing information. Artificial Intelligence, which refers to the development of computer systems capable of performing tasks that typically require human intelligence, has become one of the most influential forces driving this transformation. AI technologies are now embedded in numerous aspects of modern life, including healthcare, transportation, entertainment, and communication. One of the most widely adopted applications of artificial intelligence in recent years is the development of voice assistants.

Voice assistants are AI-powered systems designed to interact with users through spoken language. Unlike traditional computer interfaces that require manual input through keyboards or touchscreens, voice assistants allow users to communicate with digital devices using natural speech. This capability has made technology more accessible and user-friendly, enabling

individuals to perform a wide range of tasks quickly and efficiently. From setting reminders and checking weather forecasts to controlling smart home devices and searching for information online, voice assistants have become an integral part of everyday routines.

The growing popularity of voice assistants can be attributed to several technological developments. Advances in machine learning and natural language processing have significantly improved the ability of computers to understand human speech. At the same time, the widespread availability of smartphones and smart home devices has created an environment in which voice-based interaction is both practical and convenient. As a result, voice assistants are now used by millions of people around the world in their daily lives.

This research paper examines the role of artificial intelligence and voice assistants in daily life by exploring the technological foundations of these systems, their practical applications, and the broader social implications associated with their use. Understanding these aspects is essential for evaluating the impact of AI-driven voice technology on contemporary society.

Concept and Development of AI Voice Assistants

The development of voice assistants is closely linked to the broader evolution of artificial intelligence and speech technology. Early attempts to create voice-controlled systems date back several decades, but these systems were limited in their ability to recognize natural speech patterns. Early speech recognition programs required users to speak slowly and clearly, and they could only process a limited vocabulary. However, advances in computational power and the development of machine learning algorithms have dramatically improved the performance of speech recognition systems.

Modern voice assistants rely on a combination of technologies that enable them to process spoken language effectively. Speech recognition systems convert spoken words into digital text, while natural language processing techniques analyze the meaning and intent behind those words. Machine learning algorithms then use this information to generate appropriate responses or perform requested actions. Text-to-speech technology allows the system to respond to the user by producing natural-sounding spoken language.

These technological components work together to create interactive systems capable of engaging in conversational exchanges with users. The ability to interpret context and learn from user behavior allows voice assistants to provide increasingly personalized services over time. As these technologies continue to evolve, voice assistants are becoming more sophisticated and capable of handling complex interactions.

Applications of Voice Assistants in Daily Life

The widespread integration of voice assistants into digital devices has resulted in a broad range of applications that influence everyday activities. One of the most common uses of voice assistants is information retrieval. Users frequently rely on voice commands to obtain quick answers to questions, search for news updates, check weather forecasts, or obtain directions. The convenience of speaking a request rather than typing it makes voice assistants particularly useful in situations where manual interaction with a device is inconvenient or impractical.

Voice assistants also play a significant role in personal organization and time management. Many individuals use voice commands to set reminders, schedule appointments, create shopping lists, or manage daily tasks. These functions help users organize their routines more effectively and reduce the cognitive effort required to remember multiple responsibilities.

Another important application of voice assistants is in smart home automation. Voice-controlled devices allow users to manage household functions such as lighting, temperature control, entertainment systems, and security features. Through simple voice commands,

individuals can adjust environmental settings within their homes, creating a more comfortable and efficient living environment. This capability is particularly beneficial for individuals with mobility limitations or physical disabilities.

Voice assistants have also become increasingly relevant in communication and entertainment. Users can send messages, make phone calls, play music, or access digital media through voice commands. In addition, many voice assistants provide recommendations for music, movies, and other forms of entertainment based on user preferences. These features demonstrate how voice-based AI systems can enhance everyday leisure activities.

In recent years, voice assistants have also begun to play a role in education and productivity. Students may use voice assistants to search for academic information, obtain definitions, or listen to explanations of complex topics. Professionals may use voice commands to manage emails, create notes, or conduct quick searches during work tasks. These applications illustrate the versatility of voice assistants across various aspects of daily life.

Benefits of Voice Assistants in Everyday Life

The increasing adoption of voice assistants can largely be attributed to the numerous benefits they offer to users. One of the most significant advantages is convenience. Voice assistants allow individuals to perform tasks quickly without the need for physical interaction with a device. This hands-free capability is particularly useful when users are engaged in other activities, such as driving, cooking, or exercising.

Another important benefit is accessibility. Voice assistants make digital technology more accessible to individuals who may have difficulty using traditional interfaces. For example, elderly users or individuals with visual impairments may find voice interaction easier than navigating touchscreens or keyboards. By enabling natural communication with digital systems, voice assistants help bridge the gap between technology and users with diverse needs.

Voice assistants also contribute to increased efficiency in daily routines. By automating repetitive tasks such as setting alarms, checking schedules, or controlling home devices, these systems help users save time and effort. In addition, voice assistants can integrate with other digital services, creating interconnected systems that streamline everyday activities.

Furthermore, the personalized nature of AI-driven systems allows voice assistants to adapt to individual user preferences. Over time, these systems learn from user interactions and provide tailored recommendations or reminders. This ability to deliver personalized services enhances user satisfaction and makes technology more responsive to individual needs.

Challenges and Ethical Concerns

Despite their many advantages, the widespread use of voice assistants also raises several important challenges and ethical concerns. One of the most prominent issues is privacy. Voice assistants often rely on continuous listening features to detect activation commands, which means that audio data from users' environments may be recorded or processed by the system. This raises concerns about the potential misuse of personal information and the security of stored voice data.

Another challenge relates to the accuracy of speech recognition systems. Although modern AI technologies have improved significantly, voice assistants may still struggle to interpret certain accents, dialects, or speech patterns. Misinterpretation of commands can lead to incorrect responses or unintended actions, which may frustrate users and limit the effectiveness of these systems.

Technological dependence is another concern associated with the increasing use of voice assistants. As individuals rely more heavily on automated systems for everyday tasks, there is a

possibility that certain cognitive skills, such as memory or problem-solving abilities, may gradually decline. Overdependence on AI systems may also reduce direct human interaction in certain contexts.

Ethical considerations also arise in relation to data ownership and transparency. Many users are unaware of how their voice data is collected, stored, or used by technology companies. The lack of transparency regarding data management practices can create mistrust among users and raise questions about corporate accountability.

Future Prospects of AI Voice Assistants

The future development of voice assistants is expected to bring even more advanced capabilities that will further integrate AI into daily life. Researchers are working on improving the contextual understanding of voice assistants so that they can engage in more natural and meaningful conversations. Future systems may be capable of understanding emotional cues in speech and adjusting responses accordingly, creating more human-like interactions.

Another potential advancement involves the integration of voice assistants with emerging technologies such as the Internet of Things, augmented reality, and wearable devices. This integration could create highly interconnected digital ecosystems in which voice commands serve as the primary interface for interacting with multiple devices and services.

In addition, improvements in multilingual speech processing may allow voice assistants to communicate seamlessly in multiple languages. Such capabilities would expand the accessibility of voice technology to users from diverse linguistic backgrounds.

However, as voice assistants become more sophisticated, it will be increasingly important to establish clear ethical and regulatory frameworks that guide their development and use. Ensuring transparency, protecting user data, and promoting responsible innovation will be essential for maintaining public trust in AI technologies.

Conclusion

Artificial intelligence has fundamentally transformed the way individuals interact with digital technologies, and voice assistants represent one of the most visible manifestations of this transformation. By enabling natural language communication between humans and machines, voice assistants have made technology more accessible, convenient, and efficient in everyday life. From managing personal schedules and controlling smart homes to providing information and entertainment, these systems have become deeply integrated into daily routines.

At the same time, the increasing reliance on AI voice assistants raises important questions regarding privacy, data security, and the long-term social impact of automated technologies. Addressing these concerns will require careful collaboration among technology developers, policymakers, and researchers.

Ultimately, voice assistants should be viewed as tools that enhance human capabilities rather than replace them. When developed and implemented responsibly, AI-driven voice technologies have the potential to significantly improve the quality of daily life and contribute to the creation of a more connected and technologically empowered society.

Keywords

Artificial Intelligence
Voice Assistants
Speech Recognition
Natural Language Processing
Smart Speakers
Human–Computer Interaction

Machine Learning

Bibliography / References (APA Style)

- Baker, R., & Smith, L. (2019). *Educ-AI-tion rebooted? Exploring the future of artificial intelligence in schools and colleges*. Nesta.
- Dale, R. (2016). The return of the chatbots. *Natural Language Engineering*, 22(5), 811–817.
- Hoy, M. B. (2018). Alexa, Siri, Cortana, and more: An introduction to voice assistants. *Medical Reference Services Quarterly*, 37(1), 81–88.
- Kaplan, A., & Haenlein, M. (2019). Siri, Siri, in my hand: Who's the fairest in the land? On the interpretations, illustrations, and implications of artificial intelligence. *Business Horizons*, 62(1), 15–25.
- Këpuska, V., & Bohouta, G. (2018). Next-generation of virtual personal assistants. *Proceedings of the IEEE International Conference on Computing and Information Technology*, 99–103.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 194-203
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव

जयदेव कौशिक
शोधार्थी,
डॉ. मंजू कुमारी
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग,
श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय, हनुमानगढ़

1. सारांश

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का विश्लेषण करना है। कक्षा वातावरण शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। कक्षा का भौतिक वातावरण, शिक्षक-विद्यार्थी संबंध, सहपाठी सहयोग तथा शिक्षण विधियाँ विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं।

इस अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। अध्ययन के लिए माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों का चयन किया गया तथा कक्षा वातावरण प्रश्नावली और परीक्षा परिणामों के माध्यम से डेटा संग्रह किया गया। प्राप्त आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण कर यह पाया गया कि सकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि जिन कक्षाओं में शिक्षक सहयोगात्मक व्यवहार अपनाते हैं, सक्रिय शिक्षण विधियों का उपयोग करते हैं तथा विद्यार्थियों को सहभागिता के अवसर प्रदान करते हैं, वहाँ विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अधिक होती है। इसलिए विद्यालयों में सकारात्मक और प्रेरणादायक कक्षा वातावरण का निर्माण करना आवश्यक है।

मुख्य शब्द (Keywords)
कक्षा वातावरण, शैक्षिक उपलब्धि, माध्यमिक शिक्षा, शिक्षक-विद्यार्थी संबंध, शिक्षण वातावरण

2. प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी समाज और राष्ट्र के समग्र विकास का मूल आधार होती है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति के बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक तथा भावनात्मक गुणों का विकास होता है। यह केवल ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण, मूल्यों के विकास तथा सामाजिक समायोजन का महत्वपूर्ण साधन भी है। विद्यालय शिक्षा का वह प्रमुख केंद्र है जहाँ विद्यार्थियों को व्यवस्थित एवं योजनाबद्ध ढंग से ज्ञान, कौशल तथा व्यवहारिक दक्षताओं का विकास कराया जाता है।

विद्यालय में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की सफलता अनेक कारकों पर निर्भर करती है, जिनमें कक्षा वातावरण का विशेष महत्व होता है। कक्षा वातावरण से आशय उन समग्र परिस्थितियों से है जिनमें विद्यार्थी सीखने की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। इसमें कक्षा का भौतिक वातावरण, शिक्षक-विद्यार्थी संबंध, सहपाठियों के साथ सहयोग, अनुशासन, शिक्षण विधियाँ तथा शिक्षण-अधिगम संसाधन सम्मिलित होते हैं। कक्षा वातावरण विद्यार्थियों के व्यवहार, उनकी सीखने की रुचि तथा शैक्षिक उपलब्धि को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।

यदि कक्षा का वातावरण सकारात्मक, सहयोगात्मक तथा प्रेरणादायक हो तो विद्यार्थी अध्ययन के प्रति अधिक रुचि दिखाते हैं और उनकी सीखने की क्षमता में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि कक्षा का वातावरण नकारात्मक, तनावपूर्ण या असहयोगात्मक हो तो विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया प्रभावित होती है और उनकी शैक्षिक उपलब्धि में कमी आ सकती है। इसलिए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए कक्षा वातावरण का अनुकूल एवं प्रेरणादायक होना अत्यंत आवश्यक है।

माध्यमिक स्तर शिक्षा का एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। इस स्तर पर विद्यार्थियों का बौद्धिक, मानसिक तथा सामाजिक विकास तीव्र गति से होता है। साथ ही इसी स्तर पर विद्यार्थियों में तर्कशक्ति, विश्लेषण क्षमता तथा आत्मनिर्भरता का विकास भी होने लगता है। अतः इस अवस्था में यदि विद्यार्थियों को सकारात्मक एवं प्रोत्साहनपूर्ण कक्षा वातावरण प्राप्त हो तो उनकी शैक्षिक उपलब्धि में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है।

वर्तमान समय में शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने पर विशेष बल दिया जा रहा है। इसके लिए यह आवश्यक है कि विद्यालयों में ऐसा कक्षा वातावरण विकसित किया जाए जो विद्यार्थियों में जिज्ञासा, रचनात्मकता तथा सक्रिय सहभागिता को प्रोत्साहित करे। शिक्षक की भूमिका भी कक्षा वातावरण को सकारात्मक बनाने में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि शिक्षक ही वह व्यक्ति है जो विद्यार्थियों को प्रेरित करता है, उन्हें मार्गदर्शन प्रदान करता है तथा सीखने के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण करता है।

इसी संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करने का प्रयास करता है। इस अध्ययन के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि कक्षा वातावरण के विभिन्न घटक

विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

(i) अध्ययन की पृष्ठभूमि

शिक्षा के क्षेत्र में निरंतर परिवर्तन और विकास हो रहा है। आधुनिक समय में शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना नहीं है, बल्कि विद्यार्थियों के समग्र विकास को सुनिश्चित करना भी है। इसी कारण शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी और छात्र-केंद्रित बनाने पर विशेष बल दिया जा रहा है। इस संदर्भ में कक्षा वातावरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है, क्योंकि कक्षा ही वह स्थान है जहाँ विद्यार्थी प्रत्यक्ष रूप से शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में भाग लेते हैं।

कक्षा वातावरण से अभिप्राय उन परिस्थितियों से है जिनमें विद्यार्थी सीखने की प्रक्रिया को अनुभव करते हैं। इसमें कक्षा का भौतिक वातावरण, शिक्षक का व्यवहार, सहपाठियों के साथ संबंध, अनुशासन, शिक्षण विधियाँ तथा शिक्षण-अधिगम संसाधनों की उपलब्धता जैसे अनेक तत्व सम्मिलित होते हैं। यह सभी तत्व मिलकर कक्षा के समग्र वातावरण का निर्माण करते हैं। यदि कक्षा का वातावरण सकारात्मक, सहयोगात्मक तथा प्रेरणादायक हो तो विद्यार्थियों की सीखने की रुचि बढ़ती है और वे अधिक सक्रिय रूप से अध्ययन में भाग लेते हैं।

कई शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययनों में यह स्पष्ट किया है कि कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। सकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, सहभागिता तथा सीखने की प्रेरणा को बढ़ाता है। इसके विपरीत नकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को बाधित कर सकता है और उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है।

माध्यमिक स्तर शिक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इस स्तर पर विद्यार्थियों का बौद्धिक, सामाजिक तथा भावनात्मक विकास तेजी से होता है। साथ ही यह वह अवस्था होती है जब विद्यार्थी अपने भविष्य की शैक्षिक दिशा निर्धारित करने लगते हैं। इसलिए इस स्तर पर कक्षा वातावरण का प्रभाव विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा उनके व्यक्तित्व विकास दोनों पर पड़ता है।

वर्तमान समय में शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालयों में ऐसा कक्षा वातावरण विकसित किया जाए जो विद्यार्थियों को सक्रिय रूप से सीखने के लिए प्रेरित करे तथा उनकी रचनात्मकता और जिज्ञासा को प्रोत्साहित करे। शिक्षक की भूमिका भी इस संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि शिक्षक के व्यवहार और शिक्षण शैली का कक्षा वातावरण पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने का प्रयास करता है।

इस अध्ययन के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि कक्षा वातावरण के विभिन्न आयाम विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

(ii) शोध समस्या

वर्तमान समय में शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता सुधार पर विशेष बल दिया जा रहा है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के बौद्धिक, सामाजिक तथा भावनात्मक विकास को सुनिश्चित करना है। विद्यालय इस उद्देश्य की पूर्ति का प्रमुख माध्यम है, जहाँ शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया कक्षा में संचालित होती है। कक्षा वह स्थान है जहाँ शिक्षक और विद्यार्थी प्रत्यक्ष रूप से एक-दूसरे के संपर्क में आते हैं और ज्ञान का आदान-प्रदान होता है। इस प्रक्रिया की प्रभावशीलता काफी हद तक कक्षा वातावरण पर निर्भर करती है।

कक्षा वातावरण से आशय उन भौतिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों से है जिनमें शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया संचालित होती है। इसमें कक्षा की भौतिक सुविधाएँ, शिक्षक का व्यवहार, विद्यार्थियों के बीच सहयोग, अनुशासन तथा शिक्षण विधियाँ जैसे विभिन्न तत्व सम्मिलित होते हैं। यदि कक्षा का वातावरण सकारात्मक, सहयोगात्मक तथा प्रेरणादायक हो तो विद्यार्थी अधिक सक्रियता से अध्ययन करते हैं और उनकी शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि होती है। इसके विपरीत यदि कक्षा का वातावरण तनावपूर्ण, असहयोगात्मक या अव्यवस्थित हो तो विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया प्रभावित हो सकती है।

माध्यमिक स्तर शिक्षा का एक महत्वपूर्ण चरण है, क्योंकि इसी स्तर पर विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उनके भविष्य की शैक्षिक दिशा भी निर्धारित होती है। इस स्तर पर विद्यार्थियों में तर्कशक्ति, विश्लेषण क्षमता तथा आत्मनिर्भरता का विकास होने लगता है। इसलिए इस अवस्था में कक्षा वातावरण की गुणवत्ता विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

हालाँकि विभिन्न शोधों में कक्षा वातावरण और शैक्षिक उपलब्धि के बीच संबंध का उल्लेख किया गया है, फिर भी विभिन्न क्षेत्रों और परिस्थितियों में इसके प्रभाव का अध्ययन करना आवश्यक है। विशेष रूप से माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के संदर्भ में यह जानना महत्वपूर्ण है कि कक्षा वातावरण के विभिन्न घटक उनकी शैक्षिक उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

इसी संदर्भ में प्रस्तुत अध्ययन की शोध समस्या को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है–

“**माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है?”**

(iii) साहित्य समीक्षा

किसी भी शोध कार्य को व्यवस्थित रूप से आगे बढ़ाने के लिए संबंधित साहित्य का अध्ययन अत्यंत आवश्यक होता है। साहित्य समीक्षा के माध्यम से शोधकर्ता को विषय से संबंधित पूर्व में किए गए अध्ययनों, उनके निष्कर्षों तथा

शोध की दिशा के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। इससे शोध समस्या की स्पष्टता बढ़ती है और अध्ययन की आवश्यकता भी प्रमाणित होती है।

कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के संबंध में विभिन्न शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं ने अनेक अध्ययन किए हैं। इन अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि कक्षा का वातावरण विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करता है।

फ्रेज़र (Fraser, 1998) ने कक्षा वातावरण पर अपने अध्ययन में पाया कि सकारात्मक और सहयोगात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि तथा उनकी सीखने की प्रेरणा को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उनके अध्ययन में यह भी स्पष्ट हुआ कि कक्षा में शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच सकारात्मक संबंध विद्यार्थियों की सक्रिय सहभागिता को बढ़ाते हैं।

वालबर्ग (Walberg, 1986) ने अपने अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला कि कक्षा का सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक वातावरण विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। उन्होंने बताया कि यदि कक्षा का वातावरण प्रेरणादायक और सहयोगात्मक हो तो विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सुधार होता है।

मूज़ (Moos, 1979) ने कक्षा वातावरण के विभिन्न आयामों का अध्ययन करते हुए बताया कि शिक्षक-विद्यार्थी संबंध, कक्षा अनुशासन तथा सहपाठियों के बीच सहयोग विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। उनके अनुसार कक्षा का सकारात्मक वातावरण विद्यार्थियों में आत्मविश्वास तथा सहभागिता की भावना को विकसित करता है।

अग्रवाल (Aggarwal, 2009) ने अपने अध्ययन में यह पाया कि शिक्षक का सकारात्मक व्यवहार तथा विद्यार्थियों के साथ सहयोगात्मक संबंध विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक होते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि शिक्षक की शिक्षण शैली कक्षा वातावरण को प्रभावित करती है।

कौल (Koul, 2005) के अनुसार प्रभावी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के लिए कक्षा का वातावरण प्रेरणादायक और सहभागितापूर्ण होना चाहिए। उन्होंने अपने अध्ययन में बताया कि जब विद्यार्थी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं तो उनकी सीखने की क्षमता और शैक्षिक उपलब्धि दोनों में वृद्धि होती है।

उपरोक्त अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। सकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों में अध्ययन के प्रति रुचि, आत्मविश्वास तथा सहभागिता की भावना को विकसित करता है, जिससे उनकी शैक्षिक उपलब्धि में सुधार होता है।

(iv) अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव

का अध्ययन करना है। इस अध्ययन के अंतर्गत निम्नलिखित उद्देश्यों को निर्धारित किया गया है–

- माध्यमिक स्तर के विद्यालयों में कक्षा वातावरण की प्रकृति का अध्ययन करना।
- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना।
- कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन करना।
- कक्षा के भौतिक वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव ज्ञात करना
- कक्षा वातावरण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए शैक्षिक सुझाव प्रस्तुत करना।

(v) परिकल्पना

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई हैं–

- माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य कोई महत्वपूर्ण संबंध नहीं है।
- सकारात्मक कक्षा वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि नकारात्मक कक्षा वातावरण वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक होती है।
- शिक्षक-विद्यार्थी संबंध का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।
- कक्षा के भौतिक वातावरण (जैसे प्रकाश, वायु, बैठने की व्यवस्था आदि) का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव पड़ता है।
- कक्षा में सहपाठियों के सहयोगात्मक वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- प्रभावी एवं सक्रिय शिक्षण विधियाँ विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक होती हैं।

(vi) अध्ययन का महत्व

प्रस्तुत अध्ययन का शिक्षा के क्षेत्र में विशेष महत्व है, क्योंकि यह कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास करता है। इस अध्ययन के माध्यम से यह समझने में सहायता मिलेगी कि कक्षा का वातावरण विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया तथा उनके शैक्षिक प्रदर्शन को किस प्रकार प्रभावित करता है।

इस अध्ययन का महत्व निम्नलिखित बिंदुओं में स्पष्ट किया जा सकता है–

- यह अध्ययन कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध को स्पष्ट करने में सहायक होगा।
- इस अध्ययन के परिणाम शिक्षकों को प्रभावी एवं सकारात्मक कक्षा वातावरण बनाने में मार्गदर्शन प्रदान करेंगे।

- यह अध्ययन विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने में सहायक सिद्ध होगा।
- अध्ययन से यह जानकारी प्राप्त होगी कि कक्षा का भौतिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण विद्यार्थियों की उपलब्धि को किस प्रकार प्रभावित करता है।
- यह अध्ययन शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए उपयोगी सुझाव प्रदान करेगा।
- विद्यालय प्रशासन को कक्षा वातावरण को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश प्राप्त होंगे।
- यह अध्ययन भविष्य में इस विषय पर किए जाने वाले अन्य शोध कार्यों के लिए आधार प्रदान करेगा।
- इससे शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी एवं विद्यार्थी-केंद्रित बनाने में सहायता मिलेगी।

3. अनुसंधान विधि

प्रस्तुत अध्ययन में माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करने के लिए वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अनुसंधान पद्धति का प्रयोग किया गया है। इस अध्याय में शोध के प्रकार, शोध डिजाइन, जनसंख्या, नमूना, शोध उपकरण तथा डेटा संग्रहण की प्रक्रिया का वर्णन किया गया है।

1. शोध का प्रकार (Type of Research)

प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक शोध (Descriptive Research) पर आधारित है। वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य किसी समस्या या स्थिति का व्यवस्थित एवं तथ्यात्मक वर्णन करना होता है। इस अध्ययन में कक्षा वातावरण तथा विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध का अध्ययन किया गया है।

2. शोध डिजाइन (Research Design)

इस अध्ययन में सर्वेक्षण शोध डिजाइन (Survey Research Design) का उपयोग किया गया है। सर्वेक्षण पद्धति के माध्यम से चयनित विद्यालयों के विद्यार्थियों से कक्षा वातावरण से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि का विश्लेषण किया गया।

3. जनसंख्या (Population)

प्रस्तुत अध्ययन की जनसंख्या माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत सभी विद्यार्थियों को माना गया है। अध्ययन के लिए चयनित क्षेत्र के विद्यालयों के विद्यार्थियों को जनसंख्या के रूप में लिया गया।

4. नमूना (Sample)

इस अध्ययन के लिए जनसंख्या में से कुछ विद्यालयों तथा विद्यार्थियों का चयन किया गया। नमूना चयन के लिए यादृच्छिक नमूना पद्धति (Random Sampling

Method) का उपयोग किया गया। अध्ययन के लिए लगभग 150 विद्यार्थियों को नमूने के रूप में चयनित किया गया।

5. शोध उपकरण (Research Tools)

अध्ययन के लिए निम्नलिखित उपकरणों का उपयोग किया गया–

(i) कक्षा वातावरण प्रश्नावली

कक्षा वातावरण से संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया। इस प्रश्नावली के माध्यम से कक्षा के भौतिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक वातावरण से संबंधित जानकारी प्राप्त की गई।

(ii) शैक्षिक उपलब्धि

विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का निर्धारण उनके परीक्षा परिणामों एवं प्राप्त अंकों के आधार पर किया गया।

6. डेटा संग्रहण प्रक्रिया (Data Collection Procedure)

डेटा संग्रहण के लिए चयनित विद्यालयों में जाकर विद्यार्थियों को प्रश्नावली प्रदान की गई। विद्यार्थियों से प्राप्त उत्तरों को संकलित किया गया तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित जानकारी विद्यालय के अभिलेखों से प्राप्त की गई। प्राप्त आँकड़ों को व्यवस्थित रूप से संकलित कर आगे विश्लेषण के लिए तैयार किया गया।

4. डेटा विश्लेषण एवं व्याख्या

प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप एकत्रित किए गए आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या की गई है। कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य संबंध को समझने के लिए प्राप्त आँकड़ों को सारणियों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। आँकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रतिशत, औसत तथा सहसंबंध जैसी सांख्यिकीय तकनीकों का उपयोग किया गया है।

सारणी 1: विद्यार्थियों के कक्षा वातावरण के स्तर का वितरण

क्रम संख्या	कक्षा वातावरण का स्तर	विद्यार्थियों की संख्या	प्रतिशत
1	उच्च कक्षा वातावरण	60	40%
2	मध्यम कक्षा वातावरण	55	36.67%
3	निम्न कक्षा वातावरण	35	23.33%

	कुल	150	100%

व्याख्या:

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि 40% विद्यार्थियों ने उच्च स्तर के कक्षा वातावरण का अनुभव किया, जबकि 36.67% विद्यार्थियों ने मध्यम स्तर का और 23.33% विद्यार्थियों ने निम्न स्तर के कक्षा वातावरण का अनुभव किया। इससे यह संकेत मिलता है कि अधिकांश विद्यार्थियों को कक्षा में अपेक्षाकृत सकारात्मक वातावरण प्राप्त हो रहा है।

सारणी 2 : कक्षा वातावरण और शैक्षिक उपलब्धि का औसत

क्रम	कक्षा वातावरण का स्तर	औसत अंक (Mean)
1	उच्च कक्षा वातावरण	72.5
2	मध्यम कक्षा वातावरण	65.5
3	निम्न कक्षा वातावरण	58.5

व्याख्या:

सारणी से स्पष्ट होता है कि जिन विद्यार्थियों को उच्च स्तर का कक्षा वातावरण प्राप्त हुआ है, उनकी शैक्षिक उपलब्धि का औसत अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है। इससे यह स्पष्ट होता है कि सकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक होता है।

सारणी 3 : कक्षा वातावरण और शैक्षिक उपलब्धि के बीच सहसंबंध

चर	सहसंबंध गुणांक (r)
कक्षा वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि	0.62

व्याख्या:

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि कक्षा वातावरण और विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के बीच सकारात्मक सहसंबंध पाया गया है। इसका अर्थ है कि बेहतर कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक होता है।

5. मुख्य निष्कर्ष

अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित प्रमुख निष्कर्ष प्राप्त हुए–

- सकारात्मक कक्षा वातावरण विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में सहायक होता है।
- शिक्षक-विद्यार्थी संबंध विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करता है।
- कक्षा का भौतिक वातावरण विद्यार्थियों की सीखने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है।
- सहपाठियों के सहयोगात्मक वातावरण से विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सुधार होता है।
- प्रभावी शिक्षण विधियाँ विद्यार्थियों की उपलब्धि को बेहतर बनाती हैं।

6. शैक्षिक सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों के आधार पर निम्नलिखित शैक्षिक सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

I. शिक्षकों को कक्षा में सकारात्मक एवं सहयोगात्मक वातावरण बनाने का प्रयास करना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों की सीखने की रुचि बढ़े।
II. कक्षा में शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच मधुर एवं सहयोगपूर्ण संबंध स्थापित किए जाने चाहिए, ताकि विद्यार्थी बिना झिझक अपनी समस्याएँ व्यक्त कर सकें।
III. शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाने के लिए शिक्षकों को आधुनिक एवं सक्रिय शिक्षण विधियों का उपयोग करना चाहिए।
IV. विद्यालयों में कक्षा का भौतिक वातावरण–जैसे प्रकाश, वायु, बैठने की व्यवस्था आदि–उचित होना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को अध्ययन में सुविधा हो।
V. विद्यार्थियों के बीच सहयोगात्मक एवं सहभागितापूर्ण गतिविधियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जिससे उनका आत्मविश्वास और सीखने की क्षमता बढ़े।
VI. विद्यालय प्रशासन को कक्षा वातावरण को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक संसाधन और सुविधाएँ उपलब्ध करानी चाहिए।

7. संदर्भ

1. शर्मा, आर. ए. (2022). शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी. मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
2. अग्रवाल, जे. सी. (2022). शैक्षिक मनोविज्ञान. नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
3. कोठारी, सी. आर., एवं गर्ग, जी. (2022). अनुसंधान पद्धति: विधियाँ एवं तकनीकें (संशोधित संस्करण). नई दिल्ली: न्यू एज इंटरनेशनल पब्लिशर्स।
4. सिंह, अरुण कुमार. (2022). शैक्षिक मनोविज्ञान. नई दिल्ली: भारती भवन प्रकाशन।
5. वर्मा, एस., एवं कुमार, आर. (2022). माध्यमिक स्तर पर कक्षा वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव. अंतरराष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान पत्रिका.

www.bohalshodhmanjusha.com Bohal Shodh Manjusha ISSN: 2395-7115
Impact Factor:7.523 December 2024 Page No. : 204-207
AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

इतिहास के पन्ने भूले आदिवासी जीवन: 'जो इतिहास में नहीं है' उपन्यास के संदर्भ में

हरिता कुमारी जे, शोध छात्रा
हिंदी विभाग, केरल विश्वविद्यालय

आदिवासी समाज के उन लोगों को कहा जाता है जो किसी देश या प्रान्त में बहुत पहले से ही निवास करते आए हैं। भारत की सामाजिक सांस्कृतिक संरचना में आदिवासियों ने न केवल अपना योगदान दिया अपितु मातृभूमि की रक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। रामायण और महाभारत जैसे पवित्र ग्रंथों में आदिवासियों की महत्त्व एवं सामर्थ्य को अंकित किया है। आदिवासी लोग प्राचीन काल से लेकर आज तक छल-कपट, उपेक्षा, शोषण, तिरस्कार और अपमान के शिकार होते रहते हैं। इन लोगों की दयनीय अवस्था एवं उनके सामाजिक व्यवस्थाएं संस्कृति आदि को साहित्यकारों ने अपने रचनाओं में स्थान दिया है। इसके फलस्वरूप साहित्य के क्षेत्र में आदिवासी विमर्श अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। आदिवासी साहित्यकारों में राकेश कुमार सिंह जी का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने रचनाओं में झारखण्ड के विभिन्न आदिवासी समाज को बखूबी से चित्रित किया है। आदिवासी समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं यथार्थ के विभिन्न चेहरों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास राकेश जी ने किया है। उनके रचनाओं की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है की वो अपने पत्रों के ज़रिये आदिवासी साज में व्याप्त शोषण, अंधविश्वास, विस्थापन, भ्रष्टाचार आदि को प्रस्तुत करता है साथ ही दूसरे पात्रों के ज़रिये उसका पर्दाफाश भी करता है।

स्वतंत्रता पूर्व अंग्रेजों द्वारा और स्वतंत्रता के बाद भारतीयों अर्थात पूँजीपति वर्ग द्वारा शोषित आदिवासी समाज एवं इसके विरुद्ध लड़ने वाले आदिवासी लोगों को चित्रित करने वाले राकेश जी के बहुत चर्चित इतिहास परख उपन्यास है 'जो इतिहास में नहीं है'। अपने समाज एवं अपने मातृभूमि से अंग्रेजों को निकालने केलिए आदिवासी समाज द्वारा किया गया 'हूल' यानी युद्ध है इस उपन्यास का मुख्य विषय। जिस प्रकार भारत के अन्य स्वातंत्र्य सेनानियों ने अपने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष एवं प्रतिरोध किया है उसी प्रकार आदिवासी लोगों ने भी किया है, लेकिन उनके बारे में कोई भी इतिहास में उल्लेख नहीं मिलता है। इतिहास द्वारा बहिष्कृत एवं समाज द्वारा

तिरस्कृत लोगों के जीवन-यथार्थ को राकेश जी ने अपने उपन्यास 'जो इतिहास में नहीं है' के ज़रिये पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

पूँजीपति लोग या सभ्य कहने वाले लोग किस प्रकार आदिवासी लोगों का फायदा उठाते है इसका उदाहरण प्रस्तुत उपन्यास में है। उपन्यास की एक पात्र है 'नंगला', वो अपने ज़रुरत के लिए महाजन के पास अपना ज़मीन गिरवी रखकर कुछ पैसा उधार लेता है। नंगला को पूरा विशवास था की वो इस पैसे सूद के साथ महाजन को वापस दे पाऊँगा, क्यों कि नंगला का जो ज़मीन था उसमें बहुत अधिक अनाज उग रहा था। उस अनाज के बिक्री से प्राप्त होने वाले धन से महाजन का कर्ज ब्याज सहित चुकाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। लेकिन महाजन नंगला के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करके दो साल तक उनसे कर्जा नहीं लेता है। यह इसलिए कि कुछ रुपयों का उसका कर्ज सूद के साथ बहुत बडा बन जाए। अगर ऐसा हुआ तो महाजन पैसे के बदले उसका ज़मीन अपना सकता है। एक दिन महाजन अचानक पहूँचकर सारा कर्ज चुकाने को कहता है। नंगला ने कर्ज न चुकाने का अपना मजबूरी महाजन को बताता देता है। मौके का फायदा उठाकर महाजन उससे अपना खेत छोड देने के लिए कहता है। "इतनी मकई से तो मेरा सूद भी पूरा नहीं होगा। खेत छोड़ दे तो कर्च चुक भी जाए। तु खेत छोड ... मकई हम तुड़वा लेंगे"[1]। प्रस्तुत प्रसंग से यह पता चलता है की भोले-भाले, अशिक्षित आदिवासी लोगों को अन्य लोगों ने किस प्रकार शोषण करते हैं। इस प्रकार के अनेक घटनाएँ लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित किया है।

उपन्यास में आदिवासियों की बंधुआ मजदूरी और उनके शोषण की गंभीर समस्या को भी दिखाया गया है। कई संथाल आदिवासी जमींदार (गोमके) करने के लिए मजबूर हैं (बेगारी-बैठ) के यहाँ बिना किसी वेतन के जबरन काम। यहाँ कर्ज का ऐसा चक्र था कि यदि कोई आदिवासी एक बार थोड़ा सा उधार ले लेता, तो वह जीवनभर उससे मुक्त नहीं हो पाता। यह गुलामी पीढ़ीपीढ़ी चलती रहती थी-दर-। अंग्रेजों की ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में आते ही आदिवासियों की पारंपरिक और स्वतंत्र खेती व्यवस्था को तहस नहस कर दिया और उनकी-'खूंटकट्टी' (सामूहिक खेती (तथा 'झूम खेती' पर पूरी तरह रोक लगा दी। साल 1793 के स्थायी बंदोबस्त कानून के जरिए कंपनी सरकार ने जंगल के साथ आदिवासियों का सदियों पुराना रिश्ता हमेशा के लिए बदल दिया। अब वे न तो जंगल की जमीन और वहां के उत्पादों का इस्तेमाल कर सकता है और न ही गाँव की सामूहिक भूमि पर उनका कोई अधिकार रह गया था। वास्तव में अंग्रेजों की यह नई व्यवस्था पूरी तरह से पैसे के निवेश, धन बटोरने और उत्पादन के साधनों पर निजी मालिकाना हक जताने वाली एक औपनिवेशिक पूंजीवादी व्यवस्था थी, जो अपने व्यापारिक और आर्थिक हितों को मजबूत करने के लिए बनाये थे । आदिवासियों के पारंपरिक सामाजिक ढांचे और उनकी आत्मनिर्भर ग्रामीण व्यवस्था को पूरी तरह से बदल दिया था। भूराजस्व- की समय पर और कड़ाई से वसूली करने के लिए कंपनी सरकार ने जंगलों में बिचौलियों,

सूदखोरों, बाबुओं और पुलिस बंदूक का एक नया दमनकारी प्रशासनिक-तंत्र खड़ा कर दिया था। इसी औपनिवेशिक व्यवस्था की उपज बाघामुण्डी का राजा गोमके राजेश्वर दयाल सिंह सहदेव था, जो अंग्रेजों के लिए बिचौलिए का काम करता था। उसके इशारे पर लगान वसूलने वाला उसका गुमश्त था भैरव भगत, जो खुद एक आदिवासी होते हुए भी अंग्रेजी सत्ता की ताकत के नशे में चूर होकर अपने ही लोगों पर अत्याचार करता था। पूरी तरह से नया यह व्यवस्था आदिवासियों के लिए बिल्कुल अनजानी और समझ से परे थी। इस व्यवस्ता उनके भीतर गहरा असंतोष और गुस्सा जगा दिया। वे यह समझ ही नहीं पा रहे थे कि आखिर किस अधिकार से उनसे यह पैसा वसूला जा रहा है। लेखक इस स्थिति पर विचार करते हुए लिखते हैं कि आदिवासियों ने अपनी बहादुरी से घने जंगलों को साफ किया था, जंगली जानवरों, प्राकृतिक आपदाओं और बीमारियों का सामना करके खेतों को तैयार किया था, जबकि गोरे अंग्रेजों की कंपनी सरकार ने उन्हें न तो जमीन दी थी और न हलबैल दिए थे - और न ही कभी बीज दिए थे। तो फिर वे किस हक से आदिवासियों की मेहनत की कमाई पर हक जमा रहे थे। अंततः स्थिति इतनी बदतर हो गई कि आदिवासी हमेशा भारी कर्ज के नीचे दबे रहने लगे थे। उनका पैदा किया हुआ सारा अनाज और धन लगान के रूप में छीन लिया जाता था। उनके पास सिर्फ और सिर्फ पेट पालने के लिए मजदूरी करने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचता था। अंग्रेजों के इस व्यवहार से यह पता चलता है कि उनका एकमात्र उद्देश्य आदिवासियों के असीमित शोषण करके अपने लूट के साम्राज्य को बढ़ाना और मुनाफा कमाना। उनके इस लक्ष्य को स्थानीय पुलिस वालों एवं महाजन के सहारे से करते थे।

ज़मींदार और पुलिस वालों ने मिलकर आदिवासियों का शोषण करता है। इन लोगों ने अपने काम एवं फायदा के लिए आदिवासी लोगों का उपयोग करता है। आदिवासी औरतों की शारीरिक शोषण भी करती है। अगर कोई इनके विरुद्ध खडा हुआ तो उन्हें झूठा आरोप लगाकर दण्डित करवा देती है। भ्रष्ट पुलिस का काम महाजनों व ज़मींदारों के इशारों पर आदिवासी लोगों को तंग करना है। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने पुलीस द्वारा आदिवासी लोगों पर किए जाने वाले शोषण का खुला चित्रण किया है। उपन्यास के पात्र दरोगा महेश ने आदिवासी नायक गोके और उनके मित्र को गिरफ्तार कर लेता है। यह इसलिए कि गोके और उनके मित्र हमेशा वहाँ के ज़मीनदार के विरूद्ध खडा होता है। इसलिए ज़मीनदार की सहायता के लिए दरोगा महेश ने जंगल की ज़मीन पर घर बनाने की इन्ज़ाम लगाकर गोके को गिरफ्तार करता है। "गुरमेंट- दरोगा से बिना पूछे घर छावा लिया तो पाँच सन्थाल भाई के डांड में पुलुस ने रस्सा पहिरा दिया"[2]। उनके समाज में कोई महाजन के विरुद्ध खडा हुआ तो पुलीसवालों ने तो सतर्क हो जाते और आदिवासियों को गिरफ्तार कर लिया जाता है, और उनको थाने में मार-मार कर उसे अधमरा कर दिया जाता है। लेखक कहते है "पशु की भांति हारिल मुर्मू के गर्दन में रस्सी डाले सिपाही उसे रगड़ते हुए थाना तक ले गये थे। हारिल घिघियाता रहा। अपने निरपराध होने की दुहाई देता

रहा पर उसकी हर विनती के बदले में पीठ, कंधे, नितंब और पिंडलियों पर पड़ती रही थी पुलिस की लाठी``[3]। पुलिस द्वारा आदिवासियों पर किए जानेवाले शारीरिक शोषण एवं क्रूरता को चित्रित करते हुए लेखक लिखते है " रात भर लातेहार थाना में हारिल मुर्मू की दुर्गति होती रही थी। सूअर की भाँती अंग-अंग में लाठी कोंचते सिपाही ... गालियों की बौछार... लाल-पीला होता दरोगा ... दांत पीसते सिपाही ... लात ...जूते ... लाठी! गीली मिट्टी की भाँती हो जाता हारिल मुर्मू"[4]।पुलीस द्वारा किए जानेवाले अत्याचार एवं शोषण के विविध रूप लेखक ने प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित किया है।

प्रस्तुत उपन्यास में आदिवासी समाज की कुप्रथाओं और कमियों को भी उजागर किया है। उदाहरण के लिए, समाज में फैला डायन-बिसाही जैसा अंधविश्वास, जिसे उपन्यास में 'हंसुली माई' के प्रसंग के माध्यम से दिखाई गयी है। यह अंधविश्वास आज भी एक कड़वी और भयानक सच्चाई है। इसी अंधविश्वास की आड़ में आज झारखंड राज्य में कई आदिवासी महिलाओं का शारीरिक और मानसिक शोषण व उत्पीड़न किया जाता है। इससे यह साफ होता है कि आदिवासी समाज में महिलाओं को कहने को तो आजादी मिली हुई है, लेकिन असलियत में उनकी स्थिति आज भी दूसरे दर्जे की है।

उपन्यास में इस बात को एक प्रसंग के जरिए रेखांकित किया गया है, जहाँ हारिल मुरमू सोचता है कि लाली का रोना बेकार था। शंख उरांव जैसे पुरुष, जो अपने अहंकार और पुरुषवादी मानसिकता के कारण खुद को अपनी पत्नी से श्रेष्ठ समझते हैं, उनके लिए आंसू बहाना व्यर्थ है। शंख रुंडा जैसा व्यक्ति तो अपनी पत्नी को दूसरे के साथ भेजने तक को तैयार था। वह यह नहीं जानता था कि औरत सिर्फ लाली जैसी सहने वाली नहीं होती, बल्कि वह कइली दई, सिनगी दई, चम्पू दई, फूलो और झानो जैसी साहसी और लड़ाकू भी हो सकती है। इस प्रसंग के माध्यम से लेखक ने जहाँ एक तरफ महिलाओं के शोषण को दिखाया है, वहीं दूसरी तरफ उनके साथ हो रहे अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाने और संघर्ष करने वाली स्त्री को भी दर्शाया है। सच तो यह है कि आदिवासी महिलाएं भी दलित महिलाओं की तरह तिहरे शोषण (नस्ल, वर्ग और लिंग) की शिकार होती आ रही हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. जो इतिहास में नहीं है - पृष्ट ६२
2. जो इतिहास में नहीं है - पृष्ट १००
3. जो इतिहास में नहीं है - पृष्ट ४१४
4. जो इतिहास में नहीं है - पृष्ट ४१४ & ४१५

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वेलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor : 7.523

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
[illegible]

ISSN : 2321-8037
Impact Factor : 6.632

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 5.843

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम [illegible] डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने [illegible] प्रिन्टर्स,
भिवानी से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाउसिंग बोर्ड भिवानी-127021 (हरि.) से वितरित की।

ISSN 2395-7115